आश्चर्य-घटना

अर्थात्

श्रीरवीन्द्रनाथ ठाकुर-लिखित
"नौका डूबी" का हिन्दी-अनुवाद

सामाजिक उपन्यास

अनुवादक
श्रीजनार्दन झा

प्रकाशक
इंडियन प्रेस, लिमिटेड, प्रयाग।

१९२१

[मूल्य २)

आश्चर्य-घटना

पहला परिच्छेद

रमेश जो इस दफ़े क़ानून के इम्तहान में पास होगा, इसमें किसी को कुछ सन्देह न था। कलकत्ते के विश्वविद्यालय से वह बराबर स्वर्णपदक पाता आया है। स्कालर्शिप भी उसका कभी ख़ाली नहीं गया।

इम्तहान के बाद उसके घर जाने की बात थी। परन्तु अब भी उसका कोई लक्षण घर जाने का दिखाई नहीं देता। पहले घर जाता था तो वह दो चार दिन पहले ही से जाने की तैयारी करता था। इससे जान पड़ता है अभी वह घर न जायगा। शायद अब उसका जी घर जाने को नहीं चाहता। पिता ने उसे शीघ्र घर आने के लिए एक चिट्ठी लिखी है। उसके उत्तर में रमेश ने लिखा है—"परीक्षा का फल प्रकाशित होने पर घर आऊँगा।"

घनानन्द बाबू का लड़का योगेन्द्र रमेश का सहपाठी था। उसके घर के पास ही उसका घर था। घनानन्द बाबू ब्राह्म थे। उनकी बेटी नलिनी ने इस साल एफ़्. ए. की परीक्षा दी है। रमेश घनानन्द बाबू के यहाँ कार्यवश या यों भी कभी कभी जाता था। जब नलिनी स्नान करके बाल सुखाने के लिए छत

पर जाती थी और घूम घूम कर अपना सबक़ याद करती थी, तब रमेश भी अपने कोठे की छत के ऊपरवाले घर में पुस्तक लेकर बैठता था। पढ़ने के लिए वह जगह निःसन्देह एकान्त थी, किन्तु ज़रा सोचकर देखने से मालूम हो सकता है कि व्याघात भी वहाँ कुछ कम न था।

उन दोनों नये प्रेमिक-प्रेमिकाओं के विवाह के सम्बन्ध में अभी तक किसी ओर से कुछ बातचीत न हुई थी। घनानन्द बाबू की ओर से न होने का एक कारण था। वह यह कि एक लड़का बैरिष्टरी पास करने के लिए विलायत गया था। उनका विशेष लक्ष्य उसी पर था।

एक दिन घनानन्द बाबू की बैठक में चाय पीते समय आपस में खूब बहस चली। अक्षयकुमार यद्यपि कोई विशेष पास किये हुए न था, तथापि उस समय के परीक्षोत्तीर्ण विद्यार्थियों की अपेक्षा उसका आदर कम न था। इसलिए नलिनी के चाय-टेबुल के पास कभी कभी वह भी दिखाई देता था। उसने यह विवाद उठाया था कि पुरुष की बुद्धि तलवार सी होती है। कुण्ठित होने पर भी वह बहुत काम कर सकती है। किन्तु स्त्री की बुद्धि छुरी के सदृश होती है, उस पर कितनी ही धार क्यों न चढ़ाई जाय, उससे कोई बड़ा काम नहीं हो सकता।

नलिनी अक्षयकुमार की इस प्रगल्भता को, इस स्वार्थवाद को, उपेक्षाबुद्धि से चुपचाप सुन रही थी। स्त्री क्षुद्रबुद्धि होती है, इस बात को सिद्ध करने के लिए उसके ज्येष्ठ भाई योगेन्द्र ने भी अनेक युक्तियाँ निकालीं। रमेश इतनी देर तक उन दोनों की बात चुपचाप सुन रहा था। जब उससे न रहा गया तब वह उत्तेजित होकर स्त्री जाति की प्रशंसा करने लगा।

इस प्रकार रमेश जब स्त्री का गुण गाता हुआ उत्साह से और दिनों की अपेक्षा दो प्याले चाय अधिक पी गया तब वह शक्ति की उपासना में निमग्न हो विशेष सुख का अनुभव करने लगा। इसी समय एक नौकर ने उसके हाथ में एक लिफ़ाफ़ा दिया। उस पर उसके पिता के हाथ का लिखा उसका नाम था। चिट्ठी पढ़ते ही वह वाद-विवाद करना छोड़ बड़ी घबराहट के साथ उठ खड़ा हुआ। सभों ने पूछा—"क्या समाचार है?"

रमेश ने कहा—"घर से पिता आये हैं।" कमलिनी ने योगेन्द्र से कहा—"भाई! रमेश बाबू के पिता को यहीं क्यों नहीं बुला लेते? यहाँ चायपानी तैयार है।"

रमेश ने कहा—"नहीं, आज माफ़ करो। मैं जाता हूँ।"

रमेश को जाते देख अक्षयकुमार यह सोचकर मन ही मन ख़ुश हुआ कि शायद उसके पिता को यहाँ का रहना या इनके यहाँ का खाना-पीना मंज़ूर नहीं है।

रमेश के पिता व्रजमोहन बाबू ने रमेश से कहा—"कल सवेरे की गाड़ी से तुमको देश जाना होगा।"

रमेश ने सिर हिलाकर पूछा—"क्या कोई ज़रूरी काम है?"

व्रजमोहन—"इतना ज़रूरी तो नहीं है।"

तो इतनी ताकीद क्यों? यह सुनने के लिए रमेश पिता का मुँह देखने लगा। पर उन्होंने उसके मानसिक प्रश्न का कुछ उत्तर देना आवश्यक न समझा। इससे उसके मन का कुतूहल ज्यों का त्यों बना रहा।

व्रजमोहनबाबू साँझ को जब अपने कलकत्ते के बन्धुबान्धवों से मुलाकात करने गये तब रमेश उनको एक पत्र लिखने बैठा। "श्रीचरणकमलेषु" इतना लिखकर वह आगे कुछ न लिख सका। बड़ी देर तक सोच विचार कर उसने मन में कहा—"मैं नलिनी के विषय में जो दृढ़ संकल्प कर चुका हूँ, वह अब पिताजी से छिपाना किसी तरह उचित नहीं।" उसने इस भाव के अनेक पत्र अनेक प्रकार से लिखे। अन्त में उसने सभी को फाड़ डाला।

व्रजमोहन भोजन करके सो गये। रमेश कोठे की छत पर जाकर पड़ोसी के घर की ओर देखता हुआ निशाचर की भाँति लम्बी डग से टहलने लगा।

रात के नौ बजे अक्षयकुमार घनानन्द बाबू के कमरे से अपने घर को गया। साढ़े नौ बजे उनका फाटक बन्द हुआ। दस बजे घनानन्द बाबू के कमरे की रौशनी बुझ गई। ग्यारह बजते बजते उनके घर के सब लोग गाढ़ निद्रा में निमग्न हो गये। नलिनी न मालूम क्यों जाग रही थी।"

दूसरे दिन सवेरे की गाड़ी से रमेश को जाना ही पड़ा। व्रजमोहन बाबू की सावधानी से गाड़ी फ़ेल हो जाने का कोई सुअवसर उसके हाथ न आया।

दूसरा परिच्छेद

रमेश ने घर जाकर सुना कि उसके ब्याह की बातचीत ठीक हो गई है। लड़की का भी निबन्धन हो गया है और विवाह की तिथि भी नियत हो चुकी है। उसके पिता ब्रजमोहन बाबू के बाल्यसखा ईशानचन्द्र जब वकालत करते थे तब ब्रज-मोहन की हालत अच्छी न थी। ईशानचन्द्र की सहायता से ही उनकी दशा सुधरी और वे अपनी उन्नति करने में समर्थ हुए। उनके सहायक ईशानबाबू जब अकाल में ही कालकव-लित हो गये तब देखा गया, उनके पास कुछ जमा न था, बल्कि वे देनदार थे। उनकी विधवा स्त्री एक छोटी सी बालिका को लेकर दुःखसागर में निमग्न हुई। वह बालिका अब ब्याहने योग्य हुई है। ब्रजमोहन ने उसी के साथ रमेश के ब्याह की बातचीत ठीक की है। रमेश के शुभचिन्तकों में किसी किसी ने यह आपत्ति डाली कि लड़की देखने में वैसी ख़ूबसूरत नहीं है।

ब्रजमोहन ने यही उत्तर दिया कि हम उन बातों पर विशेष ध्यान नहीं देते। मनुष्य फूल तो हई नहीं कि सबसे पहले उसकी ख़ूबसूरती ही का विचार किया जाय। लड़की की मा जैसी सुशीला और सती है, यदि लड़की भी वैसी ही हो तो रमेश का भाग्य समझना चाहिए।

लोगों के मुँह से अपने ब्याह होने की बात सुनकर रमेश का मुँह पीला पड़ गया। वह बड़ी उदासी के साथ जिधर

तिधर घूमने लगा। उसके चित्त से शान्ति का साम्राज्य उठ गया। उसने इस बन्धन से छुटकारा पाने के अनेक उपाय सोचे, पर एक भी ऐसा युक्तियुक्त न निकला जिससे वह अपना काम निकाल सकता। आखिर उसने लज्जा को तिलाञ्जलि दे बड़े कष्ट से पिता के पास जाकर कहा—"यह ब्याह मेरे लिए असाध्य है। मैं दूसरी जगह प्रतिज्ञापाश में बद्ध हो चुका हूँ।"

ब्रजमोहन—"क्या कहा? क्या दूसरी जगह सब बातें तय हो चुकी हैं?"

रमेश—"सब बातें तो नहीं, पर—"

ब्रजमोहन—"पर क्या?"

रमेश—"जिस तरह से ब्याह की बातचीत होती है, उस तरह से तो अभी कुछ नहीं हुआ है।"

ब्रजमोहन—"क्यों नहीं हुआ है? तुम इतने दिन चुप बैठे थे, पर अब चुप रहने से काम न चलेगा। जो तुम्हारे मन में है वह स्पष्ट क्यों नहीं कहते?"

रमेश कुछ देर तक चुप रहा। पीछे उसने धीरे से कहा—"अब दूसरी कुमारिका के साथ ब्याह करना मेरे लिए अन्याय होगा।"

ब्रजमोहन—"यह विवाह न करोगे तो तुम्हारे लिए भारी अन्याय होगा। माँ बाप की बात न मानने से बढ़कर और क्या अन्याय हो सकता है?"

रमेश इसपर कुछ न बोला। वह सोचने लगा, 'अभी समय बहुत है, देखा जायगा।'

रमेश के ब्याह का जो दिन नियत हुआ था उसके अगले साल में विवाह का लगन न था। उसने सोचा, किसी तरह यह दिन टल जाय तो बस उसके ब्याह का समय एक साल आगे बढ़ जायगा।

आख़िर रमेश के मन की सोची हुई एक बात भी न हुई। उसके ब्याह का मुहूर्त किसी तरह न टला।

शादी के लिए जलपथ से जाने का विचार हुआ। श्यामपुर ब्रजमोहन के गाँव से दूर था। नदी पार कर जाने में कम से कम तीन दिन लगेंगे, यह सोचकर ब्रजमोहन ने दैवी घटना के लिए पूरा अवकाश छोड़कर एक सप्ताह पूर्व ही शुभ दिन में यात्रा की।

वायु अनुकूल था। इससे श्यामपुर पहुँचनेमें पूरे तीन दिन भी न लगे। ब्याह के अब भी चार दिन बाक़ी हैं।

ब्रजमोहन बाबू की इच्छा दो चार दिन पहले ही वहाँ आने की थी। श्यामपुर में उनकी भावी समधिन दुःख से समय बिता रही थी। बहुत दिनों से उनकी इच्छा थी कि वे उसे अपने यहाँ लाकर सुखपूर्वक रक्खें और इस उपकार से वे अपने स्वर्गीय मित्र ईशान बाबू के ऋण का परिशोध करें। कोई विशेष सम्बन्ध न रहने के कारण उनकी स्त्री से ब्रजमोहन को यह पूछने का साहस न होता था और न वे बिना सम्बन्ध के उसे अपने यहाँ ले जाना उचित समझते थे। अब उन्होंने इस विवाह के उपलक्ष में अपनी समधिन के समझा बुझा

कर अपने घर ले जाने के लिए राज़ी कर लिया। उन्होंने कहा—"समधिन को एक लड़की के सिवा और कोई नहीं है। वे अपनी बेटी के पास रहकर अपने मातृहीन जामाता को माता की तरह देखगी। मेरे घर में इनके रहने से मेरे घर की प्रतिष्ठा बढ़ेगी।" समधिन ने ब्रजमोहन बाबू के इस प्रस्ताव को सहर्ष स्वीकार किया। उसने कहा—"जो जिसके जी में आवे कहे, जहाँ मेरे बेटी-दामाद रहेंगे, मैं वहीं रहूँगी।"

ब्रजमोहन बाबू प्रसन्न होकर अपनी समधिन को ले जाने का सब सामान ठीक करने लगे। विवाह होने के बाद उन्होंने श्यामपुर से सबको अपने घर ले आने की बात पहले ही सोच ली थी, इसी से वे अपने साथ दो चार स्त्रियों को भी लाये थे।

विवाह के समय रमेश ने मनोयोगपूर्वक मन्त्र नहीं पढ़ा। परस्पर मुखावलोकन के समय उसने अपनी आँखें बन्द कर लीं। कोहवड़ में स्त्रियों की ठठोली को उसने सिर नीचा करके चुपचाप सुन लिया। रात को वह चारपाई पर मुँह फेरकर पड़ा रहा। खूब तड़के उठकर बाहर चला गया।

विवाह हो जाने के बाद यात्रा की धूम मची। स्त्रियाँ एक नाव पर, वृद्ध लोग एक नाव पर और वर तथा उसके साथी सब एक नाव पर सवार होकर रवाना हुए। रोशनचौकी-वालों का दल एक अलग नाव पर था। वह जब तब मधुर रागिनी में गा बजा कर लोगों के मन को आनन्दित करने लगा।

दिन भर बड़ी कड़ी धूप थी । गरमी के मारे लोगों का मन आकुल व्याकुल था । हवा हिलती तक न थी । आकाश में कहीं बादल का नाम न था । चारों ओर धुँधलापन छाया था । किनारे के दरख़्त पीले से दिखाई देते थे । डाँड़ खींचनेवाले मल्लाहों के बदन से पसीने चू रहे थे । सायंकाल का गाढ़ा अन्धकार होने के पहले ही नाविकों ने व्रजमोहन से कहा—"बाबू, हुक्म हो तो नाव को किनारे लेजाकर बाँध दें । कल सबेरे ही खोल देंगे । आगे बहुत दूर तक नाव ठहरने के लायक़ कोई जगह नहीं है ।"

व्रजमोहन बाबू रास्ते में विलम्ब करना नहीं चाहते थे । उन्होंने कहा—"अभी नाव बाँधने से काम न चलेगा । आज पहर रात तक चाँदनी रहेगी । रामपुर नावों को पहुँचा सको तो तुम लोग ज़रूर बख़्शीश पाओगे !"

इनाम के लोभ से मल्लाहों ने व्रजमोहन बाबू की बात मान ली । नावें बड़े वेग से आगे को बढ़ीं । एक ओर नदी की साधारण तरङ्ग और दूसरी ओर ऊँची कछार के सिवा कुछ नज़र नहीं आता था ।

रात पहर से ज़्यादा न बीती थी । सभी लोग आज रामपुर तक पहुँच जाने के आनन्द में डूबे थे ।

ऐसे समय में, जब कि आकाश में न मेघ था, न कहीं कुछ था, एकाएक भयानक शब्द सुन पड़ा । सभी लोग भौंचक से हो रहे । कुछ ही देर में एक ओर से हू, हू, करता हुआ, धूल और पत्तों को उड़ाता हुआ बड़े ज़ोर का तूफ़ान आया । "रोको,

रोको, सँभालो, सँभालो, हाय ! हाय ! यह क्या हुआ ?" नौकारोहियोंको इस तरह चिल्लाते ही चिल्लाते क्या हुआ, यह कहने की आवश्यकता नहीं। आँधी ने प्रबल वेग से आकर सब नावों को उलट दिया। नौकारोहियों में कौन कहाँ गया ? नावें क्या हुईं, कहाँ गईं, इसका कुछ पता नहीं।

तीसरा परिच्छेद

थोड़ी देर के बाद आकाश निर्मल हो गया। नदी के किनारे की बालुकामयी भूमि चटकीली चाँदनी में जड़ाऊवसन की भाँति चमचमाने लगी। नदी में न कहीं नाव है, न तरल-तरङ्ग है। रोगयन्त्रणा के बाद मृत्यु जैसे सदा के लिए शान्ति स्थापित कर देती है वैसे ही क्या जल क्या स्थल सर्वत्र शान्ति विराज रही थी।

चैतन्य पाकर रमेश ने देखा, वह नदी के किनारे की बालू पर पड़ा है। उसकी यह अवस्था कैसे हुई, यह सोचने में उसे कुछ समय लगा। कुछ देर के बाद उसे दुःस्वप्न की भाँति सारी घटना याद हो आई। उसके पिता और अन्यान्य आत्मीय जनों की क्या दशा हुई, यह जानने के लिए वह व्यग्र हो उठा। उसने चारों ओर बड़े ग़ौर के साथ देखा, पर कहीं कुछ चिह्न दिखाई न दिया। पीछे वह उन सबों की खोज में किनारे किनारे चला।

पद्मा नदी की दो शाखारूपी बाहों के बीच में यह छोटा सा सफ़ेद टापू नङ्गे बालक की भाँति ऊपर मुँह उठाये सोया हुआ सा जान पड़ता था। रमेश जब एक शाखा के किनारे से घूमकर दूसरी शाखा के तीर पर जा उपस्थित हुआ तब कुछ दूर पर उसे एक लाल कपड़े की तरह कोई चीज़ दिखाई दी। उसने दौड़कर नज़दीक से जाकर देखा, लाल कपड़ा पहने एक नववधू निश्चेष्ट हो पड़ी थी।

पानी में डूबे हुए लोगों की साँस किस उपाय से पलटाई जाती है, यह रमेश को मालूम था। रमेश का यत्न सफल हुआ। थोड़ी देर के बाद धीरे धीरे वधू की साँस चलने लगी और उसने आँखें खोलीं।

रमेश थककर कुछ देर चुपचाप बैठा रहा। उस बालिका से उसने कुछ न पूछा। वह इतना थक गया था कि कुछ बोलने की भी उसमें शक्ति न थी।

बालिका ने तब भी सम्पूर्ण ज्ञान-लाभ न किया था। एक बार उसने आँख खोलकर फिर बन्द करली। रमेश ने परीक्षा करके देखा, उसके श्वास-निश्वास में कोई रुकावट न थी। वह चन्द्रमा के प्रकाश में बड़ी देर तक उस बालिका के मुँह की ओर देखता रहा।

कौन कहता था, सुशीला देखने में अच्छी नहीं है। यद्यपि उसकी आँखें झिपी थीं, तो भी उसका मुख-मण्डल मुकुलित कमल की भाँति उतने बड़े शून्य स्थान में, उस विस्तीर्ण चन्द्रिका में, एकमात्र देखने की वस्तु थी।

रमेश पिछली सब बातें भूल कर सोचने लगा—"मैंने इसे विवाह मण्डप में उतने लोगों की भीड़ में न देखा सो अच्छा ही हुआ। इसे इस तरह स्वच्छन्द भाव से क्या वहाँ देखने पाता? विवाह के समय मन्त्र द्वारा जो सम्बन्ध जोड़ा जाता है, मैंने इसकी साँस पलटा कर उसकी अपेक्षा कहीं बढ़कर इसके साथ सम्बन्ध जोड़ लिया है। मन्त्र पढ़कर इसके साथ एक कृत्रिम सम्बन्ध जोड़ना होता। किन्तु दैव की अनुकूलता से जो सम्बन्ध यहाँ जुटा है वह अकृत्रिम है।

कुछ देर में वधू चैतन्यलाभ करके उठ बैठी। उसने ढीले कपड़े को सँभाल कर सिर पर घूँघट डाला। रमेश ने पूछा—"तुम्हारी नाव और तुम्हारे साथ की स्त्रियाँ कहाँ गईं, यह तुम्हें कुछ मालूम है?"

उसने सिर हिलाकर जताया—"नहीं।"

रमेश ने कहा—"तुम कुछ देर तक यहाँ अकेली बैठ सको तो मैं एक बार घूमकर उन सबों की खोज करूँ।"

बालिका ने इसका कुछ उत्तर न दिया। किन्तु उसका सारा शरीर संकुचित होकर बोल उठा—"इसे यहाँ अकेली छोड़ कर मत जाओ।"

रमेश उस वधू के मनका भाव समझ गया। उसने खड़ा होकर बड़े ध्यान से एकबार चारों ओर देखा, पर कहीं कुछ नज़र नहीं आया। तब वह खूब ज़ोर से चिल्लाकर आत्मीय जनों का नाम ले लेकर पुकारने लगा। पर कहीं किसी की कुछ टोह न मिली। आख़िर वह हताश होकर बैठ गया। देखा, अपने दोनों हाथों से मुँह बन्द कर रोने की आवाज़ को रोकना चाहती है। इससे उसका दम रह रह कर फूल उठता है और उसके मुँह से रोने की धीमी आवाज़ निकल पड़ती है। रमेश उसके रोने का कोई कारण न पूछ उसके पास बैठकर धीरे धीरे उसकी पीठ पर हाथ फेरने लगा। जब उसकी रुलाई रोके न रुकी तब वह फूट फूट कर रोने लगी। रमेश की आँखों से भी आँसू टपक पड़े।

वधू भरपेट रोकर जब चुप हुई, तब चन्द्रास्त होने के कारण सर्वत्र अन्धकार फैल गया था। अँधेरी रात में वह शून्यस्थान

अद्भुत स्वप्न के समान प्रतीत होने लगा। वह बालू का बड़ा मैदान श्मशान सा भयानक दीखने लगा। तारों के मन्द प्रकाश से नदी का चञ्चल जल अजगर साँप के चिकने काले चमड़े की तरह चमचमा रहा था।

रमेश ने बालिका के नवपल्लव से कोमल दोनों हाथ पकड़कर बड़े अनुराग से अपनी ओर खैंचा। बालिका डरी थी इसलिए उसने रमेश के पास जाने में कोई बाधा न की। वह आपही अपने दुःख से व्याकुल हो रही थी। उसने गहरे अन्धकार में रमेश की छाती से लगकर आराम पाया। वह समय उसके लज्जा करने का न था। वह उस निर्जन स्थान में भय से म्रियमाण हो रही थी। उसने रमेश की दोनों भुजाओं के भीतर आग्रह के साथ अपने आराम की जगह बना ली। जब पिछली रात का शुक्र तारा अस्त होने पर हुआ। पूर्व ओर आसमान में सफ़ेदी छा गई और धीरे धीरे लालिमा दिखाई देने लगी। उस समय रमेश निद्रा से व्याकुल होकर बालू पर सो गया। उसकी छाती के पास उसकी बाँह पर माथा दिये नववधू भी गाढ़ निद्रा में निमग्न हो गई। आख़िर सवेरे की धूप जब उन दोनों की आँखों पर पड़ी, तब दोनों हड़बड़ा कर उठ बैठे। कुछ देर तक दोनों आश्चर्य-भरी दृष्टि से चारों ओर देखने लगे। पश्चात् उन्हें एकाएक स्मरण हुआ कि वे घर पर नहीं हैं। वे नदी में डूबकर किसी तरह किनारे लगे हैं।

चौथा परिच्छेद

सवेरे सफ़ेद पाल के जहाज़ों से नदी भर गई। रमेश ने उन जहाज़ियों में से एक को बुलाकर एक छोटी सी नाव किराये पर ली और नाव डूबने की रिपोर्ट थाने में देकर डूबे हुए आत्मीय जनों की खोज में पुलिस को तैनात करके आप वधू को साथ ले घर को रवाना हुआ।

गाँव के समीपवर्ती तट पर नाव के पहुँचते ही रमेश ने सुना कि उसके पिता, सास और कई एक आत्मीय जनों की लाशें पुलिस ने पानी से निकाल बाहर की हैं। डूबे हुए व्यक्तियों में कई एक मल्लाहों को छोड़ और कोई बचा, ऐसी आशा किसी को न हुई।

घर पर रमेश की बूढ़ी दादी थी। वह बहू के साथ अकेले रमेश को घर आते देख उच्चस्वर से रोने लगी। महल्ले के जो लोग वर के साथ गये थे, उनके घर में कुहराम मच गया। सारी बस्ती में उदासी छा गई। वर-वधू के आते समय जो कुछ उत्सव मनाया जाता है वह एक भी न हुआ। न शंखध्वनि हुई, न सधवाओं ने मङ्गल-गीत गाया। न मङ्गल-वाद्य बजे न कोई स्त्री वधू को देखने ही आई।

रमेश ने पिता का श्राद्धादि कर्म होने के बाद शीघ्र ही पत्नी को साथ लेकर अन्यत्र जाने का विचार किया, किन्तु पैतृक धन-

सम्पत्ति की कोई व्यवस्था न करके शीघ्र जाना असम्भव था। परिवार की शोकाकुल स्त्रियाँ तीर्थ ले जाने के लिए उसे पहले ही दिक़ कर रही थीं। उन सबों को भी सन्तुष्ट रखना वह ज़रूरी समझता था।

इन सब कामों में उलझने पर भी रमेश अवकाश पाकर प्रणय की ओर से पराङ्मुख न था। पहले जैसे सुना गया था वधू वैसी नितान्त बालिका न थी। बल्कि महल्ले की स्त्रियाँ उसे ज़्यादा उम्र की बताकर हँसी उड़ाती थीं। तो भी उसके साथ किस तरह प्रेम हो सकता है, यह बी. ए. पास किये हुए रमेश नहीं जानते थे। उन्हें किसी पुस्तक में इस विषय का उपदेश न मिला था।

वह बहुत दिनों से इस विषय को असम्भव और असंगत जानता था। अनेक विषयों की अभिज्ञता के साथ प्रेम की शिक्षा कुछ न मिलने पर भी आश्चर्य यही कि उसका उच्च शिक्षा-प्राप्त मन भीतर ही भीतर एक अपूर्व रस से परिपूर्ण होकर इस नवीन बालिका की ओर झुक पड़ा था। वह उस बालिका में कल्पना के द्वारा अपनी भविष्यत् गृह-लक्ष्मी का ध्यान करने लगा। ध्यान के समय उसे वह नववधू, तरुणी, प्रेयसी और सन्तानों की प्रौढ़ माता के स्वरूप में दिखाई देने लगी। चितेरे अपने भावी चित्र को, कवि अपने भावी काव्य को, कल्पना के द्वारा जिस तरह सम्पूर्ण रूप से हृदय में संगठित करता है, रमेश ने भी उसी तरह इस बालिका को उपलक्ष मात्र करके भाविप्रणयिनी की मनोहर मूर्त्ति अपने हृदय में प्रतिष्ठित की।

पाँचवाँ परिच्छेद

इसी तरह प्रायः तीन मास बीत गये। इतने दिनों में धन-सम्पत्ति का सब प्रबन्ध ठीक हो गया। महल्ले की कितनी ही विधवायें तीर्थ सेवन के लिए आतुर हो उठीं। पड़ौस की कुछ दो एक बालिकायें नववधू के साथ सख्यभाव बढ़ाने के हेतु उसके घर जाने आने लगीं। रमेश के साथ बालिका के अनुराग का पूर्व-रूप कुछ कुछ दिखाई देने लगा।

अब साँझ को वे दोनों छत पर एकान्त में बैठकर परस्पर प्रेमसम्भाषण करने लगे। रमेश कभी पाँव की आहट बचा कर पीछे से आकर बालिका की आँखें मूँदता था, कभी उसका मस्तक अपनी छाती से लगाता था। जब रात कुछ अधिक न बीतने पर वह बिना खाये सो रहती थी तब रमेश उसे अनेक उपाय से जगाकर उसकी क्रोधसहित तिरस्कारसूचक बातें सुनता था।

एक दिन रमेश ने बालिका की वेणी हिला कर कहा—"सुशीला, आज तुम्हारा बाल बाँधना अच्छा नहीं हुआ।"

बालिका बोल उठी—"अच्छा यह तो कहिए, मुझे सुशीला कहकर क्यों पुकारते हैं?"

रमेश इस प्रश्न का मतलब कुछ न समझ कर चुप हो रहा और उसके मुँह की ओर देखने लगा।

वधू ने कहा—"मेरा नाम बदल देने से क्या मेरा दिन फिर जायगा? मैं तो जन्म ही की अभागिन हूँ। जब तक मैं न मरूँगी तब तक मेरा दौर्भाग्य दूर न होगा।"

रमेश का कलेजा धड़क उठा। उसका मुँह पीला हो गया। उसने क्या सोचा था और क्या हो गया। उसके मन में एक भारी सन्देह उत्पन्न हुआ। उसने कलेजा थाम कर पूछा—"तुम जन्म ही की अभागिन कैसे हुईं?"

वधू—"मेरे जन्म के पूर्व ही मेरे पिता मर गये। मुझे जन्म देकर मेरी माँ भी छः महीने के भीतर ही संसार से चल बसी। मैं मामा के घर में बड़े कष्ट से समय बिता रही थी। एक दिन मैंने अकस्मात् सुना कि आपने न मालूम कहाँ से आकर मुझे पसन्द किया और दो ही दिन के भीतर मेरा ब्याह आपके साथ हो गया। तिसके बाद जा विपद् घटी वह आप जानते ही हैं।"

रमेश सिर नीचा करके पेट के बल तकिये पर पड़ रहा। आकाश में जिस पूर्णचन्द्र का उदय हुआ था, वह काले बादल में छिप गया। रमेश को अब उससे कुछ पूछने का साहस न हुआ। जहाँ तक उसने नववधू के विषय में जाना उसे वह प्रलाप मात्र, या स्वप्न समझ कर उस पर विश्वास न किया। इतने में चैतन्य पाये मूर्छित व्यक्ति के दीर्घश्वास की भाँति ग्रीष्म काल की दक्खिनी हवा बहने लगी। कोयल पञ्चम राग अलापने लगी। चन्द्रमा का प्रकाश कुछ फीका सा दिखाई देने लगा। निकटवर्ती नदी के किनारे बँधे हुए जहाज़ की छत पर माँझियों ने गाना आरम्भ किया। उनका गान आकाश में गूजने लगा। बड़ी देर तक कुछ आहट न पाकर वधू बहुत धीरे धीरे रमेश की देह पर हाथ रखकर बोली—"क्या सो गये?"

रमेश—"नहीं।"

इसके अनन्तर उन दोनों में फिर कोई बात न हुई। तब वधू भी धीरे धीरे सो रही। कुछ देर के बाद रमेश उठ बैठा और उस निद्रित बालिका का मुँह देखने लगा। अहा ! विधाता ने इसके नसीब में क्या क्या दुःख भोगना लिखा है ? न मालूम इस सौन्दर्यराशि के भीतर कैसा भयङ्कर परिणाम छिपा है ?"

छठा परिच्छेद

बालिका रमेश की विवाहिता स्त्री नहीं है, यह रमेश को मालूम होगया। किन्तु वह किसकी स्त्री है, यह जानना सहज न था। एक दिन रमेश ने कपट करके पूछा—"विवाह के समय जब तुम ने पहले पहल मुझको देखा तब तुमने क्या समझा ? तुम्हारे मनमें कैसा भाव उत्पन्न हुआ ?"

बालिका—"मैंने तो आपको देखा नहीं। मैं नज़र नीची किये थी।"

रमेश—"क्या तुमने मेरा नाम भी न सुना ?

बालिका—"जिस दिन सुना कि ब्याह होगा, उसके दूसरे ही दिन ब्याह हो गया। इससे मैंने आपका नाम न सुना। नानी ने मुझे झटपट आपके साथ बिदा करके अपनी जान हलकी की।"

रमेश—"अच्छा, तुम लिखना पढ़ना जानती हो ? अपना नाम बना करके लिखो देखूँ तुम्हारा अक्षर कैसा होता है ?" रमेश ने उसे एक काग़ज़ और पेन्सिल दी।

बालिका ने कहा—"क्या आप समझते हैं, मैं अपना नाम न लिख सकूँगी ?" यह कहकर उसने बड़े बड़े अक्षरों में अपना नाम लिखा—"श्रीमती कमला देवी।"

रमेश—"अच्छा, मामा का नाम लिखो ?"

कमला ने लिखा—"श्रीयुत तारिणीचरण।"

पूछा—"कहिए, लिखने में कुछ भूल तो न हुई?"

रमेश—" नहीं! अच्छा, अपने गाँव का नाम लिखो"

उसने लिखा—"धर्मपुष्कर।"

इस प्रकार अनेक युक्ति से बड़ी सावधानी के साथ रमेश ने इस बालिका का जहाँ तक जीवन-वृत्तान्त जाना, उतने से उसका जी न भरा। उसे बहुत बातें जानने को बाक़ी रह गईं।

रमेश एकान्त में बैठ कर उसके सम्बन्ध की बात सोचने लगा। अधिकतर सम्भव है, इसका पति डूबकर मर गया है, यदि इसके ससुराल का पता लगे तो वहाँ इसे भेज देने से वे लोग इसको अपने यहाँ रक्खेंगे या नहीं इसमें सन्देह है। मामा के घर भेज देने में भी इसका कुशल नहीं है। इतने दिन वधू के रूप में दूसरे के घर रह कर यदि आज इसकी असली हालत ज़ाहिर हो तो समाज में इसकी क्या गति होगी! कौन इसे रहने को जगह देगा? कदाचित् इसका स्वामी जीता ही हो तो क्या अब वह इसको ग्रहण करेगा? यह लड़की अब जहाँ जायगी वहीं इसके उपर आफ़त का पहाड़ टूट पड़ेगा।

रमेश इस बालिका को पत्नी के सिवा दूसरे भाव से अपने पास रख नहीं सकता। कोई जगह भी ऐसी नहीं जहाँ इसे भेज कर वह निश्चिन्त हो। जब वह दूसरे की स्त्री है तब उसे अपने पास रख कर उसके साथ अपनी विवाहिता स्त्री का सा व्यवहार करना भी रमेश अयुक्त समझता था। उसने इस बालिका को अपनी पत्नी जानकर जो उसे अपने हृदय-पट पर गृहलक्ष्मी की मूर्ति में अङ्कित किया था वह बिलकुल व्यर्थ हुआ।"

रमेश अब अपने गाँव में अधिक दिन न रह सका। वहयह सोच कर कि कलकत्ते में लोगों की भीड़ में गुप्तरीति से रह कर कोई उपाय ढूढ़ निकालूँगा, कमला को साथ लेकर कलकत्ते आया। जहाँ वह पहले रहता था वहाँ से दूर एक नया मकान किराये पर ले लिया।

कमला को कलकत्ता देखने की बड़ी उत्कण्ठा थी। पहले दिन मकान में प्रवेश कर वह झट झरोखे पर जा बैठी। वहाँ से वह कौतूहलवर्द्धक भाँति भाँति के दृश्य देखकर चकित होने लगी। रास्ते पर "असंख्य लोगों को आते जाते देख उसके आश्चर्य की सीमा न रही। उसके घर में एक दासी थी। उसके लिए कलकत्ता पुराना था। वह बालिका के विस्मय को भारी मूर्खता समझ क्रुद्ध होकर बोलने लगी—"कौन ऐसा अनोखा तमाशा है जो पहरों से देख रही हो?" बैठी ही रहोगी या अपना कुछ काम भी देखोगी?"

दासी रात को इनके घर रहने को राज़ी न हुई। वह दिन भर काम करके रात को अपने घर चली जाती थी। रमेश को तत्काल ऐसी कोई दासी न मिली जो रात में उनके यहाँ रहना मंज़ूर करती। रमेश सोचने लगा—"कमला के साथ अब पत्नी का सा भाव रखना उचित नहीं। दूसरी जगह वह रात में अकेली कैसे सो सकेगी? उसके साथ पूर्ववत् प्रेमसंभाषण न करने से वह अपने मन में क्या समझेगी? उसे पूर्ण विश्वास है कि मैं ही उसका पति हूँ। यद्यपि वह अभी तक सांसारिक विषयों से अपरिचित है तो भी वह मेरे साथ पत्नी के कर्तव्य का यथासाध्य पालन करना अपना धर्म समझती है।"

रात में दोनों को खिला पिला कर दासी चली गई। रमेश ने कमला को सोने की जगह बता कर कहा—"तुम यहाँ सो रहो। मैं इस पुस्तक को पढ़कर सोऊँगा।"

यह कह कर रमेश एक पोथी हाथ में लेकर नाम मात्र को पढ़ने लगा। कमला दिन भर की थकी थी। उसे नींद आते देर न हुई।

वह रात इस तरह कट गई। दूसरे दिन भी रमेश ने किसी बहाने से कमला को अलग ही एक बिछौने पर सुला दिया। उस दिन बड़ी गरमी थी। जिस घर में कमला सोई थी, उसके सामने खुली छत पर रमेश एक दरी बिछा कर सो रहा। अपने हाथ से पंखा झलते झलते और मन ही मन भाँति भाँति की चिन्ता करते करते वह गाढ़ निद्रा में निमग्न हो गया।

रात के दो ढाई बजे जब रमेश ने एकबार करवट ली तब उसे जान पड़ा, जैसे कोई उसके पास बैठकर पंखा धीरे धीरे झल रहा हो। उसने आँख खोलकर देखा, सुशीला चुपचाप बैठी पंखा झल रही थी। रमेश ने उसका हाथ पकड़कर कहा—"तुम अपनी चारपाई पर जाकर सो रहो। पंखा झलने की कोई ज़रूरत नहीं।" यह कह कर रमेश सो गया। कुछ देर बाद सरलस्वभावा कमला भी रमेश के पास ही सो रही।

रमेश ख़ूब तड़के जागकर बड़ा ही विस्मित हुआ। देखा, कमला अपनी दहनी बाँह उसके कण्ठ पर दिये नींद से सोई है। उसने रमेश को अपना पति जानकर उसके साथ सो रहने में कुछ संकोच न किया था। सोई हुई बालिका के मुँहकी ओर देखकर रमेश के दोनों नेत्रों में आँसू भर आये। हा! वह बेचारा उस संशय हीन कोमल बाहुपाश को कैसे हटा सकता

था ? रात में वह बालिका उसके पास बैठकर उसकी निद्रित अवस्था में जो धीरे धीरे पंखा झल रही थी, यह भी उसे स्मरण हो आया । रमेश लम्बी साँस लेकर, अपनी आँखें पोंछ, धीरे धीरे बालिका के बाहु बन्धन को ढीला करके बिछौने से उठ गया ।

आख़िर बहुत सोच विचार कर रमेश ने कमला को कन्यापाठशाला में रख देने का निश्चय किया । इसलिए कि ऐसा करने से वह कुछ काल के लिए चिन्ता से छुटकारा पा सकेगा ।

रमेश ने कमला से पूछा—"तुम पढ़ोगी ?"

कमला रमेश के मुँह की ओर देखने लगी । उसका मतलब यही कि तुम जो कहो ।

रमेश ने विद्या की उपकारिता और पढ़ने से जो अलौकिक आनन्द मिलता है, उसका सविस्तर वर्णन किया । इसकी कुछ आवश्यकता न थी । कमला ने कहा—"आपकी इच्छा है तो मुझे पढ़ाइए ।"

रमेश—"पढ़ने के लिए तुमको स्कूल जाना होगा ।"

कमला ने अचम्भे के साथ कहा—"स्कूल ! मैं इतनी बड़ी लड़की होकर स्कूल कैसे जाऊँगी ?"

रमेश ने कमला की इस वयोमर्यादा के अभिमान पर ज़रा हँस कर कहा—"तुमसे भी उम्र में कितनी ही बड़ी बड़ी लड़कियाँ स्कूल जाती हैं ।"

कमला इस पर कुछ न बोली ।

दूसरे दिन गाडी करके वह रमेश के साथ स्कूल गई। बहुत बड़ा मकान है। उसमें कितनी ही छोटी बड़ी लड़कियाँ अपनी अपनी क्लास में बैठ कर पढ़ रही हैं। विद्यालय की स्वामिनी के हाथ में कमला को सौंप कर जब रमेश लौटने लगा तब कमला भी उसके पीछे पीछे आने लगी। रमेश ने कहा—"तुम कहाँ आती हो? तुमको यहीं रहना होगा।"

कमला ने भीत स्वर में पूछा—"क्या आप यहाँ न रहेंगे?"

रमेश—"नहीं, मैं यहाँ नहीं रहूँगा।"

कमला रमेश का हाथ पकड़कर बड़ी दीनता के साथ बोली—"तो मैं भी यहाँ न रह सकूँगी। मुझको अपने साथ लेते चलिए।"

रमेश ने हाथ छुड़ा कर कहा—"छी! कमला! डरने की कोई बात नहीं है।"

कमला ठिठक कर खड़ी हो गई। उसका चेहरा एकदम उतर गया। रमेश अपने चित्त की चञ्चलता को छिपा कर झटपट वहाँ से चल दिया। किन्तु बालिका की वह डबडबाई आँख और सशङ्कित मुख उसके हृदय में बर्छी की तरह चुभने लगा।

———

सातवाँ परिच्छेद

इस बार अलीपुर में वकालत का काम आरम्भ कर दूँगा, रमेश का ऐसा ही संकल्प था। किन्तु अब उसका जी टूट गया। उसमें अब वह सामर्थ्य न रहा कि चित्त को स्थिर करके वकालत कर सकता। पहले पहल कोई काम आरम्भ करने में जो अनेक प्रकार की विघ्नबाधायें उपस्थित होती है, उनके अतिक्रम करने की शक्ति न रहने से वह हताश हो गया। वह कभी गङ्गा के किनारे कभी पुष्पवाटिका आदि रमणीय स्थानों में जी बहलाने के लिए जाने लगा। एक दिन उसने कुछ दिन के लिए पच्छिमी जलवायु सेवन करने की बात सोची। ऐसे समय में उसने घनानन्द बाबू के हाथ की एक चिट्ठी पाई। घनानन्द बाबू ने लिखा है—"गज़ट देखने से मालूम हुआ, तुम पास हो गये। किन्तु यह ख़बर अब तक तुमने मेरे पास न भेजी, इसका दुःख है। बहुत दिनों से तुम्हारा कुशल-समाचार न सुना। तुम कैसे हो, कब कलकत्ते आओगे ? लिखकर मुझे आनन्दित करो। जब तक तुम्हारी चिट्ठी न आवेगी, मैं चिन्तित रहूँगा।

यहाँ पर इतना लिख देना असङ्गत न होगा कि घनानन्द बाबू विलायत गये हुए लड़के के बाद उसी पर दृष्टि डाले हुए थे। वह लड़का विलायत से बैरिष्टरी पास करके आया और उसके ब्याह की बातचीत एक ज़मीदार की लड़की के साथ ठीक हो गई।

इस बीच में जो सब घटनायें हुई हैं उनसे रमेश के लिए नलिनी के साथ पहले की तरह मुलाकात करना उचित होगा या नहीं, इसका वह किसी प्रकार निश्चय न कर सका। इन दिनों कमला के साथ जो उसका एक नया सम्बन्ध खड़ा हुआ है उसे भी किसी से कहना वह उचित नहीं समझता। निरपराधिनी कमला को वह समाज में तिरस्कृत करना भी नहीं चाहता। अन्यथा ये सब बातें बिना स्पष्ट रूप से कहे नलिनी के पास वह अपना पहले का अधिकार क्योंकर प्राप्त कर सकता है?

जो कुछ हो, घनानन्द बाबू के उत्तर देने में विलम्ब करना उचित न जान रमेश ने उनको लिखा—

"मैं अनेक आवश्यक कार्यवश न आपकी सेवा में हाज़िर हो सका, न कोई पत्र भेज सका। क्षमा कीजिएगा।" पत्र में उसने अपना नया पता न दिया।

यह चिट्ठी डाक में देकर उसके दूसरे ही दिन वह सिरपर शमला रख अलीपुर की अदालत में हाज़िरी देने गया।

एक दिन वह कचहरी से लौटते समय कुछ दूर आगे बढ़कर एक गाड़ीवान से किराये की बातचीत कर रहा था। इतने में उसे एक परिचित कण्ठस्वर सुन पड़ा—"पिता जी, ये रमेश बाबू हैं?"

"गाड़ीवान्! रोको, रोको।"

गाड़ी रमेश के पास आ खड़ी हुई। घनानन्द बाबू उस दिन अलीपुर की पशुशाला देखकर अपनी लड़की के साथ घर लौटे आ रहे थे। रास्ते में अकस्मात् रमेश से भेंट होगई।

गाड़ी में नलिनी का वह प्रेमप्रफुल्लित मुख, उसके शरीर की वह मनोहर कान्ति और उसके भूषण, वसन और शृङ्गार की वह विलक्षण शोभा देखकर रमेश के हृदय में एक प्रकार की तरङ्ग लहराने लगी। वह किंकर्तव्यविमूढ़ होकर जहाँ का तहाँ खड़ा रहा। उसका सारा शरीर सघर्म होगया।

घनानन्द बाबू ने कहा—"रमेश! अहोभाग्य, आज रास्ते में तुमसे भेट हो गई। आज कल तुमने चिट्ठी लिखना बन्द कर दिया। कभी लिखते भी हो तो अपना पता ठिकाना नहीं देते। अभी कहाँ जा रहे हो? क्या कोई ज़रूरी काम है?"

रमेश—"नहीं, अदालत से लौटा आ रहा हूँ।"

घनानन्द—"तो चलो, मेरे यहाँ चाय तैयार होगी।"

रमेश कुछ उज्र न करके गाड़ी में जा बैठा। उसने अपने हृदय से संकोच के पर्दे को हटाकर नलिनी से पूछा, "आप अच्छी तरह हैं?"

नलिनी ने इस कुशल प्रश्न का उत्तर न देकर कहा—"आपने वकालत पास करने की ख़बर हम सबों को न दी? क्यों?" रमेश कुछ कारण न बता सका। उसने सिटपिटा कर कहा—"आप पास होगई—यह जानकर मैं बहुत ख़ुश हुआ।"

नलिनी ने हँसकर कहा—"ख़ैर आप हमारी ख़बर तो रखते हैं?"

घनानन्द—"तुम अभी कहाँ ठहरे हो?"

रमेश—"दर्ज़ी-पाड़े में।"

घनानन्द—"क्यों? कोलूटोला में तुम्हारा पहला मकान तो बुरा न था?"

नलिनी उत्तर की अपेक्षा से विशेष कौतूहल के साथ रमेश का मुँह देखने लगी। वह दृष्टि रमेश के हृदय में गड़ गई। वह झट बोल उठा—"हाँ, फिर उसी मकान में आनेका इरादा है।"

मकान बदलने के कारण जो नलिनी उसे दोषी समझकर मन ही मन नाराज़ हुई, उसे रमेश भली भाँति समझ गया। वह अपने को निर्दोष साबित करने का कोई उपाय न देख चुप हो रहा। उधर से फिर कोई प्रश्न न हुआ। नलिनी गाड़ी से मुँह निकाल कर सड़क की ओर देखने लगी। रमेश अब चुप न रह सका। वह आपही आप बोल उठा—"मेरा एक नातेदार हेदुवा महल्ले में रहता है। वह बीमार है। उसी की देखभाल के लिए मैंने दर्जी-पाड़े में मकान भाड़े पर लिया है।"

रमेश ने एक दम झूँठ न कहा, पर बात कुछ असङ्गत सी जान पड़ी। क्योंकि बीच बीच में नातेदार की ख़बर लेने के लिए हेदुवा से कोलूटोला कुछ उतनी दूर न था। नलिनी की दोनों आँखें गाड़ी के बाहर सड़क ही की ओर गड़ी रहीं। हत-भाग्य रमेश क्या कह कर नलिनी को अपनी ओर आकर्षित करे यह उसकी बुद्धि में न आया। उसने एकबार केवल यही पूछा—"योगेन्द्र का क्या हाल है?"

घनानन्द बाबू ने कहा—"वह क़ानून की परीक्षा में फ़ेल होकर पच्छिमी हवा खाने गया है।"

गाड़ी घनानन्द बाबू के फाटक पर पहुँच गई। परिचित घर और उसकी सजावट ने रमेश के ऊपर मन्त्रजाल फैला दिया। वह दीर्घनिश्वास लेकर चाय पीने लगा।

घनानन्द बाबू ने रमेश से पूछा—"इस दफ़े तो तुम बहुत दिन घर पर रहे। क्या कोई विशेष कार्य था?"

रमेश—"पिता का परलोक हो गया।"

घनानन्द—"अयँ! यह क्या कहा? कैसे उनकी मृत्यु हुई?"

रमेश—"वे पद्मा नदी में नाव पर घर आ रहे थे। एकाएक तूफ़ान आने से नाव डूब गई। साथ ही वे भी डूबकर मर गये।"

तेज़ हवा उठने से जैसे बादल दूर होकर आकाश निर्मल हो जाता है, वैसे ही इस शोक-संवाद से रमेश और नलिनी के बीच जो मनोमालिन्य छा गया था वह एकदम दूर हो गया। नलिनी ने मनही मन पश्चात्ताप करके कहा—"रमेश बाबू को मैंने व्यर्थ ही दोष दिया था। वे पितृवियोग के शोक में डूबे थे। अब भी इनके हृदय से प्रायः वह शोक दूर नहीं हुआ है, इसी से इनका जी ठिकाने नहीं है। उन पर कैसी आपदा आई है। उनके मनमें कैसी गहरी चोट लगी है, ये सब बिना समझे बूझे हम उन्हें दोषी ठहराने लगी थीं।"

नलिनी अब रमेश की बड़ी ख़ातिर करने लगी। रमेश को खाने की इच्छा न थी। नलिनी ने बड़ा आग्रह और हठ करके उसे खिलाया और मधुर स्वर में कहा—"आप बहुत दुबले हो गये हैं। आप शरीर की ओर से इस तरह क्यों लापरवाह हो गये हैं?" उसने घनानन्द बाबू से कहा—"पिताजी! रमेश बाबू आज रात में भी यहीं भोजन करेंगे।"

घनानन्द—"अच्छा।"

इसी समय अक्षयकुमार वहाँ आया । घनानन्द बाबू क चायटेबुल पर अक्षयकुमार का कुछ दिन से एकाधिपत्य सा हो गया था । आज सहसा रमेश को देख कर वह ठिठक गया । उसने मनका भाव छिपा कर मुस्कुरा कर कहा—"ये कौन ? रमेश बाबू ! मैं समझता था, शायद आप हम लोगों को एकदम भूल गये ।"

रमेश इसका कुछ जवाब न देकर केवल मुस्कुराया । अक्षयकुमार ने कहा—"आप के पिता इस बार जिस मुस्तैदी के साथ आपको यहाँ से पकड़ कर ले गये, उससे मैंने निश्चय किया था, वे अबकी बार आपका बिना ब्याह कराये न रहेंगे ।" कहिए, सब बखेड़ों को तय करके तो आये हैं ?"

नलिनी ने रिसभरी चितवन से अक्षयकुमार की ओर देखा । घनानन्द ने कहा—"अक्षय, तुम नहीं जानते, रमेश के पिता का देहान्त हो गया ।" अक्षय कृत्रिम शोक प्रकाशित करने लगा ।

रमेश उदासी के साथ सिर नीचा किये बैठा था । उसे दुःख पर दुःख दिया गया जान नलिनी मन ही मन अक्षयकुमार पर बहुत रुष्ट हुई । उसने रमेश की ओर प्रफुल्ल दृष्टि से देखकर कहा—"हम सबों का नया फ़ोटो तो आपने नहीं देखा ?" यह कह कर वह अलबम् लाकर रमेश को मेज़ के एक ओर ले जाकर चित्र दिखलाने लगी । उसकी आलोचना के साथ साथ नलिनी ने एक बार धीरे से पूछा—"क्या नये मकान में आप अकेले रहते हैं ?"

रमेश—"हाँ ।"

कमलिनी—"आप मेरे घर के पास वाले पहले मकान में आने में देरी न करें।"

रमेश—"बहुत अच्छा। मैं इसी सोमवार को उसम कान में आऊँगा।"

नलिनी—"मैं समझती हूँ, यहाँ आपके आने से मुझे बड़ा फ़ायदा होगा। बीच बीच में बी.ए.की फ़िलासफ़ी आपसे समझ लिया करूँगी।"

रमेश ने इस पर विशेष प्रसन्नता प्रकट की।

आठवाँ परिच्छेद

रमेश ने पुराने मकान में आने में विलम्ब न किया। इसके पहले नलिनी के साथ रमेश के भाव का जो अन्तर था वह इस बार न रहा। रमेश उसके घर का सा आदमी हो गया। रमेश और नलिनी में बड़ी घनिष्ठता हुई। दोनों ओर से हँसी खेल, आमोद विनोद, एक साथ खाना पीना, आदि जैसा चाहिए, होने लगा।

इसके पूर्व पढ़ने में विशेष परिश्रम करने के कारण नलिनी की मुखश्री मलिन हो गई थी। उसका शरीर इतना दुर्बल हो गया था कि ज़रा ज़ोर से हवा लगने ही से मालूम होता था कि उसकी कमर टूट जायगी। उसका स्वभाव बहुत गम्भीर था। वह कम बोलती थी। लोग उसके साथ बात करने में भय खाते थे कि शायद वह बात उसे न रुचे।

इधर कुछ ही दिन में उसमें बहुत परिवर्तन हो गया। उसके पीले कपोलों पर गुलाबी छटा दीखने लगी। उसके नेत्र बात बात में मानों हँसते और खुशी से नाचते थे। पहले वह वेश-विन्यास या शृङ्गार में मन देना अज्ञानता ही नहीं अनुचित समझती थी। किन्तु अब किसी के साथ इस विषय में कुछ तर्क न करके क्यों उसका मन बदलता जाता था, यह अन्तर्यामी महापुरुष के सिवा कौन कह सकता है?

कर्तव्य के अनुरोध से रमेश भी कुछ कम गम्भीर न था। विचारशक्ति के बोझ से उसका शरीर और मन शिथिल हो

गया था । आकाश के ग्रह नक्षत्र अपनी नियत गति से चलते फिरते हैं । किन्तु मानमन्दिर अपने आकाशस्थित यन्त्रों को लेकर बड़ी सावधानी के साथ स्थिर होकर बैठा है । रमेश भी वैसेही इस जङ्गमशील संसार के भीतर अपने युक्तितर्क की आयोजना के भार से स्थिर था । वह भी आज इतनी चञ्चल क्यों हो गया ? किसने उसे चञ्चल कर दिया ? आज कल वह भी परिहास का समीचीन उत्तर न दे सकने के कारण बात बात में ठठाकर हँस उठता है । यद्यपि वह अब भी बालों पर कंघी नहीं फेरता तथापि आइने में बार बार अपना चेहरा देखने से बाज़ नहीं आता । उसका पहनावा ओढ़ावा भी पहले की तरह अब मैला नहीं रहने पाता । उसके शरीर और मन में एक प्रकार की नई शक्ति उत्पन्न हुई सी जान पड़ती है ।

नवाँ परिच्छेद

प्रेमियों के लिए काव्य में जिन सब बातों की व्यवस्था लिखी है, वह कलकत्ते में कहाँ पाइए। न वहाँ कहीं फूले अशोक, पलाश और मौलसरी का उपवन है, न कहीं विकसित मालती और माधवी का लताबितान है, न कहीं नवमञ्जरी-रञ्जित रसाल-वाटिका में कोयलों की कुहक है, तो भी इस उद्दीपक विभावविहीन नगरी में प्रेम का पिपासु विफल होकर नहीं जाने पाता। इस लोहे की पटरी से बँधी हुई पक्की सड़क पर; इस घोड़ा गाड़ियों की अपार भीड़ में एक अदृश्य प्राचीन देवता अपने धनुष को छिपाये, लाल साफ़े-वाले पहरेदारों की आँख के सामने से होकर दिन रात में कितनी बार कहाँ कहाँ आता जाता है, यह कौन कह सकता है?

नलिनी और रमेश चमड़े की दूकान के सामने हलवाई की दुकान के पास कोलूटोला महल्ले में किराये के मकान में रहते थे। इससे कोई यह न समझे कि प्रेमविकाश के सम्बन्ध में ये दोनों कुञ्जकुटीर में रहनेवालों की अपेक्षा किसी तरह पीछे रहे हों। घनानन्द बाबू के चाय-रस-सुवासित, उस छोटे से मैले टेबुल रूपी पद्मसरोवर में मधुप रूपी रमेश को कुछ भी अभाव न था। नलिनी की बिल्ली मृगशावक न होने पर भी रमेश उसका कम आदर न करता था। जब वह कोमलता के साथ उसका गला पकड़ कर हिला देता और जब वह धनुष की

तरह पीठ फुला कर आलस्य त्याग कर उसका बदन चाटती थी तब रमेश की मुग्धदृष्टि में नलिनी का वह पालित जीव किसी दूसरे चौपाये की अपेक्षा कम गौरवास्पद नहीं जान पड़ता था।

नलिनी परीक्षा देने की उलझन में पड़कर सिलाई की शिक्षा में विशेष प्रवीणता लाभ न कर सकी थी। इसलिए वह कुछ दिन से जी लगा कर अपनी एक प्रवीण सखी के पास सिलाई सीखने लगी। रमेश सिलाई के काम को अनावश्यक और तुच्छ समझता था। साहित्य और दर्शन-शास्त्र में रमेश का नलिनी के साथ तर्क वितर्क चलता था, परन्तु सिलाई के विषय में रमेश को कुछ बोलने का अवसर न मिलता था। इसलिए वह कभी कभी कुढ़कर कमलिनी से कहता था—"न मालूम आज कल आप सिलाई के काम में क्यों इस तरह उलझ पड़ी हैं? जिन लोगों को समय बिताने का दूसरा उपाय नहीं वही लोग इसे पसन्द करते हैं। जिन्हें कोई काम नहीं, वे बैठे बैठे सिलाई न करें तो क्या करें।" नलिनी कुछ जवाब न देकर मुस्कुराती हुई सुई में रमेश का डोरा पिरोने लगती थी। अक्षयकुमार इस मौके पर तीव्रस्वर में बोल उठता था, "जो काम प्रयोजनीय है, जिससे संसार का कुछ उपकार हो सकता है, वह सभी रमेश बाबू के ऊँचे खयाल में व्यर्थ और तुच्छ जँचता है। महाशय! आप चाहे जितने बड़े तत्त्वज्ञानी और कवि क्यों न हों, बिना तुच्छ वस्तुओं के एक दिन भी संसार का काम नहीं चल सकता।" रमेश इसके ख़िलाफ़ बहस करने लगता था। नलिनी उसे रोक कर कहती—"रमेश बाबू! आप सब बातों का उत्तर देने के लिए क्यों इतने व्यग्र होते हैं? चुप रहने में जितना लाभ है उतना बहुत बोलने में नहीं" यह कह

कर वह सिर नीचा करके फिर बड़ी सावधानी के साथ सिलाई का डोरा चलाने लगती थी।

एक दिन रमेश ने उसके पढ़ने के घर में जाकर देखा, मेज़ पर रेशम के फूल निकाले हुए मख़मल से बँधी हुई एक ब्लाटिङ्गबुक बड़ी हिफ़ाज़त से रक्खी है। मख़मल के एक कोने में 'र' अक्षर लिखा है और एक कोने में सुनहले रेशम के डोरे से एक कमल का फूल बनाया हुआ है। ब्लाटिङ्ग-बही का इतिहास और तात्पर्य समझने में रमेश को कुछ भी विलम्ब न हुआ। उसका हृदय आनन्द से नाचने लगा। सिलाई करना तुच्छ नहीं है, यह उसके अन्तरात्मा ने बिना वाद-विवाद के ही स्वीकार कर लिया। वह उस बही को छाती से लगाकर अक्षयकुमार के निकट हार मानने को भी राज़ी हुआ। उसने ब्लाटिङ्ग-बही को खोलकर उसपर एक चिट्ठी लिखने का काग़ज़ रखकर लिखा—"अगर मैं कवि होता, तो कविता करके ही इसका उत्तर देता। किन्तु मैं कवित्व-शक्ति से वञ्चित हूँ। ईश्वर ने मुझको वह योग्यता नहीं दी जो किसी को कुछ देकर प्रसन्न कर सकूँ। पर दान-ग्रहण की क्षमता भी एक क्षमता है। इस आशातीत उपहार को मैंने किस ख़ुशी के साथ ग्रहण किया है, यह अन्तर्यामी भगवान् को छोड़ दूसरा नहीं जान सकता। दान आँखों से देखने की चीज़ है, परन्तु दानग्रहण का आनन्द हृदय के भीतर छिपा रहता है। इति। चिरऋणी।"

रमेश की यह हस्तलिपि कमलिनी के हाथ पड़ी। इसके बाद इस सम्बन्ध में उन दोनों में फिर कोई बात न हुई।

निदान बरसात का मौसम आया। यह ऋतु मानवसमाज के लिए उतना सुखकर नहीं होता जितना अरण्यचरों के लिए।

वर्षा से बचने के लिए लोग घर के ऊपर छत-छप्पर देते हैं, पथिक छाते से उसका निवारण करते हैं और ट्राम गाड़ी के सवार उसे पर्दे से रोकते हैं। नदी, पहाड़, जङ्गल और मैदान बरसात को बन्धु समझ कर आदरपूर्वक बुलाते हैं। यथार्थ में वर्षा की बहार वहीं के लिए है। वहाँ सावन भादों महीने में भूलोक और स्वर्गलोक के आनन्द सम्मिलन के बीच कोई व्यवधान नहीं रह जाता।

किन्तु नया प्रेम मनुष्य को जङ्गल पहाड़ का वह सुख घर बैठे देता है। लगातार पानी बरसने से घनानन्द बाबू का जी एकदम भिन्ना उठा, परन्तु नलिनी और रमेश की चित्तस्फूर्ति में किसी तरह का व्यतिक्रम न हुआ। बादल की अँधियारी, बिजुली की चमक, मूसलधार पानी बरसने का मधुर शब्द और बीच बीच में मेघ को गम्भीर ध्वनि ने उन दोनों नये प्रेमियों के मानसिक सम्बन्ध को और भी सुदृढ़ कर दिया।

वृष्टि के कारण रमेश को कचहरी जाने में प्रायः विघ्न होने लगा। किसी किसी दिन सबेरे ऐसे ज़ोर की वर्षा होती थी कि नलिनी उद्विग्न होकर कहने लगती थी—"रमेश बाबू! इस वर्षा में आप कैसे घर जाइएगा?" रमेश शरमाता हुआ कहता था—"क्या होगा? किसी तरह चला जाऊँगा?"

नलिनी—"पानी में भीगने से सर्दी होगी। भोजन कर लीजिए तो जाइएगा।"

रमेश को सर्दी का कुछ भय न था; थोड़ी देर पानी में भीगने से उसको सर्दी होते आज तक किसी ने न देखा था। किन्तु जिस दिन वर्षा होती थी उस दिन उसे नलिनी की

आज्ञा के अधीन होकर रहना पड़ता था। दो चार डग पानी में चलकर अपने घर जाना अन्याय और दुःसाहस समझा जाता था। जिस दिन आकाश में घटा घिर आती थी, और पानी बरसने का लक्षण देख पड़ता था, उस दिन सबेरे रमेश बाबू को खिचड़ी खाने का न्योता हो जाता था। रमेश को आने भर की देरी रहती थी, फिर उसका जाना नलिनी के इच्छाधीन, बिना उसकी मर्ज़ी के रमेश कब जा सकता था। रमेश को दिन भर में कई बार खिलाने से जो उसे अजीर्ण की बीमारी होगी, इसका भय नलिनी को उतना न था, जितना उसे रमेश के पानी में भीगने से सर्दी होने का भय था।

इसी तरह दिन पर दिन बीतने लगा। इस परवशता का परिणाम क्या होगा, रमेश इसे न सोचता था, किन्तु घनानन्द बाबू सोचते थे। और उनके समाज के दस पाँच आदमी उसकी आलोचना करते थे। रमेश का शास्त्रीय ज्ञान जितना बड़ा था, व्यावहारिक ज्ञान उतना बड़ा न था। इस कारण इस प्रेमावस्था में उसकी लौकिक समझ और भी मन्द हो गई है। घनानन्द बाबू रोज़ ही उसके मुँह की ओर विशेष आशा से देखते थे, किन्तु उन्हें उसका कुछ उत्तर नहीं मिलता था।

दसवाँ परिच्छेद

अक्षयकुमार का स्वर उतना अच्छा न था, किन्तु जब वह सितार बजाकर गाता था, तब विशेष मार्मिक को छोड़ साधारण सुननेवाले कुछ न बोलते थे,बल्कि कितनेही और गाने काअनुरोध करते थे। घनानन्द बाबू को सङ्गीत में उतना अनुराग न था, परन्तु वेइस बात को क़बूल न करते थे। लोग यह न समझें कि उन्हेंगाने बजाने का शौक नहीं है, वे बराबर इसकी चेष्टा करते थे। जब कोई अक्षयकुमार से गाने बजाने का अनुरोध करता था तब वे कहते थे—"तुम लोगों में यही भारी दोष है। वह बेचारा गाना जानता है तो क्या उस पर एकदम इतना अत्याचार करना चाहिए?"

अक्षयकुमार हाथ जोड़ कर कहता था—"नहीं नहीं। आप इसके लिए कोई चिन्ता न करें। अत्याचार की इसमें कौन सी बात है?"

अनुरोधकर्ता उमँग कर बोलता—"तो कुछ सुनाइए।"

उस दिन दोपहर के बाद सारा आकाशमण्डल बादल से छा गया। ख़ूब ज़ोर से पानी बरसने लगा। साँझ हो गई पर तो भी पानी बरसता ही रहा। अक्षयकुमार का जाना रुक गया। नलिनी ने कहा—"अक्षय बाबू! कुछ गाइए।" यह कह कर नलिनी हारमोनियम लेकर बैठी और सुर भरने लगी।

अक्षयकुमार सितार का सुर मिलाकर गाने लगा—

"वायु वहे पुरवैया, नींद नहीं बिन सैयाँ ।"

अक्षयकुमार क्या गाता था, यह स्पष्ट रूप से कोई न समझ सकता था। समझने की उतनी आवश्यकता भी न थी। जब मनमें विरह-वेदना का भाव भरा है तब उसका आभास मात्र यथेष्ट है। इतना अवश्य समझा गया कि पानी बरसता है, मोर नाचता है, बिजली कड़कती है, और एक व्यक्ति को एक व्यक्ति से मिलने के लिए चित्त व्याकुल हो रहा है।

अक्षयकुमार सितार की ध्वनि में अपने मन का भाव व्यक्त करने की चेष्टा करता था, किन्तु उस ध्वनि का विशेष मर्म समझते थे दो ही मनुष्य। उस ध्वनि की लहरें दो ही व्यक्तियों के हृदय में विशेष आघात पहुँचा रही थीं।

उस दिन जैसे निरन्तर पानी बरस रहा था, वैसे ही गान की भी झड़ी लग गई थी। नलिनी बारबार अनुनयपूर्वक कहने लगी—"अक्षयबाबू! आप को मेरी सौगन्द है, अभी गाना समाप्त न कीजिए, एक और गीत गाइए।"

अक्षय का उत्साह दूना बढ़ गया। उसने गाने में और भी आलाप की मात्रा अधिक कर दी। गाते गाते वह तन्मय हो गया। बड़ी देर तक योंही गाने बजाने का ठाठ जमा रहा। जब रात बहुत बीती और पानी बरसना बन्द हुआ तब अक्षयकुमार अपने घर को गया। रमेश ने विदा होते समय सतृष्णनयन से एकबार नलिनी के मुँह की ओर देखा। नलिनी भी चकित-दृष्टि से रमेश को एकबार देखकर उठ खड़ी हुई। उसकी दृष्टि में भी गान का असर भरा था।

रमेश घर गया। वृष्टि कुछ देर के लिए बन्द थी। फिर टिप-टिप करके पानी बरसने लगा। रमेश को उस रात नींद न आई। नलिनी भी बड़ी देर तक चुपचाप अकेली बैठकर गहरे अन्धकार में निरन्तर वर्षा होने का शब्द सुन रही थी। उसके कान में अक्षयकुमार का गान गूँज रहा था।

"वायु वहे पुरवैया, नींद नहीं बिन सैंयाँ।"

दूसरे दिन सवेरे रमेश बिछौने से उठ कर सोचने लगा—"यदि मैं केवल गीत गाना जानता और कोई इल्म न जानता तो मेरे लिए अच्छा था।"

परन्तु उसे किसी युक्ति से कभी कुछ गाना आवेगा, यह आशा उसे न थी। इसलिए उसने निश्चय किया कि गाना न आया तो न सही, परन्तु बजाना अवश्य सीखूँगा। इसके पूर्व एक दिन उसने घनानन्द बाबू के सूने घर में सारंगी लेकर ज्योंही ज़ोर से खूँटी पेंठी त्योंही उसका एक तार टूट गया। सारंगी बजाने का उत्साह उसका उसी दिन भङ्ग होगया। आज वह एक छोटा सा हारमोनियम ख़रीद कर ले आया। किवाड़ बन्द करके घर के भीतर बैठ कर बड़ी सावधानी के साथ उस पर उँगली फेर कर देखा, सारंगी से उसने हारमोनियम बाजे को अच्छा समझा। सीखने से वह हारमोनियम बजा सकेगा, यह आशा कुछ कुछ उसके हृदय में हुई।

दूसरे दिन रमेश को घनानन्द बाबू की बैठक में पैर रखते ही नलिनी ने पूछा—"कहिए, कल आपके घर से हारमोनियम का शब्द कैसा सुना जाता था?"

रमेश ने सोचा था, द्वार बन्द करके हारमोनियम बजाने से कोई न जान सकेगा। परन्तु वह यह न जानता था कि कोई

कान ऐसा भी है जो उसके बन्द घर की भी ख़बर रखता है। रमेश को कुछ लज्जित होकर क़बूल करना पड़ा कि वह एक हारमोनियम ख़रीद कर लाया है, और बजाना सीखेगा, यह उसकी एकान्त इच्छा है।

नलिनी ने कहा—"घर में किवाड़ बन्द करके क्यों स्वयम् मिथ्या चेष्टा कीजिएगा। उससे बेहतर होगा, आप मेरे ही यहाँ उसका अभ्यास करें। मैं जहाँ तक जानती हूँ, आप के बजाने में सहायता दूँगी।"

रमेश ने कहा—"मैं इस विषय में एकदम कोरा हूँ। मुझको लेकर आप क्यों वृथा कष्ट उठावेंगी?"

नलिनी—"मैं जो कुछ जानती हूँ, वह आप से अनभिज्ञ की शिक्षा देने ही में सफल समझूँगी!"

रमेश ने जो अपने को इस विषय में अनभिज्ञ बतलाया था, यह एकदम झूठ न था। इसका प्रमाण नलिनी को क्रम क्रम से मिलने लगा। नलिनी जैसी उस्तादिन की इतनी अयाचित सहायता पाकर भी रमेश के मस्तिष्क में स्वर का कुछ ज्ञान न हुआ। नलिनी सिखलाते सिखलाते थक गई, पर रमेश की समझ में कुछ न आया। जिसे तैरना नहीं आता वह जैसे पानी में गिर कर पागल की भाँति हाथ पैर फेंकने लगता है, रमेश भी सङ्गीत की सरिता में धसकर वैसे ही व्यवहार करने लगा।

उसकी कौन उँगली कब कहाँ जा पड़ती थी, इसका कुछ भी ख़याल उसे न रहता था। कोई स्वर शुद्ध न निकलता था, किन्तु स्वर की यह भूल रमेश के कान में ज़रा भी न खटकती

थी। सुर बेसुर का कुछ भी ख़याल न करके वह मेज़े में अपना बजाये चला जाता था। राग रागिनी किसे कहते हैं, इसका उसे कुछ भी ज्ञान न था। उसका बेसुर बजाना सुनकर नलिनी हँस कर कहती थी—"यह क्या कर रहे हैं, भूल हुई। फिर बजाइए तो।" फिर भूल हुई। यों नलिनी के बार बार कहने पर भी रमेश का हाथ अपना अल्हड़पन नहीं छोड़ता था। किन्तु धीर स्वभाव अध्यवसायी रमेश सहसा विरक्त होने वाला न था। वह हारमोनियम बजाने की शिक्षा विना कुछ हासिल किये न छोड़ेगा। रास्ता तैयार करने का ष्टीमरोल जिस तरह मन्द गति से चलता है, और उसके नीचे कौन दबता है कौन पिसा जाता है, उस पर वह ध्यान नहीं देता, अभागे सुर और ताल आदि के ऊपर भी रमेश उसी प्रकार अनिवार्य गति से निःशङ्कतापूर्वक यातायात करने लगा।

रमेश की इस मूर्खता पर नलिनी हँसती थी, रमेश भी हँसता था। रमेश के भूल करने की असाधारण शक्ति से नलिनी को अत्यन्त हर्ष होता था। भूल होने से, बेसुर गाने से या और किसी तरह की अयोग्यता से आनन्द पाने का गुण एक प्रेम में ही है। छोटा बच्चा चलना सीखते समय बार बार गिरता है, उससे माँ बाप का स्नेह बच्चे में और भी बढ़ता है। बजाने में रमेश जो विचित्र रूप से भूल करता था, नलिनी के लिए यह एक बड़े कुतूहल का विषय था।

रमेश कभी कभी नलिनी से कहता था—"अच्छा, तुम जो इतना हँसती हो पहले पहल जब तुम बजाना सीखती रही होगी तो क्या तुम कभी कुछ भूल न करती रही होगी?"

नलिनी—"भूल ज़रूर करती थी, पर सच कहती हूँ, रमेश-बाबू! आप की भूल के साथ उसकी तुलना नहीं हो सकती।"

रमेश इससे निवृत्त न होकर बल्कि हँस कर फिर बजाने लगता था। घनानन्द बाबू सङ्गीत का भला बुरा कुछ न समझते थे। वे जब तब कान खड़ा करके गम्भीरतापूर्वक कहते थे—"देखता हूँ, रमेश का हाथ अब धीरे धीरे पका हुआ जाता है।"

नलिनी—"बेसुरे में इनका हाथ बेशक पका है।"

घनानन्द—" नहीं, नहीं, पहले की अपेक्षा अब इसने बहुत कुछ तरक्की की है। मेरी समझ में तो रमेश यदि मन देकर सीखेगा तो ज़रूर ही इसे बजाना आजायगा।"

गाने बजाने में क्या है, सिर्फ़ अभ्यास चाहिए। एकबार सरिगम का जहाँ अच्छी तरह बोध हुआ तहाँ फिर गाने का सब विषय आप ही मालूम हो जाता है।" घनानन्दबाबू की इस बात पर कोई विशेष ध्यान नहीं देता था, सब लोग उन्हें वृद्ध जानकर चुपचाप उनकी बात सुन लेते थे।

ग्यारहवाँ परिच्छेद

घनानन्द बाबू प्रायः प्रतिवर्ष शारदी पूजा के समय नलिनी को साथ लेकर जल वायु बदलने की इच्छा से जबलपुर अपने बहनोई के यहाँ जाते थे। विशेष कर परिपाक शक्ति बढ़ाने के लिए उनका यह वार्षिक स्थानान्तर-गमन का नियम था।

आधा भादों बीत गया। दसहरे की छुट्टी में अब अधिक विलम्ब नहीं है। घनानन्द बाबू अभी से जाने की तैयारी करने लगे।

नलिनी से शीघ्र वियोग होने की सम्भावना देखकर रमेश दो एक दिन से ख़ूब जी लगाकर हारमोनियम सीखने लगा। एक दिन बातों ही बात नलिनी ने उससे कहा—"रमेश बाबू, देखती हूँ, आपका स्वास्थ्य दिनों दिन ख़राब होता जाता है। मेरी बात मानिए तो कुछ दिन के लिए हवा पानी बदल डालिए। इस विषय में आप मेरे पिताजी से राय ले सकते हैं।"

घनानन्द बाबू नलिनी का मतलब समझ गये। उन्होंने कहा—"स्वास्थ्यरक्षा के लिए जल-वायु का परिवर्तन भी एक दवा है। समझे रमेश! पश्चिम में ऐसा कोई शहर नहीं जो मेरा देखा न हो। मैं पहले ख़ूब सफ़र करता था। कुछ दिन घूमने फिरने से स्वास्थ्य के अंश में विशेष-लाभ होता है। भूख ख़ूब लगती है। खाया हुआ अन्न भली भाँति पचता है। शरीर में एक प्रकार की नई स्फूर्ति आती है। पीछे तोंद बढ़ जाने से:—

नलिनी ने कहा—"रमेश बाबू—आपने कभी नर्म्मदानदी के तट की शोभा देखी है ?"

रमेश—"नहीं, नहीं देखी।"

नलिनी—"आपको एकबार देखना उचित है।"

पिता की ओर देखकर—"आप क्या कहते हैं ?"

घनानन्द—"अच्छा तो, रमेश हम लोगों के साथ ही क्यों नहीं चलते ?" हवा की तबदीली होगी, मार्वल पहाड़ भी देखेंगे।

हवा बदलना और मार्वल पहाड़ देखना, ये दोनों बातें रमेश को विशेष प्रयोजनीय जान पड़ीं। इसलिए रमेश जाने को राज़ी हुआ।

उस दिन रमेश हवा के ऊपर महल तैयार करने लगा। अशान्तचित्त के वेग को रोकने के लिए अपने घर का द्वार बन्द करके हारमोनियम बजाने लगा। आज और भी सुर बेसुर का विचार न रहा। कमलिनी के दूर देश जाने की सम्भावना से कई दिन से उसका हृदय व्याकुल हो रहा था। आज मारे ख़ुशी के सङ्गीत-विद्या के सम्बन्ध में उसने सब प्रकार के न्याय अन्याय को एकदम तिलाञ्जलि दे दी।

इसी समय बाहर से किसी ने दर्वाज़े पर धक्का देकर कहा—"रमेश बाबू ! क्या कर रहे हैं ?"

रमेश ने अत्यन्त लज्जित होकर दर्वाज़ा खोल दिया।

अक्षयकुमार ने घर के भीतर प्रवेश करके कहा—"आप जो छिपकर राग-रागिनी पर इस तरह का अत्याचार कर रहे

हैं, क्या उसके लिए आपके क्रिमिनल कोर्ट में कोई दण्ड विधान नहीं है ?"

रमेश हँस कर, कहा—"मैं अपराध स्वीकार करता हूँ ।"

अक्षय—"यदि आप बुरा न मानें तो आपके साथ मुझे एक बात की अलोचना करनी है ।"

रमेश उत्कण्ठित होकर चुपचाप आलोच्य विषय की प्रतीक्षा करने लगा ।

अक्षय—"आपने जो बात इतने दिनों में जानी है, वह मैं कब से न जानता हूँ । नलिनी के भले बुरे से मैं भी कुछ सम्बन्ध रखता हूँ ।"

रमेश हाँ,ना, कुछ न कहकर चुपचाप अक्षय की बात सुनने लगा ।

अक्षय—"उसके सम्बन्ध में आपका क्या अभिप्राय है ! यह पूछने का मेरा अधिकार है—क्योंकि घनानन्द बाबू के आत्मीयों में एक मैं भी हूँ ।"

यह बात रमेश को बहुत बुरी लगी । किन्तु कठोर उत्तर देने का अभ्यास रमेश को न था । उसने बड़ी मुलायमियत के साथ कहा—"उसके सम्बन्ध में मेरा कोई बुरा अभिप्राय हो तो आप कहिए ।"

अक्षय—"देखिए, आप हिन्दू-कुल में उत्पन्न हुए हैं, आपके पिता सनातनधर्मी थे । आप कहीं ब्रह्मोमतवाले के घर विवाह न करलें, इस भय से वे आपको हिन्दू की लड़की के साथ ब्याह देने ही के लिए देश ले गये थे । कहिए यह बात है न ?"

अक्षय को यह बात मालूम होने का एक विशेष कारण था। कारण यही कि अक्षयकुमार ही ने रमेश के पिता के मनमें यह आशङ्का उत्पन्न कर दी थी। रमेश कुछ देर तक अक्षयकुमार के मुँह की ओर न देख सका।

अक्षयकुमार ने कहा—"अकस्मात् आपके पिता की मृत्यु होनेसे क्या आप अपने को स्वतन्त्र स्वेच्छाचारी बना डालेंगे? नलिनी की क्या इच्छा है यह भी--"

रमेश अब चुप न रह सका, बोला—"देखिए, अक्षय बाबू, यदि आप मुझको उपदेश देने का अधिकार रखते हो तो दीजिए, मैं सुन लूँगा, किन्तु मेरे पिता के सम्बन्ध की कोई बात बोलने का आपको अधिकार नहीं।"

अक्षय—"बहुत अच्छा। वह बात अभी रहे। पर यह तो कहिए नलिनी से ब्याह करने का अभिप्राय आपका है या नहीं? यह आपको कहना होगा।"

रमेश ने उत्तेजित होकर कहा—"सुनिए अक्षय बाबू! आप घनानन्द बाबू के आत्मीय हो सकते हैं, किन्तु मेरे साथ आपकी उतनी घनिष्ठता नहीं है। कृपा करके आप इस प्रसङ्ग की बात को उठा दीजिए।"

अक्षय—"यदि मेरे ही उठा देने से बात उठ रहे और आप अभी जिस तरह फलाफल पर दृष्टि न देकर बड़े आराम से दिन बिता रहे हैं, ऐसे ही बराबर बिता सकें तब तो कोई बात ही नहीं। किन्तु समाज आपका जैसा है वह आप जानते ही हैं, वह कदापि आपको इस प्रकार स्थिर नहीं रहने देगा।

यद्यपि आप शिक्षित समाज में विशेष प्रतिष्ठित हैं, और व्यावहारिक विषयों पर उतना ध्यान नहीं रखते, तो भी ज़रा सोचने ही से आप समझ सकते हैं कि भद्र पुरुष की लड़की के साथ आप जैसा व्यवहार कर रहे हैं, इससे आप बाहरी लोगों के दुरपवाद से अपने को नहीं बचा सकते। जिन लोगों की आप पर अभी श्रद्धा है, उन्हें जनसमाज में अश्रद्धाभाजन बनाने का यही उपाय है।

रमेश—"मैंने कृतज्ञतापूर्वक आपके उपदेश को स्वीकार किया। मैं अपने कर्तव्य का शीघ्र ही निश्चय कर उसका पालन करूंगा। इसके लिए आप कोई चिन्ता न करें। अब इस सम्बन्ध में अधिक आलोचना करने की ज़रूरत नहीं।"

अक्षय—"यही सही। इतने दिनों के बाद आप अपना कर्तव्य स्थिर करेंगे और उसका पालन करेंगे, इससे मैं अब निश्चिन्त हुआ। मैं आपके साथ किसी बात की आलोचना करना नहीं चाहता। मैं आपके गाने बजाने में बाधा देकर अपराधी बना हूँ—क्षमा कीजिएगा। आप फिर गावें बजावें, मैं जाता हूँ। यह कहकर अक्षय बड़ी शीघ्रता के साथ चला गया।"

रमेश फिर हार्मोनियम बजाने लगा। पर बेसुरा बजाने में रमेश का जी न लगा। वह हार्मोनियम को एक तरफ़ रखकर सिरपर दोनों हाथ दे चारपाई पर चित होकर लेट रहा। बड़ी देर तक वह योंही पड़ा रहा। एकाएक घड़ी में टन्‌टन् कर पाँच बज गये। सुनकर रमेश झट उठ बैठा। उसने क्या कर्तव्य स्थिर किया यह भगवान् जानें, किन्तु पड़ोसी के घर जाकर जो शीघ्र दो गिलास चाय पीना कर्तव्य है, इस विषय में उसके मनमें किसी तरह की दुविधा न रही।

नलिनी ने चकित होकर रमेश से पूछा—"क्या आज आपकी तबीयत कुछ सुस्त है?"

रमेश—"नहीं, ऐसे ही कुछ हरारत सी जान पड़ती है।"

घनानन्द—"शायद खाना अच्छी तरह हज़म नहीं हुआ होगा। पित्त का प्रकोप अधिक हो तो जो गोली मैं रोज़ खाता हूँ उसकी एक गोली तुम भी खाकर देखो। वह ज़रूर कुछ फ़ायदा करेगी।"

नलिनी ने हँसकर कहा—"गोली मत खिलाइए, इतने दिन से आप गोलियों का सेवन कर रहे हैं, मैं उससे कुछ भी तो फ़ायदा होते नहीं देखती।"

घनानन्द—"न विशेष उपकार है तो कुछ अपकार तो नहीं हुआ है। मैंने ख़ुद परीक्षा करके देखा है—अबतक जितने क़िस्म की गोलियाँ खाई हैं, उनमें यह सबसे विशेष गुण-दायक है।

नलिनी—"जब आप कोई नई गोली खाना आरम्भ करते हैं तब कुछ दिन तक वह आपको बहुत ही गुणद जान पड़ती है।

घनानन्द—"तुम किसी दवा पर विश्वास नहीं करतीं। अच्छा अक्षय से पूछ लीजिओ, मेरी दवा से उसे कुछ फ़ायदा हुआ है या नहीं?"

यह बात साबित करने के लिए कहीं गवाह की तलबी न हो, इस डर से वह चुप हो रही। किन्तु साक्षी बिना बुलाये कुछ देर में आप ही उपस्थित हुआ। आते ही उसने घनानन्द

बाबू से कहा—"आपने जो गोली दी थी वह एक और मुझको चाहिए। उससे बड़ा फ़ायदा हुआ है। आज कुछ ताक़त मालूम होती है, बदन फुर्तीला जान पड़ता है।"

घनानन्द बाबू सगर्व दृष्टि से अपनी कन्या के मुँह की ओर देखने लगे।

बारहवाँ परिच्छेद

अन्नदा बाबू ने अक्षय को देकर भी उसे शीघ्र छोड़ना न चाहा। वह भी जाने की ज़्यादह ख़ाहिश ज़ाहिर न करके बीच बीच में रमेश के मुँह की ओर कटाक्षपात करने लगा। रमेश इतने दिन चुपचाप सब कुछ सहता आया है। किन्तु अक्षयकुमार का यह कटाक्ष आज उसे सह्य न हुआ। इससे वह बार बार उद्विग्न लगा। अक्षय का वह कुटिल कटाक्ष उसकी आँखों में काँटे की तरह गड़ने लगा।

पश्चिम जाने का समय समीप आया जान नलिनी का मन आज बहुत प्रसन्न था। उसके हृदय में उत्साह रखने की जगह न थी। उसने मन में सोचा था, "रमेश बाबू के आने पर वह आज उनसे छुट्टी के दिन बिताने के विषय में कुछ विशेष सलाह विचार करेगी।"

सफ़र में कौन कौन पुस्तक पढ़ने के लिए साथ ले जाना होगा, उसका एकतालिका बनाने की बात थी। नलिनी को पूरा विश्वास था," रमेश आज कुछ पहले ही आवेंगे। क्योंकि चाय पीने के समय अक्षय या और किसी के आजने से उसे रमेश के साथ बातचीत करने का मौक़ा नहीं मिलता था।"

रमेश आज और दिन की अपेक्षा भी बिलम्ब करके आया। उसके चेहरे पर चिन्ता का चिह्न झलक रहा था। यह देखकर

नलिनी का उत्साह बहुत कुछ मन्द हो गया। उसने सुयोग पाकर रमेश से पूछा—"कहिए, आज इतनी देर क्यों हुई ?"

रमेश ने मुँह उदास करके कहा—"हाँ आज आने में देरी हो गई।"

नलिनी ने आज नियमित समय से पहले ही वेणी बाँध ली थी और जो नित्य का मामूली सिंगार था सब करके बारबार घड़ी की ओर देख रही थी। किसी काम में आज उसका जी नहीं लगता था। बार बार दर्वाज़े तक जाकर लौट आती थी। कई बार उसके मन में हुआ, "आज उसकी घड़ी तेज़ चलती है। अभी बहुत समय है। अब आये।" जब इस आशा की रक्षा करना एक दम कठिन हो गया तब वह झरोखे पर बैठ कर सिलाई के बहाने जी बहलाने की चेष्टा करने लगी। इसके कुछ ही देर बाद रमेश मुँह उदास किये आया। उसके आने में क्यों विलम्ब हुआ, इसकी कैफ़ियत उसने न दी। जैसे आज जल्द आने का कोई क़ौल ही न रहा हो।"

नलिनी का चित्त स्थिर न था। उसने बड़ी अधीरता के साथ किसी तरह चायपान की लीला समाप्त की।

घर के एक कोने में एक तिपाई पर कुछ पुस्तकें रक्खी थीं।

नलिनी कुछ विशेष भाव के साथ रमेशके चित्तको अपनी ओर खींचती हुई उन पुस्तकों को लेकर घर से बाहर जाने लगी। तब रमेश को चैतन्य हुआ। उसने झट उसके पास जाकर कहा—"इन पुस्तकों को कहाँ लिये जाती हो ?"जो सब पुस्तकें साथ में ले जाने की हों उन्हें आज अलग कर लेती तो अच्छा होता।"

नलिनी के होंठ काँपने लगे। वह उमड़े हुए क्रोध को बड़े कष्ट से रोक कर कम्पित कण्ठस्वर से बोली—"रहो, पुस्तकें अलग करके क्या होगा?" यह कह कर वह बड़ी तेज़ी के साथ चली गई। अक्षयकुमार ने मन ही मन हँसकर कहा—"रमेश बाबू! मालूम होता है, आज आपकी तबीयत वैसी अच्छी नहीं है?"

रमेश ने इसके उत्तर में टूटे स्वर में क्या कहा, यह स्पष्ट न सुना गया। तबीयत अच्छी न होने की बात सुनकर घनानन्द बाबू ने उत्साहपर्वक कहा—"यह तो मैंने रमेश का चेहरा देख कर पहले ही कह दिया था।"

अक्षयकुमार ने मुँह बनाकर हँसते हँसते—"जान पड़ता है रमेश बाबू के सदृश आत्मज्ञानी लोग शरीर पर ध्यान रखना बड़ा ही तुच्छ समझते हैं। वे आध्यात्मिक बल के उपासक हैं। आहार न पचने पर उसकी चिकित्सा करना वे एक प्रकार की असभ्यता समझते हैं।"

घनानन्द बाबू अनेक प्रमाण देकर गम्भीरतापूर्वक इस बात को सिद्ध करने लगे कि ज्ञानी विज्ञानी सबको भोजन न पचने की शिकायत को दूर करना चाहिए।"

रमेश चुपचाप बैठे इन बातों को सुनकर मनही मन जल रहा था।

अक्षय ने कहा—"रमेश बाबू! आप मेरी बात मानिए तो घनानन्द बाबू की गोली खाकर सवेरे जाकर सो रहिए।"

रमेश—"घनानन्द बाबू से आज मेरा एक विशेष प्रयोजन है, उसी की अपेक्षा से बैठा हूँ।"

अक्षयकुमार ने कुर्सी पर से उठकर कहा—"यह बात आपको पहले ही कह देनी चाहिए थी। आप सब बात पेट में रक्खे रहते हैं। जब समय बीत जाता है तब घबरा उठते हैं।" यह कह कर अक्षय चला गया।

रमेश सिर नीचा करके कहने लगा—"घनानन्द बाबू! आपने जो मुझे कुछ दिन से आत्मीय की तरह अपने घर में जाने आने का अधिकार दे रक्खा है, उसे मैं कितना बड़ा सैाभाग्य समझता हूँ, कह नहीं सकता।"

घनानन्द—"क्या कहना है! तुम हमारे योगेन्द्र के बराबर हो। मैं तुमको अपने घर का लड़का न समझूँ तो क्या समझूँ?"

भूमिका तो हुई। इसके बाद रमेश उनसे क्या कहेगा, यह उसकी बुद्धि में न आया। घनानन्द बाबू ने रमेश का पथ सुगम कर देने की इच्छा से कहा—"तुम्हारे जैसे लड़के को घरू बनाने में मेरा ही क्या कम सैाभाग्य है?"

इस पर भी रमेश अपने मन की बात न कह सका।

घनानन्द ने कहा—"देखो रमेश! तुम सबों के बारे में कितने ही आदमी कितनी ही तरह की बातें कहते हैं। वे सब कहते हैं, नलिनी के विवाह की उम्र हो गई, अब वह जैसे तैसे पुरुष की सङ्गति में न रहे। इस पर विशेष ध्यान रखना उचित है।

मैं उनसे कहता हूँ—"रमेश पर मेरा पूरा विश्वास है। वह कभी हम सबों के साथ अनुचित व्यवहार नहीं कर सकता।"

रमेश—"आपसे मेरी कोई बात छिपी नहीं है। यदि आप मुझको योग्य समझें तो—"

घनानन्द बाबू—"यह कहने की आवश्यकता नहीं । हम सब बातों का निश्चय कर चुके हैं । केवल तुम्हारी दैवी दुर्घटना के कारण अब तक दिन स्थिर नहीं कर सके । किन्तु अब विलम्ब करना उचित नहीं है । समाज में इस विषय को लेकर तरह तरह की बातें चल रही हैं । इसलिए जहाँ तक हो शीघ्र इसका निवारण कर देना चाहिए । तुम क्या कहते हो ?"

रमेश—"आप जो आज्ञा देंगे वही होगा । किन्तु सब से पहले आपकी कन्या का मत जानना आवश्यक है ।"

घनानन्द—"हाँ, यह ठीक है । किन्तु उसका मत एक प्रकार से जाना ही है । तो भी कल सवेरे उसका निश्चय कर लें ।"

रमेश—"आपके सोने में विलम्ब हो रहा है । मैं जाता हूँ ।"

घनानन्द—"ज़रा ठहर जाओ । हम चाहते हैं, जबलपुर जाने के पहले ही तुम दोनों का ब्याह हो जाय बड़ा अच्छा हो ।"

रमेश—"वहाँ जाने में तो अब विलम्ब नहीं है ।"

घनानन्द—"नहीं, अब भी दस दिन की देरी है । आगामी रविवार को यदि तुम्हारा ब्याह हो जायगा तो उसके बाद दो तीन दिन यात्रा की तैयारी के लिए समय बच रहेगा । समझे रमेश ! हम इतनी जल्दी नहीं करते—किन्तु इस शरीर का क्या ठिकाना है ।"

रमेश घनानन्द बाबू के प्रस्ताव पर राज़ी हो गया ।

तेरहवाँ परिच्छेद

दशहरे की छुट्टी का दिन क़रीब आया। छुट्टी के दिनों में कमला को स्त्री-विद्यालय में रखने के लिए रमेश ने विद्यालय की स्वामिनी से सब बात पहले ही ठीक कर ली थी।

रमेश ख़ूब तड़के उठकर अकेले मैदान की सूनी सड़क पर टहलते टहलते मन में सोचने लगा, "विवाह के होने बाद वह कमला के सम्बन्ध की सब बातें कमलिनी से कहेगा। पीछे कमला से भी सब बात खोल कर कहने का अवकाश मिलेगा। इस प्रकार सब वृत्तान्त जान लेने पर कमला सगी बहन की भाँति नलिनी के साथ रह सकेगी। किन्तु देश में यह बात ज़ाहिर होने से भारी बखेड़ा मचेगा। इससे बेहतर है कि हज़ारी-बाग़ में जाकर रहूँ और वहीं वकालत भी करूँ।"

रमेश यों मनही मन सोच विचार कर मैदान से लौटकर घनानन्द बाबू के घर गया। एकाएक कमरे की सीढ़ी पर नलिनी से भेंट हुई। और दिन इस तरह भेंट होने पर दोनों में कुछ न कुछ बात ज़रूर होती थी। किन्तु आज रमेश को देखते ही नलिनी का मुँह लाल हो गया। उस लालिमा के भीतर से एक हँसी की झलक उषःकाल की प्रभा की भाँति दीप्त हो उठी। वह मुँह घुमाकर नीचे की ओर देखती हुई बड़ी फुर्ती के साथ घर के भीतर चली गई।

रमेश ने नलिनी से हारमोनियम में जो गत बजानी सीखी थी, लौटकर बड़े ध्यान से बजाने लगा। किन्तु एक ही गत कोई दिन भर तो बजा नहीं सकता। बजाना छोड़ वह एक काव्य की पुस्तक हाथ में लेकर पढ़ने लगा। पर नलिनी के सुदीर्घ प्रेम के सामीप्य तक पहुँचने वाली एक भी कविता उस पुस्तक में न मिली।

इधर नलिनी बेहद ख़ुशी के साथ अपने घर का सारा काम करके ठीक दोपहर के समय शयनगृह का द्वारबन्द करके सिलाई का सब सामान लेकर बैठी। उसके मुँह पर एक अपूर्व प्रसन्नता का भाव भरा था।

चाय पीने के समय से पूर्व ही रमेश कवितावली और हारमोनियम फेंक कर घनानन्द बाबू की बैठक में उपस्थित हुआ। और दिन नलिनी के साथ भेंट होने में कुछ भी देर न होती थी। जैसे वह आप ही रमेश के आने की बाट जोह रही हो। किन्तु आज रमेश ने देखा, चाय घर सूना है। ऊपर जाकर देखा, वहाँ की बैठक भी नलिनी से ख़ाली पड़ी है। नलिनी अब भी अपने शयनागार से बाहर नहीं आई।

घनानन्द बाबू यथासमय मेज़ के पास कुर्सी पर आकर बैठे। रमेश रह रहकर चकित दृष्टि से दरवाज़े की ओर देखने लगा। इतने में किसी के पैर की आहट मालूम हुई। रमेश ने चौंककर देखा, यह आहट अक्षयकुमार की थी। उसने घर में प्रवेश कर बड़ी मित्रता दिखलाता हुआ रमेश से कहा—"मैं आपके घर पर गया था। अफ़सोस! वहाँ आपसे भेंट न हुई!"

यह सुनकर रमेश के मुँह पर कुछ उदासी का भाव छा गया।

अक्षय कुमार ने हँस कर कहा—"रमेश बाबू! आप डरते क्यों हैं?"

मैं आपका कुछ अनिष्ट करने के लिए तो गया ही न था। किसी शुभावसर पर हर्ष प्रकट करना बन्धुबान्धवों का कर्तव्य है। उसी के रक्षार्थ गया था।"

इस बात से घनानन्द बाबू को स्मरण हुआ। नलिनी वहाँ नहीं है। उन्होंने नलिनी को पुकारा। कुछ उत्तर न पाकर वे ऊपर गये और नलिनी से कहा—"यह क्या! अब भी सिलाई से फुरसत न हुई? चाय तैय्यार है। रमेश और अक्षय बड़ी देर से आकर बैठे हैं।"

नलिनी दृष्टि नीचे किये ही बोली—"मेरा चाय पानी ऊपर ही भेज दीजिए। आज बिना सिलाई ख़तम किये न उठूँगी।"

घनानन्द—"यही तुम में भारी दोष है। जब जो तुम्हारे हाथ आता है तब तुम उसी में जी जान से लग पड़ती हो। जब तुम पढ़ती थी, तब तुम्हारे हाथ से पुस्तक नहीं छुटती थी, अब सिलाई करने बैठी हो तो इसी के पीछे सब काम बन्द। नहीं, नहीं, यह न होगा। चलो, नीचे चलकर चाय पिओ।"

यह कहकर घनानन्द बाबू ज़बर्दस्ती नलिनी को नीचे ले आये। वह आई तो, पर किसी की ओर दृष्टि न करके झटपट चाय देने के काम में लग पड़ी।

घनानन्द बाबू ने घबरा कर कहा—"नलिनी ! यह क्या कर रही हो ? मेरे गिलास में चीनी क्यों दे रही हो ? मैं तो चीनी डाल कर चाय नहीं पीता ।"

अक्षय ने व्यङ्ग की हँसी हँसकर कहा—"आज वे अपनी उदारताके आवेग को नहीं रोक सकती । आज वे सबको मीठा परोसेंगी ।"

नलिनी के प्रति अक्षय की यह व्यङ्गोक्ति रमेश को बहुत बुरी लगी । उसने मन ही मन निश्चय किया—"विवाह के बाद अक्षयकुमार के साथ कोई सम्पर्क न रक्खूंगा ।"

अक्षय ने मुसकुराकर रमेश से कहा—"रमेश बाबू ! आप अपने नाम को बदल डालिए ।"

रमेश ने इस दिल्लगी से चिढ़कर कहा—"क्यों ?"

अक्षय ने अखबार खोल कर कहा—"देखिए, आपके नाम का एक विद्यार्थी दूसरे को अपने नाम से परीक्षा दिलाकर पास हुआ था वह एकाएक पकड़ा गया है ।"

नलिनी जानती थी, रमेश किसी के प्रश्न का सहसा उत्तर नहीं दे सकता । इसलिए इतने दिन अक्षय ने रमेश पर जितने वाक्य-बाण प्रहार किये हैं, उसका मुँह तोड़ जबाब नलिनी ही देती आई है । आज भी वह चुप न रह सकी । गूढ़ क्रोध को छिपाकर कुछ हँसती हुई बोली—"आपभी अपने नाम को बदल डालिए, आपके नाम के कितने ही आदमी जेलख़ाने की हवा खाते होंगे ।"

अक्षय—"खेद है, मैं बन्धुभाव से अच्छी सलाह देता हूँ तो आप सब बुरा मानते हैं । अच्छा, अब सारा वृत्तान्त ही कह

सुनाता हूँ। आप तो जानते हैं, मेरी छोटी बहन शारदा गर्ल्स स्कूल में पढ़ने जाती है। उसने कल साँझ को आकर कहा—"भैया! तुम्हारे रमेश बाबू की स्त्री स्कूल में पढ़ती है।"

मैंने कहा—"दुर, पगली! हमारे रमेश बाबू को छोड़कर क्या संसार में दूसरा रमेश बाबू नहीं है।" शारदा ने कहा—"आप जो कहिए, वे अपनी स्त्री पर भारी अन्याय कर रहे हैं। तातील में प्रायः सब लड़कियाँ अपने अपने घर जाती हैं, उन्हों ने अपनी स्त्री को बोर्डिङ्गहाउस में रहने का प्रबन्ध कर दिया है। वह बेचारी रोती है।"

मैंने मन में कहा—"यह तो अच्छी बात नहीं है। शारदा ने एकबार जैसी भूल की थी, वैसी और बालिका भी कर सकती है।"

घनानन्द बाबू ने हँसकर कहा—"अक्षय! तुम पागल की तरह बात कर रहे हो। किसी रमेश की स्त्री स्कूल में पढ़कर रोती हो तो इससे हमारा रमेश अपना नाम क्यों बदलेगा?"

रमेश उदास मुँह किये घर से उठकर चला गया।"

अक्षय उसको जाते देख बोल उठा—"रमेश बाबू! यह क्या? क्या आप नाराज़ होकर तो नहीं जाते? क्या आपके मन में हुआ कि मैं आप पर सन्देह करता हूँ?" यह कहकर वह भी रमेश के पीछे पीछे चल पड़ा।

घनानन्द—"यह क्या हुआ?"

नलिनी रोने लगी! घनानन्द बाबू घबराकर बोले—"नलिनी! तुम क्यों रोती हो?"

वह रोती ही रोती रूँधे स्वर में बोली—"अक्षय बाबू ने भारी अन्याय किया है। वे हमारे घर आकर अच्छे लोगों का क्यों इस तरह अपमान करते हैं?"

घनानन्द—"उसने तो ठट्ठा किया था। उससे इतना रुष्ट होने की क्या आवश्यकता थी?"

नलिनी—"ऐसा ठट्ठा किस काम का?" यह कहकर वह बड़ी तेज़ी के साथ ऊपर चली गई।

कलकत्ते आने के बाद रमेश यत्नपूर्वक कमला के पति का पता लगा रहा था। बहुत छानबीन करने पर धर्मपुष्कर कहाँ है, इसका पता लगा। उसने कमला के मामा तारिणीचरण के नाम से एक पत्र लिखा।

रमेश ने आज सबेरे ही उस पत्र का जवाब पाया है। तारिणीचरण लिखते हैं—दुर्घटना के अनन्तर उनके जामाता श्रीकमलनयन की कोई ख़बर नहीं मिली। रङ्गपुर में वे डाक्टरी करते थे। वहाँ चिट्ठी लिखकर तारिणी बाबू ने जाना है। वहाँ भी आज तक किसी को उनकी कुछ ख़बर नहीं मिली। उनका जन्मस्थान कहाँ है, यह उन्हें मालूम नहीं।"

कमला का स्वामी कमलनयन जीता है, यह आशा रमेश के मन से एक दम दूर हो गई।

आज सबेरे और भी कितनी ही चिट्ठियाँ रमेश के पास आई थीं। विवाह की ख़बर पाकर उसके अन्तरङ्ग मित्रों ने उसे पत्रद्वारा बधाई दी है। किसी ने दावत देने की बात जताई है। किसी ने इतने दिन इस बात को छिपा रखने के कारण रमेश को उलाहना दिया है। किसी ने मीठे तिरस्कार की बातों से उसे उस पर

अनुरोध प्रगट किया है, और किसी ने अपने मनका आनन्द प्रकट करने के हेतु अभिन्दन-पत्र दिया है।"

इसी समय घनानन्द बाबू के नौकर ने एक लिफ़ाफ़ा रमेश के हाथ में दिया। अक्षर पहचान कर रमेश की छाती धड़क उठी।

पत्र नलिनी के हाथ का लिखा था। रमेश ने समझा, अक्षय की बात सुनकर शायद उसके मन में सन्देह उत्पन्न हुआ है और उसी सन्देह के निवारणार्थ उसने मुझको पत्र लिखा है।" रमेश ने चिट्ठी खोल कर देखी। उसमें यही कई बातें लिखी थीं।

"कल अक्षय बाबू ने आपके साथ भारी अन्याय का काम किया। मैंने सोचा था, "कल आप सवेरे ही आवेंगे, क्यों नहीं आये? अक्षय बाबू की बात से आप उदास न हों। मैं तो कभी उनकी बात पर कान नहीं देती। आज आप सवेरे आने की कृपा करेंगे। मैं आज सिलाई बन्द कर रक्खूँगी।"

"अक्षय की बात से नलिनी के मन में सन्देह उत्पन्न न हो कर उसके कोमल हृदय में गहरी चोट लगी, "यह सोच कर रमेश की आँखों में आँसू भर आये। उसके मन में पूरा विश्वास हुआ कि नलिनी कल ही से मेरा मनोदुःख शान्त करने के लिए बड़ी व्यग्रता के साथ उपाय ढूँढ़ रही है। मालूम होता है, उसने सारी रात जाग कर भोर किया है। किसी तरह उसने सवेरे पहर को भी बिताया। आख़िर जब उससे न रहा गया तब हार कर उसने यह पत्र मुझको लिखा है।"

रमेश ने पहले ही इस बात को सोच रक्खा था कि नलिनी से कमला के सम्बन्ध की सब बातें खोलकर कह देना आवश्यक है। किन्तु कल की घटना से अब वह बात कहनी कठिन हो गई। अब नलिनी यही समझेगी, कि अपराध प्रकट होने पर दोषाच्छादन की चेष्टा हो रही है। सिर्फ़ यही नहीं, अक्षय की जो इस बात से जीत होगी, यह और भी दुःसह होगा। रमेश सोचने लगा, "कमला का स्वामी कोई दूसरा रमेश है, निश्चय अक्षय के मन में यही धारणा है—नहीं तो वह अब तक इस तरह बैठा नहीं रहता। महल्ले भर में वह इस बात को लेकर भारी हल्ला उठा देता। इसलिए अभी इसका कोई उपाय करना ठीक है।"

रमेश इस तरह सोच ही रहा था, इतने में डाक से एक और चिट्ठी आई। रमेश ने खोलकर देखा, वह चिट्ठी स्त्री-विद्यालय की स्वामिनी की भेजी है। उन्होंने लिखा है, "कमला बहुत अधीर हो रही है। इस अवस्था में तातील में उसका यहाँ रहना मैं अच्छा नहीं समझती। आगामी शनिवार को स्कूल होकर तातील होगी। उस दिन आपको उसे विद्यालय से घर ले जाने का प्रबन्ध कर देना बहुत ज़रूरी है।"

आगामी शनिवार को कमला को विद्यालय से लाना और आगामी रविवार को रमेश का विवाह—यह विषम घटना एक साथ उपस्थित हुई!

"रमेश बाबू! आप को माफ़ करना होगा।" कहता हुआ अक्षय ने घर के भीतर प्रवेश किया और कहा—"एक साधारण हँसी की बात से आप इतना क्रोध करेंगे, अगर मैं यह पहले से जानता होता तो कभी आपसे ऐसी बात न कहता। हँसी दिल्लगी की बात में कुछ सत्य का अंश रहने ही से लोग

चिढ़ते हैं, किन्तु जो बात एकदम अमूलक है, उसके कारण आपने सब के सामने क्यों इतना क्रोध किया? घनानन्द बाबू कल से मेरे ऊपर नाराज़ हैं। नलिनी ने मुझसे बोलना ही छोड़ दिया है। आज सवेरे मैं उनके यहाँ गया था। घनानन्द बाबू मुझको आते देख उठ कर चले गये। आप ही कहिए, मैंने ऐसा कौन भारी अपराध किया था? "जिससे आप लोग मुझसे इतने रुष्ट हैं।"

रमेश—"इन बातों का विचार फिर कभी होगा। अभी आप मुझको क्षमा करें। मुझे एक भारी काम है।"

अक्षय—"मालूम होता है आप रोशनचौकी की साई देने चले हैं। अब समय बहुत कम बच रहा है। मैं आपके शुभकार्य में बाधा नहीं दूँगा। लीजिए, मैं जाता हूँ।"

अक्षय के चले जाने पर रमेश घनानन्द बाबू के यहाँ गया। घर में पाँव रखते ही नलिनी के साथ उसकी भेंट हुई। आज रमेश ज़रूर सवेरे ही आवेंगे, यह कमलिनी को पूरा विश्वास था, इसी से वह पहले ही से तैयार हो बैठी थी। उसने सिलाई के सब सामान को रुमाल में बाँध कर मेज़ पर रख दिया था। पास में हारमोनियम बाजा था। उसकी इच्छा थी कि रमेश बाबू आवें तो कुछ गाना बजाना हो।

रमेश को घर में आते ही कमलिनी के मुँह पर प्रसन्नता की झलक दिखाई दी, किन्तु वह तुरन्त ही छिप गई। तब रमेश ने और कुछ न कह कर पहले यही पूछा—"घनानन्द बाबू कहाँ हैं?"

नलिनी—"ऊपर के कमरे में हैं। क्यों? क्या उन से कोई काम है? वे चाय पीने के समय तो यहाँ आवेंहीगे।"

रमेश—"नहीं, मुझे एक ज़रूरी काम है। विलम्ब करने से ठीक न होगा।"

कमलिनी—"तो जाइए! वे उसी घर में हैं।"

रमेश वहाँ से चला गया। कार्य के आगे आज प्रेम को किनारे रहना पड़ा।

शरद् के निर्मल समय ने ठण्डी साँस भर कर मानो आज अपने आनन्द-भाण्डार का स्वर्णमय सिंह दर्वाज़ा बन्द कर दिया। नलिनी हारमोनियम के पास से अपना आसन खिसका कर मेज़ के पास ले गई और मनको स्थिर करके सिलाई करने लगी। सिलाई में उसका जी न लगा। वह मनही मन रोने लगी। उसकी आँखों में आँसू उमड़ आये।

उधर रमेश का कार्य भी शीघ्र शेष न हुआ। कार्य ने राजा की भाँति अपना पूरा समय लिया। प्रेम कङ्गाल की भाँति बाहर बैठा रहा।

चौदहवाँ परिच्छेद

रमेश घनानन्द बाबू के शयनगृह में गया। घनानन्द बाबू मुँह पर समाचारपत्र रख आरामकुर्सी पर लेटे हुए सुख की नींद ले रहे थे। रमेश के खाँसने का शब्द सुनकर घनानन्द चौंककर जाग उठे। अख़बार को मोड़कर बोले—"क्या तुमने ख़बर के काग़ज़ में देखा है, इस साल हैज़े से कितने लोग मरे हैं?"

रमेश ने उनके प्रश्न का कुछ उत्तर न देकर कहा—"विवाह कुछ दिन के लिए रोक रखना होगा। मुझे एक बहुत ज़रूरी काम आ पड़ा है।"

घनानन्द बाबू के दिमाग़ से शहर की मृत्यु का हिसाब एकदम उड़ गया। वे कुछ देर तक क्षुब्ध हो रमेश के मुह की ओर देखकर बोले—"यह क्या? विवाह का निमन्त्रण लोगों को दिया जा चुका।"

रमेश—"विवाह का दिन इस रविवार के आठवें रविवार से बदल दिया जाय, और इसकी सूचना आज ही लोगों को दे दी जाय।"

घनानन्द बाबू—"रमेश! तुमने तो मुझे निरुत्तर कर दिया। यह क्या मुक़द्दमा है, जो तुम अपनी सुविधा के अनुसार तारीख बढ़ाकर ब्याह को मुलतवी रख सकोगे? तुम्हारा कौन ऐसा प्रयोजन है? कहो तो मालूम हो।

रमेश—"प्रयोजन बहुत बड़ा है। विलम्ब करने से काम न चलेगा।"

घनानन्द बाबू का मुख विवर्ण हो गया। उन्होंने टूटे स्वर में कहा—"विलम्ब करने से काम न चलेगा।" अच्छा, बहुत अच्छा, आप ख़ुशी से अपना काम कीजिए! निमन्त्रण लौटाने की व्यवस्था जो तुम्हारी बुद्धि में अच्छी जँचे करो। लोग जब मुझसे पूछेंगे तो मैं यही कहूँगा कि "मैं कुछ नहीं जानता। उनका कैसा प्रयोजन है यह वही जानें। और कब उन्हें सुभीता होगा, यह भी वही बता सकते हैं।"

रमेश कुछ उत्तर न दे सिर झुकाकर बैठ रहा। घनानन्द बाबू ने कहा—"नलिनी को यह हाल मालूम हुआ?"

रमेश—"नहीं, वे अब तक कुछ नहीं जानतीं।"

घनानन्द—"उससे यह हाल कह देना ज़रूरी है। क्योंकि अकेले तुम्हारा ही ब्याह तो होगा नहीं।"

रमेश—"पहले आप ही से कहने आया हूँ।"

घनानन्द बाबू ने नलिनी को पुकारा। वह तुरन्त घरमें आकर बोली—"क्या है?"

घनानन्द—"रमेश कहता है, उसे एक निहायत ज़रूरी काम आ पड़ा है। इससे वह अभी ब्याह न करेगा।"

नलिनी ने उदासी भरी दृष्टि से एकबार रमेश के मुँह की ओर देखा। रमेश अपराधी की भाँति चुपचाप बैठा रहा।

नलिनी को यह ख़बर इस तरह दी जायगी, यह रमेश को न जान पड़ा। और न वह उसे इस तरह ख़बर देना चाहता था।

एकाएक यह अप्रिय वार्ता इस तरह सुनने से नलिनी के हृदय में जो मर्मान्तिक वेदना हुई वह रमेश समझ गया। किन्तु जो तीर हाथ से एकवार निकल गया, वह क्या फिर लौट सकता है? रमेश ने देखा, यह तीक्ष्णबाण नलिनी के हृदय में घुस गया।

अब उसके इस नये घाव पर मरहम पट्टी चढ़ाने का समय न रहा। जो बात मुँह से निकल गई वह अवश्य ही होगी। विवाह रोक रखना होगा। रमेश को कोई ज़रूरी काम है। क्या काम है, सो भी वह किसी से कहना नहीं चाहता। जब मूल का पता नहीं तब उस विषय पर और टीका टिप्पणी अभी हो ही क्या सकती है?

घनानन्द ने नलिनी की ओर देखकर कहा—"सब काम तुम सबों के हाथ है। अब तुम सब सोच कर जैसा उचित समझो करो।"

नलिनी ने सिर नीचा करके कहा—"मैं इस विषय में कुछ नहीं जानती।" यह कहकर वह घरसे बाहर हो गई।

घनानन्द मुँह पर फिर अख़बार रख सो रहने का बहाना करके सोचने लगे। रमेश चुपचाप बैठा रहा।

रमेश कुछ देर तक उसी तरह मन मारे बैठा रहा। जब घनानन्द बाबू से कुछ उत्तर पाने की आशा न रही तब वह उठ कर चला गया। बड़े कमरे में जाकर देखा, नलिनी खिड़की के पास चुप खड़ी है। उसकी दृष्टि के आगे निकटवर्ती सड़क की छुट्टी का मनोहर दृश्य खड़ा है, न मालूम वह मनही मन क्या सोच रही है।

रमेश को उसके पास जाने का साहस न हुआ । पीछे कुछ देर तक स्थिरदृष्टि से वह उसके मुँह की ओर देखता रहा। शरद् समय के अपराह्न की विशद प्रभा में वातायनवर्तिनी इस स्तब्ध मूर्ति ने रमेश के हृदय में एक चिरस्थायी चित्र अङ्कित कर दिया । उस कोमल कपोल की वह स्निग्धता, पीठ पर लुढकती हुई वह सयत्न रचित काली नागिन सी कुटिल चोटी, गले में सोने के चन्द्रहार का सुन्दर आभास, बाँये कन्धे के नीचे लटकते हुए आँचल का टेढ़ा छोर ये सब फ़ोटो की तरह उसके हृदयपट पर ज्यों के त्यों अङ्कित हो गये ।

रमेश धीरे धीरे नलिनी के पास आकर खड़ा हुआ । नलिनी रमेश को अपेक्षा सड़क पर जाते हुए लोगों की ओर मानो विशेष उत्सुकता से देखने लगी । रमेश ने रूँधे कण्ठ-स्वर से कहा—'आपसे मेरी एक प्रार्थना है ।"

रमेश के कोमल कण्ठ स्वर ने नलिनी के व्यथित हृदय को और भी मसोस डाला । वह बेचारी तीव्रवेदना के आघात को किसी तरह सहकर रमेश की ओर मुँह करके खड़ी हुई । रमेश ने कहा—"तुम मुझ पर कभी अविश्वास न करो ।" रमेश ने इसके पहले कभी नलिनी को 'तुम' न कहा था ।

नलिनी, तुम मुझसे सच सच कहो, कभी मुझपर अविश्वास तो न करोगी ? मैं भी अन्तर्यामी भगवान् को साक्षी रख कर कहता हूँ, मैं कभी तुम्हारे पास अविश्वासी न बनूँगा ।"

इससे अधिक रमेश के मुँह से और कोई बात न निकली। उसका गला रुक गया । आँखों में आँसू भर आये । तब नलिनी भी स्नेह और करुणाभरी दृष्टि से रमेश का मुँह देखने लगी ।

इसके अनन्तर नलिनी की आँखों से आँसू की धारा बह कर उसके दोनों गालों को भिगोती हुई नीचे गिरने लगी। देखते ही देखते उस बन्द खिड़की के पास स्वर्गीय शान्ति छा गई। प्रेमिक चित्रवत् खड़े रहे। किसी के मुँह से कोई शब्द न निकला।

कुछ देर तक दोनों की यही दशा रही। पश्चात् धीरज धरकर रमेश ने बड़े साहस से कहा—"मैंने एक सप्ताह के लिए क्यों विवाह रोक रखने का प्रस्ताव किया है, क्या इसका कारण तुम जानना चाहती हो?"

नलिनी ने सिर हिलाकर कहा—"मैं नहीं जानना चाहती हूँ।"

रमेश ने कहा—"विवाह हो जाने पर मैं सब बात तुमसे खोल कर कहूँगा।"

इस बात से कमलिनी का मुँह कुछ लाल हो गया।

आज भोजन के उपरान्त जब नलिनी रमेश से मिलने की आशा से उल्लासपूर्वक शृङ्गार कर रही थी, तब उसके मनमें भाँति भाँति के भाव उत्पन्न हो रहे थे। वह मनही मन कल्पना के द्वारा अनेक हास्य विनोद, अनेक गुप्त परामर्श और अनेक सुख संभोग की आशा कर रही थी। किन्तु यह जो थोड़े ही समय में दोनों के हृदय के बीच विश्वास की माला का फेर बदल हो गया, वह जो आँखों से आँसू की धार बह चली, दोनों जो एक अपूर्व भाव भरी दृष्टि से परस्पर मुखावलोकन करने लगे, दोनों जो कुछ देर तक कुछ न बोले और चित्रवत् खड़े रहे, इस अवस्था का विशेष सुख, गम्भीर शान्ति और धैर्य्य का उसने कभी स्वप्न में भी अनुभव न किया था, इस दशा
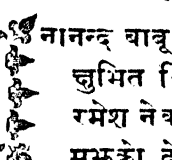
का चित्र वह कभी कल्पना के द्वारा अपने हृदय-पट पर न खींच सकी थी।

नलिनी ने कहा—"आप एकबार पिताजी के पास जाइए, वे कुछ नाराज़ हो गये हैं।

रमेश बड़ी ख़ुशी के साथ सभी आघात सङ्घात सहने के लिए छाती मज़बूत करके घनानन्द बाबू की बैठक की ओर चला।

पन्द्रहवाँ परिच्छेद

घनानन्द बाबू ने रमेश को फिर घर में आते देख क्षुभित चित्त से उसके मुँह की ओर निहारा। रमेश ने कहा—"यदि निमन्त्रण की फ़िहरिस्त मुझको दें तो मैं आज ही ब्याह की तारीख़ बदलने की बात पत्र द्वारा सबको सूचित कर दूँ।"

घनानन्द बाबू—"तो क्या तारीख़ बदलने ही की बात स्थिर रही?"

रमेश—"हाँ! और कोई उपाय नहीं सूझता।"

घनानन्द—"अच्छा, तो देखो बाबू! मैं इस झंझट से अलग हो जाता हूँ। जो कुछ प्रबन्ध करना हो सो तुम आपही करो। मैं लोगों में अपनी हँसी न कराऊँगा। यदि विवाह को अपनी मर्ज़ी के मुताबिक़ तुम बच्चों का खेल समझते हो तो मेरे सदृश बूढ़े व्यक्ति को इस काण्ड के बीच न पड़ना ही अच्छा है। यह लो अपने निमन्त्रण की सूची। इन सब कामों में मैंने कितने ही रुपये ख़र्च कर डाले हैं, वे बहुधा व्यर्थ ही होंगे। इस तरह बार बार रुपया पानी में फेंकूँगा। इतना धन मेरे पास नहीं है।"

रमेश सब ख़र्च और प्रबन्ध का भार अपने ऊपर लेने को तैयार हुआ। हाथ में सूची लेकर जब वह जाने लगा तब घनानन्द ने उससे पूछा—"कहो रमेश! विवाह होने के बाद तुम कहाँ रहोगे? यहाँ रह कर प्रैक्टिस करोगे या कहीं अन्यत्र? इसका कुछ निश्चय किया है?"

रमेश—"यहाँ रहने का तो विचार नहीं है। पश्चिम में एक अच्छी जगह पसन्द करके रहूँगा।"

घनानन्द—"ठीक है, पच्छिम ही अच्छा है। इटावा तो ख़राब जगह नहीं है। वहाँ की आब हवा बहुत अच्छी है। खाना जल्द हज़म होता है। मैं वहाँ एक महीने तक था। उसी एक महीने में मेरे भोजन का परिमाण दुगना बढ़ गया था। देखो रमेश! संसार में मेरे यही एक मात्र लड़की है—मैं उसके पास न रहूँगा तो वह सुखी न रहेगी। मैं भी निश्चिन्त न रह सकूँगा। इसी से मेरी इच्छा है कि तुम अपने लिए एक स्वास्थ्यकर जगह तजवीज़ करो।"

घनानन्द बाबू रमेश को एक प्रकार से अपराधी मान उस पर बड़ी बड़ी हुकूमतें चढ़ाने लगे। उस समय यदि वे इटावा न कह कर सूरत या मुलतान का नाम लेते तो भी वह उसी को निर्विवाद स्वीकार कर लेता। उसने कहा—"जो आपकी आज्ञा, मैं इटावा में रह कर ही प्रैक्टिस करूँगा।" यह कह कर रमेश निमन्त्रण के दिन बदलने का काम अपने हाथ में ले वहाँ से विदा हुआ।

रमेश के जाने के कुछ ही काल अनन्तर अक्षय को घर के भीतर पैर रखते देख घनानन्द ने कहा—"रमेश ने अपने व्याह का दिन एक सप्ताह आगे बढ़ा दिया है।"

अक्षय—"नहीं, नहीं, यह आप क्या कहते हैं! ऐसा कभी हो सकता है? परसों विवाह हो ही गा।"

घनानन्द—"हो जाना ही उचित था। साधारण लोग भी ऐसा नहीं करते। किन्तु आज कल तुम लोगों की जैसी कुछ रीति नीति देखता हूँ, उससे सब होना सम्भव है।"

अक्षयकुमार मुँह झुका कर बड़े आडम्बर के साथ चिन्ता करने लगा। कुछ देर के बाद उसने कहा—"जिसे आप सत्पात्र ठहरा चुके हैं, उसके सम्बन्ध में आपने अभी तक कुछ जाँच नहीं की। दोनों आँखे मूँदकर बैठे हैं। कहिए तो, जिसके हाथ में आप लड़की सदा के लिए देना चाहते हैं, उसके सम्बन्ध की सब बातों की खोज खबर रखना आपको उचित है या नहीं? क्या जानेंक्या करते क्या हो जाय। वे स्वर्ग ही के देवता क्यों न हों, परअपनी ओर से सावधान होकर रहने में क्या हर्ज है?"

"सहसा करि पाछे पछताहीं। कहैं वेद बुध ते बुध नाही।"

घनानन्द—"यदि रमेश के सदृश सुशील लड़के पर भी सन्देह किया जाय तो संसार में विश्वास किसका किया जाय?"

अक्षय—"अच्छा, रमेश बाबू ने जो ब्याह का दिन बढ़ाया है, इसका उन्होंने कुछ कारण भी बताया?"

घनानन्द बाबू सिर पर हाथ फेरते हुए बोले—"नहीं, कारण तो कुछ नहीं बताया। पूछने पर कहा, एक आवश्यक कार्य है।"

अक्षय ने मुँह फेर कर व्यङ्ग की हँसी हँसकर कहा—"शायद उसने आपकी लड़की से इसका कारण कहा होगा।"

घनानन्द—"सम्भव है।"

अक्षय—"नलिनी को एकबार बुलाकर पूछ लेने में क्या हर्ज है?"

घनानन्द—"कोई हर्ज नहीं।" उन्होंने उच्चस्वर से नलिनी को पुकारा।"

नलिनी अक्षयकुमार को देखकर अपने पिता के पास आकर इस तरह खड़ी हुई जिसमें अक्षयकुमार की दृष्टि उसके मुँह पर न पड़े।

घनानन्द ने नलिनी से पूछा—"विवाह का दिन जो एका-एक इस तरह बढ़ गया, क्या रमेश ने उसका कुछ कारण तुमसे नहीं कहा?"

नलिनी ने सिर हलाकर जताया—"नहीं।"

घनानन्द—"तुमने उससे कुछ न पूछा?"

नलिनी—"नहीं।"

घनानन्द—"बड़े आश्चर्य का विषय है। जैसा रमेश है, वैसी ही तुम भी भोली भाली हो। उसने कहा, "उसे ब्याह करने की फुरसत नहीं।" तुमने कहा—"अच्छा, क्या हर्ज है! न अब सही आगे ही होगा।" क्यों नहीं होगा, इसका कारण किसी को मालूम नहीं।"

अक्षयकुमार ने नलिनी का पक्ष लेकर कहा—"एक व्यक्ति जब जानबूझ कर कारण छिपा रहा है तब उस विषय में उससे कुछ पूछना क्या उचित है? अगर वह बात कहने योग्य होती तो रमेश बाबू आप ही कहते।"

नलिनी का मुँह लाल हो गया। उसने कहा—"मैं इस विषय में बाहर के लोगों से कुछ कहना वा सुनना नहीं चाहती। जो कुछ है उससे मेरे मन में कोई क्षोभ नहीं।" यह कहकर नलिनी घर से बाहर होगई।

अक्षयकुमार ने सूखे मुँह से कुछ हँसी हँसकर कहा—"संसार में सबसे अधिक कलङ्क का भय बन्धु के कार्य ही में है। इसीलिए बन्धुत्व की मर्यादा को मैं विशेष करके मानता हूँ। आप लोग भले ही मुझसे घृणा कीजिए, गाली दीजिए, किन्तु मैं रमेश पर सन्देह करना ही बन्धु का कर्तव्य समझता हूँ। जहाँ आप लोगों की विपद् की सम्भावना है, वहाँ मैं स्थिर नहीं रह सकता। यही एक मुझ में भारी दोष है। इसे मैं ख़ुद क़बूल करता हूँ। जो कुछ हो, योगेन्द्र तो कल आवेंहीगे। यदि वे भी सब बात समझ बूझ कर चुप हो रहेंगे तो फिर इस विषय में मैं कुछ बोलने का साहस न करूँगा।"

रमेश के शील-स्वभाव की जाँच करने का समय उपस्थित है—यह घनानन्द बाबू न जानते थे, सो नहीं, किन्तु जो बात परदे के भीतर छिपी है, उसे बलपूर्वक बाहर निकालने के हेतु वे दिमाग़ को ख़फ़ा करना व्यर्थ समझते थे।

अक्षयकुमार पर उन्हें क्रोध हुआ। उन्होंने कहा—"अक्षय! तुम्हारा चित्त बड़ा ही संशयालु है। तुम हमेशा सन्देह से भरे रहते हो। बिना प्रमाण पाये तुम क्यों—"

अक्षय अपने को दबाना जानता था। किन्तु बारबार धक्का खाते खाते आज उसका धैर्य लुप्त होगया। उसने बड़ी उत्तेजना के साथ कहा—"देखिए घनानन्द बाबू! मैं कितने दोषों का भाण्डार बना हूँ। मैं अच्छे २ लोगों से ईर्ष्या करता हूँ, साधु सच्चरित्र लोगों पर सन्देह करता हूँ। भले घर की लड़कियों को फ़िलोसफी पढ़ाने योग्य विद्या मेरे पास नहीं है। दूसरे मैं उन सबों के साथ काव्य की आलोचना करने की स्पर्धा भी

नहीं रखता। मैं साधारण दस लोगों में ही परिचित तथा गण्य समझा जाता हूँ। परन्तु मैं बहुत दिनों से आपका अनुरागी और आपका दास हूँ। रमेश बाबू के साथ मेरी किसी विषय में बराबरी नहीं हो सकती। किन्तु एक बात मैं गौरव के साथ कहता हूँ। "आप के पास किसी दिन मुझे मुँह न छिपाना पड़ेगा आपके पास में अपनी सारी दीनता दिखाकर कुछ माँग ले सकता हूँ, किन्तु सेंध काटकर चोरी करने का स्वभाव मेरा नहीं है। इस बात का मतलब क्या है, यह कल ही आप लोगों को मालूम हो जायगा।"

सोलहवाँ परिच्छेद

रमेश को निमन्त्रित व्यक्तियों के पास चिट्ठी रवाना करते करते रात हो गई। रमेश सो न सका। नींद न आई। उसके हृदय में गङ्गा-यमुना की भाँति उजले और काले दो रङ्ग की चिन्ता नदी बड़े वेग से प्रवाहित हो रही थीं। दोनों नदियों की तरङ्ग एक साथ मिलकर तटस्थ धैर्य्य रूपी वृक्ष की जड़ पर आघात पहुँचा रही थी।

बार बार बड़ी बेचैनी के साथ करवटें बदल कर वह उठ बैठा। खिड़की के पास खड़े होकर उसने देखा—"सामने जन-शून्य गली में एक ओर घरों की छाँह और एक ओर स्वच्छ चाँदनी की छटा शोभित है।

रमेश चुपचाप खड़ा रहा। जो नित्य है, जो शान्त है, जो विश्वव्यापी है, जो एक है, जिसके भीतर द्विविधा का गन्ध नहीं, रमेश की समस्त अन्तःप्रकृति विगलित होकर उसमें मिल गई। जिस शब्दविहीन, सीमा विहीनमहालोक के नेपथ्य से, अनादि-काल से जन्म और मृत्यु, कर्म, और विश्राम, आरम्भ और अवसान, किसी अश्रुत सङ्गीत के विचित्र तालके साथ साथ संसार रूपी रङ्गभूमि में प्रवेश कर रहा है—रमेश ने उसी प्रकाश और अन्धकार रहित स्थान से स्त्री-पुरुष के युगल प्रेम को नक्षत्र दीपों से आलोकित इस ब्रह्माण्ड के भीतर आविर्भूत होते देखा।

तब रमेश धीरे धीरे छत के ऊपर गया। घनानन्द बाबू के घर की ओर देखा। सर्वत्र सन्नाटा छाया है। केवल छाया और चन्द्रमा के प्रकाश का सम्मिलनमात्र दिखाई देता है।

अहा! यह क्या आश्चर्य है! इस जनपूर्ण नगर के भीतर इस साधरण घर में मानवी के रूप में एक कल्पना की मूर्ति खड़ी है। इस राजधानी में कितने ही छात्र हैं, कितने ही वकील हैं, कितने विदेशी और कितने ही नगर-निवासी हैं। उन सबों में रमेश के सदृश एक साधारण व्यक्ति ने एक दिन आश्विन के पिछले पहर की धूप में खिड़की के पास एक बालिका के समीप चुपचाप खड़ा होकर जीवन को और जगत् को एक अपरिसीम आनन्दमय रहस्य के भीतर भासमान देखा। अहो! वह क्या अद्भुत दृश्य था! हृदय के भीतर आज यह क्या आश्चर्य है! हृदय के बाहर आज यह क्या अद्भुत चमत्कार है!

बहुत रात तक रमेश छत ही पर घूमता रहा। चन्द्रास्त होने पर वह छत से नीचे उतर आया, देखा, अन्धकार ने अपना साम्राज्य चारों ओर फैला दिया है।

रमेश का थका हुआ शरीर शरद के शीत से सिहर उठा। हठात् रह रह कर एक आशङ्का उसके हृदय को मसोसने लगी। उसे स्मरण हो आया, कल जीवन के रणक्षेत्र में फिर संग्राम करने के लिए बाहर होना पड़ेगा। यद्यपि इस आकाश में चिन्ता का चिह्न नहीं, यद्यपि रात निस्तब्ध और शान्त थी, और विश्व की प्रकृति इस अगणित नक्षत्रलोक के चिरकर्म के भीतर चिर विश्राम में लीन थी, तो भी मनुष्यों की चहलपहल और कलह-विवाद का बाज़ार गर्म था। समस्त जनसमाज सुख-दुःख और बाधा विघ्न का झोंका खा रहे हैं। एक ओर अनन्त ब्रह्माण्ड की

वह शाश्वतिक शान्ति और एक ओर संसार का यह रोज़ रोज़ का झमेला । दोनों एक ही समय में एक साथ कैसे रह सकते हैं । ऐसी चिन्तित अवस्था में भी रमेश के मन में इस प्रश्न का उदय हुआ । कुछ देर पहले रमेश ने जो विश्वलोक के रङ्गालय में प्रेम की एक अखण्ड शान्तमूर्ति देखी थी, उसको क्षणभर के बाद संसार के संघर्ष और जीवन की जटिलता से पग पग में क्षुब्ध और क्षीण होते देखा । इसमें कौन सत्य और कौन मिथ्या !

सत्रहवाँ परिच्छेद

दूसरे दिन सवेरे की गाड़ी से योगेन्द्र पश्चिम से लौट आया। आज शनिवार है। कल रविवार को नलिनी के ब्याह की बात थी। किन्तु योगेन्द्र ने घनानन्द बाबू के मकान के फाटक के पास आकर उत्सव का कोई चिह्न नहीं देखा। योगेन्द्र मन ही मन सोचता आता था कि अब उसके घर में मङ्गलाचार का आरम्भ हुआ होगा। तोरण बन्दनवार से दरवाज़ा अलंकृत हुआ होगा। नज़दीक आकर देखा, पास के उत्सवविहीन घरों के साथ उनके घर का कोई प्रभेद नहीं है। उसे भय हुआ, शायद दो में कोई एक बीमार होगा। कमरे में प्रवेश करके देखा, चाय के टेबुल पर उसके लिए भोजन की सब सामग्री प्रस्तुत है, और घनानन्द बाबू आधा गिलास चाय पीकर गिलास को सामने रख अखबार पढ़ रहे हैं।

योगेन्द्र ने आते ही पूछा—"नलिनी अच्छी है?"

घनानन्द—हाँ, अच्छी है।"

योगेन्द्र—"ब्याह का क्या हुआ?"

घनानन्द—"अगले रविवार को होगा।"

योगेन्द्र—"यह क्यों?"

घनानन्द—"यह तुम अपने मित्र से जाकर पूछो। रमेश ने सिर्फ़ हम लोगों से इतना ही कहा है कि उसे एक विशेष कार्य है। इस रविवार को ब्याह बन्द रखना होगा।"

योगेन्द्र ने अपने दुर्बलहृदय पिता पर मन ही मन रुष्ट हो कर कहा—"मेरे न रहने से आप लोगों के कामों में बड़ी गड़-बड़ होती है। रमेश को ऐसा काम ही कौन होगा? वह तो स्वाधीन है। उसका ऐसा कोई आत्मीय भी यहाँ नहीं है, जो उसे भला बुरा कह कर बहकावेगा। यदि उसके घर पर कोई ज़रूरी काम रहता तो उसके कहने में बाधा ही क्या थी? आपने रमेश को क्यों इस तरह लापरवाही के साथ छोड़ दिया?"

घनानन्द—"अच्छा, अभी तो वह कहीं गया नहीं है, तुम्हीं जाकर उस से क्यों नहीं पूछ लेते?"

योगेन्द्र तुरन्त एक गिलास गरम चाय पीकर घर से बाहर हुआ।

घनानन्द बाबू ने कहा—"योगेन्द्र! इतनी जल्दी क्या है? तुमने कुछ खाया पिया भी नहीं?"

यह बात योगेन्द्र के कान तक न पहुँची। वह रमेश के घर में घुस कर सीढ़ियों पर खटाखट पैर रखता हुआ सीधे ऊपर चला गया। वहाँ जाकर उसने "रमेश, रमेश" कह कर कई बार पुकारा, पर कहीं से कोई उत्तर न आया। ख़ूब खोज कर देखा। रमेश सोने के घर में नहीं, बैठने के घर में नहीं, छत पर नहीं, नीचे की कोठरी में नहीं, तब वह गया कहाँ? ज़ब रमेश का कुछ पता न लगा तब उसने नौकर को बुला कर पूछा—"बाबू कहाँ हैं?"

नौकर—"बाबू आज सवेरे से कहीं बाहर गये हैं?"

योगेन्द्र—"कब आवेंगे ?"

नौकर—"बाबू अपना कुछ ज़रूरी सामान लेकर गये हैं। कह गये हैं, वे चार पाँच दिन में लौटेंगे। कहाँ गये हैं, यह मुझे मालूम नहीं।"

योगेन्द्र गम्भीर चिन्ता में निमग्न होकर वहाँ से वापस आया और चाय टेबुल के पास बैठा। घनानन्द बाबू ने पूछा—"क्या हुआ ?"

योगेन्द्र ने क्रुद्ध होकर कहा—"होगा क्या ? जिसके साथ आज के प्रात ही लड़की के व्याह देने की बात है, उसे कौन काम ज़रूरी हो पड़ा है ? वह कब कहाँ रहता है, आप लोग इसकी कुछ भी खोज ख़बर नहीं रखते, यद्यपि आपके घर के पास ही उसका घर है।"

घनानन्द—"क्यों कल रात में तो रमेश यहीं था।"

योगेन्द्र ने उत्तेजित होकर कहा—"आप सब नहीं जानते कि वह कहाँ जायगा। नौकर को मालूम नहीं कि वह कहाँ गया है। यह कैसा लुक्का चोरी का व्यवहार चल रहा है ? यह मुझे अच्छा नहीं लगता। आप इस तरह निश्चिन्त होकर क्यों बैठ रहे ?"

घनानन्द बाबू इसी भर्त्सना से अत्यन्त चिन्तित होने का भाव दिखाकर बोले—"सोई तो कहते हैं, यह सब क्या होता है ?"

व्यवहार-ज्ञान-विहीन रमेश चाहता तो कल रात में अनायास हो घनानन्द बाबू से कहकर बिदा हो जाता। किन्तु यह

बात उसे नहीं सूझी। उसने जो कहा कि एक बहुत ज़रूरी काम है। इसी के भीतर मानो उसकी सब बातें कही हो गईं। रमेश की यही धारणा थी।"

योगेन्द्र ने पूछा—"नलिनी कहाँ है?"

घनानन्द—"वह आज सबेरे चाय पीकर ऊपर गई।"

योगेन्द्र—"रमेश के इस विचित्र आचरण से जान पड़ता है वह बेचारी बहुत लज्जित हुई है, इसी कारण वह मुझ से भेंट न करके ऊपर जा छिपी है।

संकुचित और व्यथित नलिनी को आश्वासन देने के लिए योगेन्द्र ऊपर गये। नलिनी कमरे के भीतर चौकी पर अकेली चुपचाप बैठी थी। योगेन्द्र के आने की आहट सुनकर वह झट-पट हाथ में एक पुस्तक लेकर पढ़ने लगी। योगेन्द्र के घर में आते ही वह हाथ से पुस्तक रख झट उठ खड़ी हुई और मुस्कुराती हुई बोली, "भैया, कब आये? आप को कुछ उदास देखती हूँ।"

योगेन्द्र ने चौकी पर बैठ कर कहा—"उदास दीखने की बात ही है। मैंने सब बात सुनी है। तुम कुछ चिन्ता न करो। मैं नहीं था, इसीसे यह सब गोलमाल हुआ। मैं सब ठीक कर दूँगा। अच्छा, यह तो बताओ, रमेश ने तुम से कोई कारण कहा?"

नलिनी बड़ी मुश्किल में पड़ी। रमेश के सम्बन्ध की यह सब सन्देह-भरी बात उसे असह्य हो उठी थी। "रमेश ने उससे

विवाह का दिन बढ़ाने का कोई कारण नहीं कहा।" यह बात वह योगेन्द्र से कहना नहीं चाहती और झूट बोलना भी उसके लिए असम्भव है। उसने योगेन्द्र से यही कहा—"वे कहने को तैयार थे, पर मैंने सुनने की कोई आवश्यकता नहीं समझी।"

योगेन्द्र ने समझा, यह बड़ी ग्लानि का विषय है, और इस तरह की ग्लानि होना स्वाभाविक है भी। उसने कहा—"अच्छा, तुम कुछ खेद मत करो, मैं आज ही कारण ढूँढ़ निकालूँगा।"

नलिनी सामने रक्खी हुई किताब के पत्रों को व्यर्थ उलटते उलटते बोली—"भैया, मैं खेद क्यों करूँगी। मैं नहीं चाहती कि आप कारण जानने के लिए उन्हें तकलीफ़ दें।"

योगेन्द्र ने सोचा, "यह भी ग्लानि ही की बात है।" कहा—"अच्छा, तुम इसके लिए कुछ अन्देशा मत करो।" यह कह कर वह जाने को उद्यत हुआ।"

नलिनी ने चौकी से उतर कर कहा—"नहीं भैया! आप इस विषय में उनसे कुछ पूछ ताछ न करें। आप सब भले ही उन पर सन्देह करें परन्तु मैं उन पर किसी तरह का सन्देह नहीं करती।"

योगेन्द्र के कान खड़े हुए। उसने मनही मन सोचा, यह ग्लानि की सी बात नहीं जान पड़ती। यह सोच कर उसे स्नेहसहित दया का भाव हृदय में उमड़ आया और कुछ हँसी भी आई कि इसको अभी संसार का कुछ भी ज्ञान नहीं है। यद्यपि यह बहुत कुछ लिखना पढ़ना सीख गई है और घर बाहर की भली भाँति खोज ख़बर भी रखती है तो भी कौन सीजगह

सन्देह करने की है, वह अभिज्ञता अभी इसे नहीं हुई है। इस निःसंशय और पूर्ण विश्वास के साथ रमेश के कपट व्यवहार की तुलना करके योगेन्द्र मनहीं मन रमेश पर और भी क्रुद्ध हो उठा। कारण जानने की प्रतिज्ञा उसके मन में और भी दृढ़ हुई। योगेन्द्र जब दूसरी बार जाने को उद्यत हुआ, तब नलिनी ने उसका हाथ पकड़ कर कहा—"भैया, आप प्रतिज्ञा कीजिए कि उनके पास इन सब बातों का कुछ भी ज़िक्र न करेंगे।"

योगेन्द्र—"देखा जायगा।"

नलिनी—"नहीं भैया, यह बात नहीं, आप मुझको वचन देकर जाइए। मैं सच कहती हूँ, आप सब किसी तरह की आशङ्का न करें। मैं आप से हाथ जोड़ती हूँ। आप मेरी इस बात को रख लीजिए।"

नलिनी की ऐसी दृढता देख कर योगेन्द्र ने सोचा—"निश्चय रमेश ने नलिनी से सब बात कही है। किन्तु नलिनी को कुछ कह कर भुलाना कठिन नहीं।" कहा—"देखो, अविश्वास की इसमें कोई बात नहीं है। कन्या के अभिभावकों का जो कर्तव्य है वह तो करना ही होगा। उसने तुमको अपना परिचय दिया है या नहीं, यह तुम जानो। किन्तु इतने ही से काम न चलेगा। हम सबों को भी तो उसकी सब बातें जाननी ज़रूरी हैं। सच बात बोलने में क्या हानि है? तुम से भी बढ़कर अभी हमी सब उसके परिचय के विशेष जिज्ञासु हैं। ब्याह हो जाने पर फिर हम लोगों को कुछ बोलने का मुँह नहीं रहेगा।"

इतना कह कर योगेन्द्र चला गया। नलिनी और रमेश का जो प्रेम-सम्बन्ध क्रम क्रम से घनिष्ठ होकर दोनों को विवाह-सूत्र में

बाँध कर सदा के लिए एक कर देना चाहता था, आज उसी पर बार बार सन्देह-कुठार का आघात पहुँच रहा है। सब लोग उसके विरुद्ध भाषण कर रहे हैं। चारों ओर इस नये आन्दोलन की बात से नलिनी के हृदय में बड़ी चोट लगी है। वह अब किसी से हुलस कर भेंट करना तक नहीं चाहती।

योगेन्द्र के चले जाने पर नलिनी बड़े उदास मन से चौकी पर बैठ गई।

योगेन्द्र को बाहर आते देख अक्षय ने कहा—"वाह! तुम आगये! सब बातें तो सुनी ही होंगी?"

योगेन्द्र—"हाँ भाई! सब बातें सुनीं। मन में अनेक भावनायें उठती हैं। उन्हें लेकर व्यर्थ वाद्विवाद करने से क्या होगा? अब क्या चाय-टेबुल के पास बैठ कर उन सब बातों की सूक्ष्म आलोचना करने का समय है?"

अक्षय—"तुम तो जानते ही हो, सूक्ष्म आलोचना करने की मुझ में योग्यता नहीं। मैं सिर्फ़ काम की बात करना जानता हूँ। वही तुमसे कहने आया हूँ।"

योगेन्द्र—"अच्छा, वह पीछे कहना। कह सकते हो रमेश कहाँ गया है?"

अक्षय—"हाँ, कह सकता हूँ।"

योगेन्द्र—"कहाँ गया है?"

अक्षय—"अभी वह मैं तुम से नहीं कहूँगा। आज तीन बजे तुमको रमेश से एक बार ही भेंट करा दूँगा।"

योगेन्द्र—"बात क्या है, समझा कर कहो? तुम सब तो भागी नक्काल हो उठे हो। तुम लोगों का आशय कुछ समझ में नहीं आता। यही तो कुछ दिन में घूमने को गया, इतने ही में ऐसा भयानक रहस्य घटा जो कहने का नहीं। अक्षय! तुम मुझ से सब बात खोलकर कहो। इस तरह छिपाने से कैसे बनेगा।"

अक्षय—"मैं आप की बात से ख़ुश हुआ। बात न छिपाने ही के कारण तो मैं बदनाम हो रहा हूँ। तुम्हारी बहन तो मेरे मुँह की ओर देखती तक नहीं। तुम्हारे पिता जी मुझे संशयालु कह कर गाली देते हैं। रमेश बाबू भी अब मुझे देख कर आँख चुराते हैं। अब केवल तुम्ही एक बच रहे हो। तुमसे मैं बहुत डरता हूँ क्योंकि तुम सूक्ष्म विचार के पुरुष नहीं हो। तुमको सिर्फ़ मोटा मोटा काम करना आता है। मैं काहिल आदमी हूँ। मैं तुम्हारे किसी काम के लायक़ नहीं।"

योगेन्द्र—"तुम्हारी यह सब पेचीली चाल मुझे अच्छी नहीं लगती। मैं समझता हूँ, तुम मुझसे कुछ कहना चाहते थे, उसे छिपाने के लिए इतनी बात बनाने की ज़रूरत क्या? निष्कपट भाव से जो कहना हो कह डालो। बात ख़तम हो जाय।

अक्षय—"बहुत अच्छा, मैं शुरू से सब बात कह सुनाता हूँ। तुम्हें कुछ बात मालूम नहीं है।

आठरहवाँ परिच्छेद

रमेश ने दर्जीपाड़ा में जो मकान किराये पर लिया था उसका मियाद अभी पूरी नहीं हुई है, वह और किसी को भाड़ा देने के विषय में रमेश को अब तक विचारने का अवसर नहीं मिला। वह इधर कई महीनों से अपने को संसार से बाहर समझता था, लाभ-हानि को कुछ मन में न लाता था।

आज उसने ख़ूब सवेरे उस मकान में जाकर उसे झाड़-बुहार कर साफ़ करवाया, चौकी के ऊपर जाज़िम बिछवाई और खाने पीने की चीज़े भी मँगवा रक्खीं। आज स्कूल बन्द होने के बाद कमला को लाना होगा।

अभी विलम्ब है—यह जान कर रमेश चौकी पर लेट कर भविष्य की बात सोचने लगा। इटावा उसने कभी नहीं देखा, किन्तु वहाँ के दृश्य की कल्पना करना कठिन नहीं। वह मन ही मन कल्पना करने लगा। शहर के एक महल्ले में उसका घर है। उसके घर के पास से एक बहुत चौड़ी सड़क चली गई है, जिसके दोनों ओर कतारबन्दी के साथ बड़े बड़े पेड़ हैं। रास्ते के उस पार बहुत बड़ा मैदान है। उसके बीच में एक कुवाँ है। खेत सींचने के लिए बैल के द्वारा उससे पानी निकाला जाता है। उसका करुण शब्द दिन भर सुनाई देता है। खेत के बीच में पशु-पक्षियों को भगाने के लिए जहाँ तहाँ मचान बँधे हैं। रास्ते पर धूल उड़ाते हुए इक्के जाते आते हैं। उनकी खड़-

खड़ाहट से रास्ते के निकटवर्ती लोगों की निद्रा में व्याघात पहुँचती है। इस सुदूर प्रवास के प्रखर ताप और निर्जनता के बीच वह अपने घर का द्वार बन्द करके दिन भर नलिनी के रूप का ध्यान कर क्लेश का अनुभव करता है और अपने पास कमला को चिरसखी के रूप में देख कर सुख पाता है। "यह तो हुई मानसिक कल्पना की बात। रमेश न आँख खोल कर देखा तो अपने को उसी दर्जीपाड़ा के एक मकान के भीतर चौकी पर पड़ा पाया।

रमेश ने मन में निश्चय किया है—"अभी वह कमला से कुछ न कहेगा। विवाह होने के बाद नलिनी उसे अपने पास बिठा कर करुणा और स्नेह के साथ धीरे धीरे उस से उसका प्रकृत इतिहास कहेगी।

दोपहर का समय है। गली में सन्नाटा छाया है। जिनको आफ़िस जाना था वे आफ़िस गये हैं। जिनको कहीं न जाना था, वेसोने की चेष्टा कर रहे हैं। न बहुत गरम न बहुत ठंढा, आश्विन का मध्याह्नकाल प्रिय हो उठा है। शीघ्र होने वाली तातील की ख़ुशी मानो सारे आकाश-मण्डल में छा गई है। रमेश अपने सूने घर में चुपचाप भावी सुख का चित्र खींचने लगा।

इसी समय बोझ से लदी हुई एक घोड़ागाड़ी का शब्द सुना गया। वह गाड़ी रमेश के घर के पास आकर खड़ी होगई रमेश समझ गया, स्कूल की गाड़ी कमला को पहुँचाने आई है। रमेश का हृदय चञ्चल हो उठा। वह कमला को कैसे देखेगा, उसके साथ किस ढंग से बातचीत करेगा। किंवा वही रमेश

को किस भाव से देखेगी—हठात् इस चिन्ता ने उसके मन को डावाँडोल कर दिया।

नीचे फाटक पर उसके दो नौकर थे। उन्होंने कमला के असबाब को गाड़ी से उतार कर बरामदे में रक्खा। पश्चात् कमला घर के द्वार तक आकर खड़ी हो गई। भीतर न जा सकी।

रमेश ने कहा—"कमला! घर के भीतर आओ।"

कमला ने लज्जा से मुँह पर घूँघट डाल धीरे धीरे घरके भीतर प्रवेश किया। रमेश ने तातील के दिनों में उसे बोर्डिङ्ग-हाउस में ही रखना चाहा था। किन्तु वह स्कूल की स्वामिनी से कह सुनकर चली आई। उसे वहाँ रहना पसन्द न आया। इधर कई महीनों की जुदाई से रमेश के साथ उसके मनका भाव कुछ बदल गया था। इसी से वह घरके भीतर प्रवेश के समय रमेश के मुँह की ओर न देखकर ज़रा गर्दन टेढ़ी करके खिड़की के बाहर का दृश्य देखने लगी।

रमेश कमला को देखकर बड़े आश्चर्य में आ गया। उसने कमला के स्वरूप में बहुत कुछ परिवर्तन देखा। इन कई महीनों में वह और की और हो गई है। उसे अब सहसा कोई नहीं पहचान सकता कि यह वही कमला है। उसके जो अङ्ग कृश थे वे पुष्ट हो गये हैं। उसके प्रत्येक अङ्ग से सोभा टपकी पड़ती थी। अब उसकी समझ बूझ और भाव-भङ्गी में किसी तरह की कसर न थी।

जब वह रमेश की ओर से नज़र फेर कर खिड़की के पास खड़ी हुई, उसके मुँह पर शरद का मध्याह्न-कालिक प्रकाश

आ पड़ा। उसके सिर पर से कपड़ा खिसक गया, उसकी गुँथी हुई चोटी, जिसका अग्रभाग लाल फीते से बँधा था, पीठ पर पड़ी थी। गुलाबी रङ्ग की रेशमी साड़ी के भीतर से उसके उभरे हुए यौवन की ज्योति चारों ओर फैल रही थी।

रमेश उसका अपूर्व सौन्दर्य देखकर कुछ देर तक लुब्ध हो रहा।

कमला की सुन्दरता इधर कई महीनों से न देखने के कारण रमेश को वह भूल सी गई थी। आज उसी सुन्दरता ने अपूर्व रूप धारण कर हठात् उसकी आँखों में चकाचौंध पैदा कर दी।

रमेश ने चित्त को स्थिर करके कहा—"कमला! बैठो।"

कमला सकुचाती हुई एक कुरसी पर बैठ गई।"

रमेश ने पूछा—"स्कूल में तुम्हारा लिखना पढ़ना कैसा होता है?"

कमला ने सिर नीचा करके कहा—"अच्छा होता है।"

रमेश सोचने लगा। अब क्या पूछना चाहिए। एकाएक उसके मनमें एक बात का स्मरण हो आया। उसने कहा—"मालूम होता है, तुमने बहुत देर से कुछ नहीं खाया? तुम्हारे भोजन की सब सामग्री रक्खी है। कहो तो यहीं मँगादूँ।"

कमला—"मैं खाकर आई हूँ, अभी न खाऊँगी।"

रमेश—"कुछ भी न खाओगी? कुछ फल ही खालो। सेव, नासपाती और अनार मौजूद हैं।

कमला ने कुछ न बोल कर सिर हिला कर कहा—"नहीं।"

रमेश ने फिर कमला के मुँह की ओर एकबार ध्यान से देखा। कमला सिर नीचा किये अपनी अङ्गरेज़ी शिक्षा की पुस्तक में तसवीर देख रही थी। अहा! सौन्दर्य में भी एक क्या ही आकर्षण शक्ति है। खिले हुए स्वर्ण कमल की भाँति सुन्दर मुख अपनी शोभा से किसके मनको अपनी ओर नहीं खींचता? कमला की रूप-राशि रमेश के हृदय को अपनी ओर खींचने लगी। परन्तु वह अपने इस अनुपम सौन्दर्य की बात न जान कर चुपचाप पुस्तक के चित्र देख रही थी।

रमेश झट आप ही उठकर एक थाली में कितने ही फल ले आया। कमला से कहा—"तुम कुछ न खाओगी तो मुझी को कुछ खिलाओ। मुझे भूख लगी है।

कमला मुस्कुराई। इस मुस्कुराहट से दोनों के मनका मालिन्य मिट गया। रमेश छुरी लेकर सेब काटने लगा। किन्तु इन सब कामों में वह भारी अल्हड़ था। उसको बेढंगे तौर से सेब छीलते और उसके छोटे बड़े टुकड़े काटते देख बालिका अपनी हँसी को न रोक सकी। वह एकाएक खिल-खिला उठी।

रमेश ने इस मीठी हँसी से ख़ुश हो कर कहा, मैं अच्छी तरह सेब नहीं काट सकता, इसी से तुम हँसती हो। अच्छा, तुम्हीं काटो। देखें, तुम कैसी कुशल हो?"

कमला—"बड़ी छुरी तो मैं काट देती, इस छुरी से नहीं काट सकती।"

रमेश—"तुम समझती हो, तेज़ छुरी यहाँ न होगी? नौकर को बुला कर उसने पूछा—"तेज़ छुरी है?" नौकर ने कहा—है। कल सब चीज़ें बाज़ार से मोल मँगा ली गई हैं।"

रमेश—"अच्छा, उसे अच्छी तरह पानी से धो माँज कर ले आओ।"

नौकर तुरन्त छुरी ले आया।

कमला जूता निकाल, छुरी लेकर बैठी और बड़ी प्रसन्नता से सेब और नासपाती को छील कर उनके बराबर बराबर टुकड़े करने लगी। रमेश उसके सामने बैठ कर फल के टुकड़ों को तश्तरी में रखने लगा।

रमेश ने कहा—"तुमको भी खाना होगा।"

कमला—"नहीं।"

रमेश—"तो मैं भी न खाऊँगा।"

कमला ने रमेश के मुँह की ओर दोनों आँखें उठाकर कहा, "अच्छा! पहले आप खाइए, पीछे मैं खाऊँगी।'

रमेश—"देखना, पीछे कहीं धोखा न देना।"

कमला ने सिर हिला कर गम्भीतापूर्वक कहा—"नहीं, मैं सच कहती हूँ, धोखा न दूँगी।"

बालिका की इस सत्य प्रतिज्ञा से सन्तुष्ट होकर रमेश ने तश्तरी से फल का एक टुकड़ा उठा कर मुँह में रख लिया। दूसरा देनाही चाहता था कि इतने में एकाएक देखा, उसके सामने, द्वार के बाहर, योगेन्द्र और अक्षय खड़े हैं।"

अक्षय ने कहा—"रमेश बाबू! माफ़ कीजिएगा। मैंने समझा, आप यहाँ अकेले होंगे?" योगेन्द्र से कहा—"देखो योगेन्द्र! बिना ख़बर दिये एकाएक यहाँ आ पड़े, यह अच्छा नहीं किया। ख़ैर, चलो नीचे जाकर बैठे।"

कमला छुरी फेंक कर झट उठ खड़ी हुई। घर से भागने के द्वार ही पर दोनों जने खड़े थे। योगेन्द्र ज़रा हटकर खड़ा हुआ। उसके घर से बाहर होने का मार्ग छोड़ दिया। किन्तु उसके मुँह परसे अपनी दृष्टि को न फिराया। उसे भली भाँति देख लिया। कमला सकुच कर दूसरे घर में चली गई।

उन्नीसवाँ परिच्छेद

योगेन्द्र ने कहा—"रमेश! यह स्त्री कौन है ?"

रमेश—"मेरी एक आत्मीया है।"

योगेन्द्र—"कैसी आत्मीया? गुरुजन तो जान नहीं पड़ती। प्रेमपात्री भी न होगी। तुम्हारे जितने आत्मीय हैं, उनका नाम तो प्रायः तुमसे सुन चुका हूँ। इस आत्मीय के विषय में तो तुमसे कभी कुछ न सुना।"

अक्षय—"योगेन्द्र! यह तुम्हारा अन्याय है। क्या मनुष्य के मन में कोई ऐसी बात नहीं रह सकती, जो बन्धु के निकट गोपनीय हो ?"

योगेन्द्र—"क्या रमेश! सचमुच, बात बहुत गोपनीय है ?" रमेश का मुँह लाल हो गया। उसने कहा—हाँ, गोपनीय है। मैं इस स्त्री के सम्बन्ध में तुम लोगों से कुछ कहना नहीं चाहता।"

योगेन्द्र—"किन्तु दौर्भाग्य-दोष से तुम्हारे साथ उसकी आलोचना करने की मेरी विशेष इच्छा है। यदि नलिनी के साथ तुम्हारे ब्याह की बात न होती तो किसके साथ तुम्हारी कैसी आत्मीयता है, यह जानने की कोई आवश्यकता न थी। जो गोपनीय है, वह गोप्य ही रहता।

रमेश ने कहा—"मैं इतना शपथपूर्वक कह सकता हूँ कि संसार में किसी के साथ मेरा ऐसा सम्पर्क नहीं है, जिससे

नलिनी के साथ पवित्र सम्बन्ध होने में किसी तरह की बाधा हो।

योगेन्द्र—"हो सकता है, जिससे तुम्हारी किसी तरह की बाधा न हो सके। किन्तु नलिनी के आत्मीय जनों को बाधा हो सकती है। मैं तुमसे एक बात पूछता हूँ। जिसके साथ तुम्हारी जिस तरह की आत्मीयता हो, उसे छिपा रखने का क्या कारण है?"

रमेश—"यदि छिपाने का कोई विशेष कारण न होता, तो मैं अवश्य कह देता। तुम मुझको बचपन से ही जानते हो। कोई कारण न पूँछ कर केवल मेरी बात पर तुम लोगों को विश्वास करना होगा।"

योगेन्द्र—"इस स्त्री का नाम कमला है न?"

रमेश—"हाँ।"

योगेन्द्र—"तुमने इसको अपनी पत्नी कह कर परिचय दिया है?"

रमेश—"हाँ, दिया तो है।"

योगेन्द्र—"क्या तब भी तुम पर विश्वास करना होगा?" तुम हम लोगों को यह जताना चाहते हो कि यह युवती तुम्हारी स्त्री नहीं है। और तुम सबों पर प्रगट कर चुके हो, यह तुम्हारी स्त्री है। इससे बढ़कर तुम्हारी सत्यता का और क्या प्रमाण हो सकता है?"

अक्षय—"नीति-शास्त्र के अनुसार आपका कहना ठीक है, किन्तु भाई योगेन्द्र! किसी विशेष अवस्था में दो पक्ष के लोगों

से दो तरह की बात बोलने की आवश्यकता हो पड़ती है। उनमें सच्च एक ही बात होगी। हो सकता है, रमेश बाबू तुमसे जो कह रहे हैं, वही सच्च हो।"

रमेश—"मैं तुम लोगों से और कुछ नहीं कहता। इतना ही कहता हूँ कि नलिनी के साथ मेरा विवाह कर्तव्य-विरुद्ध न होगा। तुम लोगों से कमला के सम्बन्ध की सब बातें खोलकर कहने में भारी बाधा है। तुम लोग भलेही मुझ पर सन्देह कर सकते हो, परन्तु मैं कमला का भेद प्रकट करने में अभी सर्वथा असमर्थ हूँ। मेरे निज सुख, दुःख, मान, अपमान की बात होती तो मैं तुमसे नहीं छिपाता। किन्तु दूसरे के प्रति मैं अन्याय नहीं कर सकता।"

योगेन्द्र—"नलिनी से इस विषय में कुछ कहा है?"

रमेश—"नहीं। विवाह होने पर कहूँगा। बात ऐसी ही है। यदि वे सुना चाहें तो मैं उनसे कह सकता हूँ।"

योगेन्द्र—"मैं इस विषय में कमला से दो एक बात पूँछ सकता हूँ?"

रमेश—"नहीं, हर्गिज़ नहीं। यदि मुझे अपराधी समझो तो जो चाहो मुझे दण्ड दे सकते हो, किन्तु तुम्हारे सामने प्रश्नोत्तर करने के लिए निरपराधिनी कमला को मैं खड़ी नहीं कर सकता।"

योगेन्द्र—"किसी से कुछ सवाल जवाब करने की ज़रूरत न रही। जो बात जानने की थी, वह जान ली। प्रमाण भी यथेष्ट मिल गये। अब मैं तुमसे स्पष्ट कहे देता हूँ। अब से

यदि तुम मेरे घर में प्रवेश करने की चेष्टा करोगे तो तुम्हें अपमानित होना पड़ेगा।"

रमेश—"मुँह उदास किये बैठा रहा।"

योगेन्द्र—"तुमसे एक बात और कहना है। तुम अब नलिनी को चिट्ठी भी न लिख सकोगे। उसके साथ तुम्हारा गुप्त या प्रकाश्य कोई सम्पर्क न रहेगा। अगर उसे चिट्ठी लिखोगे तो जो बात तुम गुप्त रखना चाहते हो वह मैं सर्व-साधारण के निकट प्रकट कर दूँगा। अगर अब मुझसे कोई पूछेगा कि रमेश के साथ नलिनी के ब्याह की बात क्यों उठा दी गई तो मैं यही कहूँगा कि इस विवाह में मेरी सम्मति न हुई इसीसे बात उठा दी गई। इसका असली कारण किसीसे न कहूँगा। किन्तु तुम मेरी बात पर क़ायम न रहोगे तो सब बातें खुल पड़ेंगी। तुमने मेरे साथ पाखण्ड की भाँति व्यवहार किया, तब भी मैंने सब सह लिया। यह तुम्हारे ऊपर दया करके नहीं, केवल यह जान कर कि इस विषय में मेरी बहन नलिनी का भी कुछ सम्बन्ध है, इसीसे तुम सहज ही निष्कृति पा गये। अब तुमसे मेरा यही आख़िरी कहना है कि, "इतने दिन नलिनी के साथ तुम्हारा जो कुछ अपेक्षाभाव था, उसका कोई प्रमाण तुम्हारी कथावार्ता या व्यवहार से जिसमें न पाया जाय—अब तुमको उसके साथ ऐसा ही बर्ताव रखना होगा, जिसमें लोग यह न समझे कि उसके साथ तुम्हारी कभी की जान पहचान है। इस विषय में तुम से प्रतिज्ञा कराना व्यर्थ समझता हूँ। कारण यह कि इतनी प्रपञ्च-रचना के बाद तुम सत्य का पालन कहाँ तक कर सकोगे। तो भी मैं तुम से कह देता हूँ, यदि तुमको अब भी कुछ लज्जा

हो, अपमान का भय हो, तो भूल कर भी मेरी बात का तिर-स्कार न करना ।"

अक्षय—"अहा ! योगेन्द्र, इतनी निष्ठुरता क्यों ? रमेश बाबू चुप हैं, तोभी तुम्हारे मन में कुछ दया उत्पन्न नहीं होती ? अब यहाँ से चलो, रमेश बाबू ! आप कुछ बुरा न मानिएगा । हम सब जाते हैं ।"

योगेन्द्र और अक्षय चले गये । रमेश पत्थर की मूर्ति की तरह जहाँ का तहाँ बैठा रहा । जब बहुत देर में उसकी प्रकृति ठिकाने आई तब उसने चाहा कि घर से बाहर होकर ज़रा टहल फिर कर मनके बोझ को हलका करे और टहलते ही टहलते सब बातों को भी सोच ले । परन्तु उसने कमला को अकेली छोड़ कर बाहर जाना उचित न समझा ।

रमेश ने पासवाली कोठरी में जाकर देखा, कमला रास्ते की तरफ़ की झिलमिली खोल कर चुप बैठी है । रमेश के पैर की आहट सुन कर उसने झिलमिली बन्द करके मुँह फिराया । रमेश मेज़ पर बैठ गया ।

कमला ने पूछा—"वे दोनों कौन हैं ? ये आज सवेरे हमारे स्कूल गये थे ।"

रमेश ने आश्चर्ययुक्त होकर कहा—"स्कूल गये थे ?"

कमला—"हाँ ! वे अभी आप से क्या कहते थे ?"

रमेश—"वे मुझसे पूछते थे, तुम मेरी कौन होती हो ?"

यद्यपि कमला ने सास-ससुर की अधीनता में न रहने के कारण लज्जा करना नहीं सीखा था तो भी रमेश की इस बानी से स्त्री के स्वाभाविक धर्मवशतः उसने लज्जा से सिर नीचा कर लिया ।

रमेश—"मैंने उनसे कह दिया है, तुम मेरी कोई नहीं होती।"

कमला ने सोचा, "रमेश उसे व्यर्थ की लज्जा से सता रहा है। उसने मुँह फेर कर ज़रा तुर्शी से कहा—जाइए।"

रमेश को यह चिन्ता हुई, "कमला से सब बात खोल कर कैसे कहूँगा।"

कमला एकाएक चञ्चल हो उठी, बोली—"जा! आपका फल कौआ खा रहा है।" यह कह कर वह झट दौड़ कर पास के घर में गई और कौवे को भगा कर फल की तश्तरी उठा कर ले आई। रमेश के आगे तश्तरी रख कर बोली—"क्या आप न खायँगे?"

रमेश को अब कुछ खाने की इच्छा न थी। किन्तु कमला के आग्रह ने उसके हृदय को द्रवित कर दिया। उसने कहा—"कमला, क्या तुम न खाओगी।"

कमला—"पहले आप खाइए।"

रमेश इस पर कुछ न बोल कर फल खाने लगा। खाने का काण्ड समाप्त करके रमेश ने कहा—"आज रात को हम देश जायँगे।"

कमला दृष्टि नीची कर उदासी के साथ बोली—"मैं वहाँ रहना पसन्द नहीं करती।"

रमेश—"क्या स्कूल में रहना तुम पसन्द करती हो?"

कमला—"नहीं, मुझे अब स्कूल में न भेजो। मुझे बहुत शरम मालूम होती है। वहाँ की बालिकायें बराबर आपकी बातें पूछा करती हैं।"

रमेश—"तुम क्या कहती हो ?"

कमला—"मैं कुछ नहीं कहती। वे सब पूछती थीं आपने तातील के समय क्यों मुझको स्कूल में रखना चाहा था।—मैं"

कमला अपनी बात को पूरी न कर सकी। उसके हृदय में एक कठिन आघात आ लगा।

रमेश—"तुमने क्यों नहीं कहा, कि वे मेरे कोई नहीं होते।"

कमला ने क्रोध करके कुटिल कटाक्ष से रमेश के मुँह की ओर देखकर कहा—"जाइए, यह सब मुझे अच्छा नहीं लगता।"

रमेश फिर मन ही मन सोचने लगा, "क्या करना होगा !" उसके मन में भाँति भाँति की तरङ्गें उठने लगीं। "योगेन्द्र ने नलिनी से क्या कहा होगा, नलिनी क्या समझती होगी, सच्चा हाल नलिनी से कैसे कहूँगा, नलिनी से यदि मुझको चिरकाल के लिए अलग होना पड़े तो मैं कैसे जीवन धारण करूगा। ये सब दुःसह प्रश्न भीतर ही भीतर उसे जला रहे थे। उन सब प्रश्नों की भली भाँति आलोचना करने का अवसर उसे नहीं मिलता था। इससे वह और भी व्याकुल हो रहा था। इतना उसे मालूम हो गया था कि "कमला के साथ जो उसका गुप्त सम्बन्ध है, वह कलकत्ते में उसके मित्र और शत्रु दोनों दलों में तीव्र आलोचना का विषय हो उठा है। घर घर उसी की चर्चा होती है। रमेश कमला के पति हैं—यह जनरव कुछ दिन में सारे शहर में फैल जायगा।" अब कमला को लेकर कलकत्ते में एक दिन का भी रहना रमेश के लिए कठिन हो पड़ा।

रमेश को इस प्रकार की भावना में निमग्न देखकर कमला ने कहा—"आप क्या सोच रहे हैं?" अगर आप देश में रहना चाहेंगे तो मैं भी वहीं रहूँगी।"

बालिका के मुँह से यह स्नेहभरी बात सुनकर रमेश के हृदय में फिर भारी आघात लगा। उसने सोचा—"क्या करना होगा?" वह अन्यमनस्क होकर चिन्ता करने और कमला के मुँह की ओर देखने लगा।

कमला ने गम्भीरतापूर्वक कहा—"अच्छा, एक बात मैं आपसे पूछती हूँ। कहिए, मैंने जो छुट्टी के दिनों में स्कूल में रहना नहीं चाहा क्या उससे आप नाराज़ तो नहीं हैं? सच सच कहिए।"

रमेश—"सच कहता हूँ, मैं तुमपर नाराज़ नहीं हूँ, अपने ही ऊपर नाराज़ हूँ।"

रमेश चिन्ताजाल से ज़बरदस्ती अपने को छुड़ाकर कमला के साथ वार्तालाप करने में प्रवृत्त हुआ। उसने कमला से पूछा—"कहो, इतने दिन तुमने स्कूल में क्या सीखा?"

कमला बड़े उत्साह से अपनी शिक्षा का हिसाब देने लगी। जब उसने पृथ्वी को गोल और भ्रमणशील बता कर रमेश को चकित कर देने की चेष्टा की तब रमेश ने गम्भीरभाव धारण कर भूमण्डल की गोलाई में सन्देह प्रकाश किया, कहा, "यह क्या कभी सम्भव है?"

कमला ने आँखें फाड़ कर कहा—"वाह! मेरी किताब में लिखा है। मैंने पढ़ा है।"

रमेश ने आश्चर्य का भाव दिखाकर कहा—"सच कहो? तुम्हारी किताब में लिखा है? कितनी बड़ी तुम्हारी किताब है?"

इस प्रश्न से कमला ने कुछ थरथराकर कहा—"किताब बहुत बड़ी नहीं है, मगर छपी हुई है, उसमें पृथ्वी का चित्र भी दिया है।"

इतना बड़ा प्रमाण देने के बाद रमेश को हार माननी पड़ी। इसके बाद कमला पढ़ाई का नियम, स्कूल की विद्यार्थिनी और शिक्षिकाओं की बात, और दैनिक कार्य का विवरण सुनाने लगी। रमेश का चित्त स्थिर न था, इससे वह बीच बीच में केवल "हाँ" करता गया। एकाध बार यह भी कह उठता था—"क्या कहा, फिर कहो।" रमेश के चित्त की यह चञ्चल अवस्था देखकर कमला एकबार झुलझुलाकर बोली—"आप मेरी बात कुछ नहीं सुनते।" यह कहकर वह वहाँ से क्रोध करके उठ गई।

रमेश ने घबराकर कहा—"नहीं, नहीं, तुम क्रोध न करो, आज मेरी तबीयत अच्छी नहीं है।"

यह सुनकर कमला ने लौटकर कहा—"आपकी तबीयत अच्छी नहीं है? क्या हुआ?"

रमेश—"हुआ तो कुछ नहीं है, बीच बीच में कभी कभी मेरी तबीयत, दिमाग़ में शायद अधिक गरमी पहुँचने के कारण, बिगड़ जाती है, जो ठंडे उपचार से फिर शीघ्र ही अच्छी हो जाती है।"

कमला ने रमेश का जी बहलाने के मतलब से कहा—"मेरे भूगोलवर्णन में जो पृथ्वी का चित्र दिया है, वह देखएगा?"

रमेश ने आग्रहसहित देखने की इच्छा प्रकट की। कमला ने झट अपनी किताब लाकर रमेश के सामने रख दी, और पृथ्वी का चित्र दिखा कर बोली—"ये जो दो गोलाकार चित्र देख रहे हैं। यह असल में एक ही है। गोल पदार्थ के दोनों पृष्ठ क्या एक साथ कभी देखे जा सकते हैं?

रमेश ने कुछ सोचने का सा भाव दिखाकर कहा—"चिपटे पदार्थ के भी तो दोनों पृष्ठ एक साथ नहीं देख पड़ते।"

कमला—"इसी से जान पड़ता है, पृथ्वी की दोनों पीठें अलग अलग छाप दी हैं। पृथ्वी नारङ्गी सी गोल है।" योंही बातचीत करते करते साँझ हो गई।

बीसवाँ परिच्छेद

घनानन्द बाबू एकान्तचित्त से आशा कर रहे थे कि योगेन्द्र अच्छी ख़बर लावेगा। सब गोलमाल अब सहज ही निबट जायगा। योगेन्द्र और अक्षय जब घनानन्द बाबू के पास लौट आये, तब उन्होंने सभय दृष्टि से उन दोनों के मुँह की ओर देखा।

योगेन्द्र ने कहा—"मैं नहीं जानता था कि आप रमेश का यहाँ तक इस घर में आने का अधिकार देंगे। मैं जानता तो आप लोगों के साथ उसकी इतनी घनिष्ठता न होने देता।"

घनानन्द—"रमेश के साथ नलिनी का व्याह होना तो तुम्हें मंज़ूर था। यह बात तुमने कईबार मुझसे कही भी थी। अगर इस सम्बन्ध में तुम्हें बाधा डालनी थी तो मुझे—

योगेन्द्र—"मैं बाधा डालना न चाहता था, क्या इसीसे—"

घनानन्द—"इसीसे क्या? उन दोनों में इस बात के लिए जगह नहीं। वे जहाँ तक अग्रसर होना चाहें होने दो, कुछ बाधा न दो।"

योगेन्द्र—"क्या एकदम यहाँ तक अग्रसर—"

अक्षय ने हँस कर कहा—"संसार में कितने ही जीव ऐसे हैं, जो अपनी झोंक में आकर अग्रसर हो पड़ते हैं। उन्हें प्रेमसम्पत्ति का अधिक लालच देना ठीक नहीं। किन्तु जो हो गई,

सो हो गई । उस बात को लेकर अब तर्क-वितर्क करना वृथा है । अब जो कर्तव्य हो, उसका निरूपण करो ।"

घनानन्द बाबू ने डरते डरते पूछा—"क्या रमेश के साथ तुम्हारी भेंट हुई ?"

योगेन्द्र—"ख़ूब भेंट हुई । भेंट की क्या पूछते हैं ? उसकी स्त्री के साथ भी अच्छी तरह परिचय हो गया ।"

घनानन्द बाबू अवाक् होकर योगेन्द्र का मुँह देखने लगे । कुछ देर के बाद उन्होंने पूछा—"किसकी स्त्री के साथ परिचय हुआ ?"

योगेन्द्र—"रमेश की स्त्री के साथ ।"

घनानन्द—"तुम क्या कहते हो । यह मेरी समझ में नहीं आता ! किस रमेश की स्त्री ?"

योगेन्द्र—"हमारे रमेश बाबू की । पाँच छः मास पूर्व जब वह देश गया था तब वह विवाह करने ही के लिए गया था ।"

घनानन्द—"उसके पिता की मृत्यु होने से उसका ब्याह रुक गया ।"

योगेन्द्र—"मृत्यु होने के पूर्व ही ब्याह हो गया ।"

घनानन्द बाबू चुप होकर माथे पर हाथ फेरने लगे । कुछ देर सोचकर बोले—"तो मेरी नलिन के साथ उसका ब्याह नहीं हो सकता ।

योगेन्द्र—"हम सब भी तो यही कहते हैं ।"

घनानन्द—"माना, कि तुम सब भी यही कहते हो, किन्तु ब्याह की जो सब आयोजना ठीक होगई है, इस रविवार को न हो कर अग्रिम रविवार का दिन स्थिर करके सर्वत्र सूचना देदी गई है—फिर उस दिन भी शादी बन्द होने की ख़बर सबके पास भेजनी होगी?"

योगेन्द्र—"एकदम बन्द कर देने की क्या ज़रूरत है? उसमें कुछ हेर फेर करके काम चला लिया जायगा।"

घनानन्द—"उसमें अब परिवर्तन करने की तो कोई जगह नहीं है।"

योगेन्द्र—"क्यों नहीं है? जहाँ परिवर्तन करना युक्तिसङ्गत होगा वहीं किया जायगा। रमेश के बदले कोई और वर स्थिर करके आगामी रविवार ही को जैसे होगा कार्य सम्पन्न कर लेना होगा। नहीं तो हम लोग किसी के सामने मुह दिखाने योग्य न रहेंगे।" यह कह कर योगेन्द्र ने अक्षय के मुँह की ओर देखा। अक्षय ने विनय से सिर झुका लिया।

घनानन्द—"क्या इतनी जलदी वर मिलेगा?"

योगेन्द्र—"आप इसके लिए चिन्ता न करें।"

घनानन्द—"किन्तु नलिनी को राज़ी करना होगा।"

योगेन्द्र—"रमेश का सब वृत्तान्त जानने पर वह अवश्य राज़ी हो जायगी।

घनानन्द—"तो जो तुम अच्छा समझो करो। किन्तु रमेश में अनेक गुण थे। उसके पास धन भी था, चार पैसा कमाने योग्य विद्या बुद्धि भी थी। यही तो परसों उससे सब बात ठीक हो गई थी। वह इटावा जाकर वकालत करेगा। अब नहींकह सकते क्या होगा!"

योगेन्द्र—"उसके लिए आप क्यों सोच करते हैं। रमेश अब भी इटावा जाकर प्रैक्टिस कर सकेगा। एकबार नलिन को बुला लाता हूँ। अब समय भी तो अधिक नहीं है।"

कुछ देर के बाद योगेन्द्र नलिनी को वहाँ बुला लाया। अक्षय घर के एक कोने में पुस्तक की अलमारी की आड़ में जा बैठा।

योगेन्द्र ने नलिनी से कहा—"नलिन, बैठो तुम से कुछ कहना है।"

नलिनी गम्भीर भाव से चौकी पर बैठ गई। वह समझ गई कि उससे कोई गूढ़ बात पूछी जायगी।"

योगेन्द्र ने कथा की भूमिका के व्याज से पूछा—"रमेश के सम्बन्ध में क्या तुम्हें कोई सन्देह का कारण नहीं देख पड़ता?"

नलिनी ने कुछ उत्तर न देकर केवल सिर हिलाया—"नहीं।"

योगेन्द्र—"उसने जो ब्याह का दिन एक सप्ताह आगे बढ़ा दिया उसका ऐसा कौन कारण था जो हम लोगों से वह नहीं कह सका?"

नलिनी ने दृष्टि नीची करके कहा—"कारण कुछ अवश्य है।"

योगेन्द्र—"सो ठीक है। कारण तो हई है—किन्तु वह क्या सन्देह से भरा नहीं है?"

नलिनी ने फिर सिर हिला कर जताया "नहीं।"

सबसे अधिक रमेश पर ऐसा विश्वास रखने के कारण योगेन्द्र ने नलिनी पर क्रोध किया। उसने बड़ी सावधानी से भूमिका बाँधी थी पर उससे कुछ फल न हुआ।

वह फिर कुछ कड़ी आवाज़ में कहने लगा—"तुम तो बख़ूबी जानती हो, यही पाँच छः महीने हुए हैं, रमेश अपने बाप

के साथ घर गया था। तब से बहुत दिनों तक उसकी कोई चिट्ठी पत्री न पाकर हम सब आश्चर्य में पड़ गये थे। यह भी तुम जानती हो कि रमेश दोनों समय यहाँ आता था, जो इसी महल्ले में मेरे घर के पास ही किराये के मकान में रहता था। उसने कलकत्ते आकर एकबार भी हम सब से भेंट न की। दूसरे महल्ले में मुँह छिपा कर रहने लगा। इस पर भी तुम सब पहले ही की तरह उस पर विश्वास करके उसे अपने घर बुला लाये? मैं यहाँ रहता तो क्या यह बात कभी होने पाती?"

नलिनी कुछ न बोली।

योगेन्द्र—"क्या तुम सबों ने रमेश के ऐसे व्यवहार का अर्थ कुछ भी न जाना? क्या इस सम्बन्ध में एक प्रश्न भी तुम सबों के मन में कभी उदित न हुआ? रमेश के ऊपर इतना विश्वास!"

नलिनी फिर चुप रही।

योगेन्द्र—"अच्छा सुनो, तुम बहुत सीधी साधी हो। किसी पर तुम सन्देह नहीं करती। मुझ पर भी तुम्हारा कुछ कम विश्वास नहीं है। मैं जो कुछ कहूँगा उस पर तुम ज़रूर विश्वास करोगी। "मैं ख़ुद स्त्री विद्यालय में जाकर सच्ची ख़बर ले आया हूँ। रमेश अपनी स्त्री-कमला को बोर्डिङ्ग में रख कर पढ़ाता था। छुट्टी के दिनों में भी उसको वहीं रखने का प्रबन्ध किया था। दो तीन दिन हुए हठात् स्कूल की स्वामिनी के हाथ की एक चिट्ठी रमेश ने पाई। उसमें लिखा था, छुट्टी के दिनों में कमला को स्कूल में रखना ठीक न होगा। आज से स्कूल बन्द हो गया। कमला को स्कूल की

गाड़ी ने उसके पाड़ा वाले मकान में पहुँचा दिया। उस मकान में ख़ुद मैं गया था। कमला छुरी से नासपाती छील कर टुकड़े कर रही थी। रमेश तश्तरी से एक एक टुकड़ा उठाकर मुँह में रक्खे जाता था। मैंने रमेश से पूछा, कहो क्या हाल है? रमेश ने कहा—"मैं अभी तुम लोगों से कुछ नहीं कहूँगा। अगर रमेश इतना भी कह देता कि कमला उसकी स्त्री नहीं है तो भी उस बात पर निर्भर रह कर किसी तरह सन्देह को दबाने की चेष्टा की जाती। किन्तु उसने कोई बात साफ़ साफ़ नहीं कही। तब भी तुम रमेश का इतना विश्वास करती हो।

इस प्रश्न के उत्तर की अपेक्षा से योगेन्द्र ने नलिनी के मुँह की ओर देखा। देखते ही देखते नलिनी का मुँह विवर्ण हो गया अपने को बहुत सँभालने की चेष्टा करने पर भी वह मूर्छित हो चौकी पर से नीचे गिर पड़ी।

उसकी यह दशा देख घनानन्द बाबू बड़े व्याकुल हुए। उन्होंने झट नलिनी को उठा कर बिठाया और उसे होश में लाने की इच्छा से चिल्ला चिल्ला कर कहने लगे—"बेटी! इन सबों की बात का कुछ विश्वास न करो; सब झूँठ है।

योगेन्द्र अपने पिता को हटा कर झट नलिनी को एक चारपाई पर लिटा कर उसके मुँह और आँख पर बारंबार गुलाब जल छिड़कने लगी। अक्षय हाथ में पंखा लेकर ख़ूब ज़ोर से हवा करने लगा।

नलिनी कुछ देर के बाद आँख खोल कर चौंक उठी। घनानन्द बाबू की ओर देख कर चिल्लाकर बोली—"अक्षय बाबू को यहाँ से चले जाने को कहो।"

अक्षय पङ्खा रखकर घर के बाहर दर्वाज़े की आड़ में जा खड़ा हुआ। घनानन्द बाबू चारपाई के ऊपर नलिनी के पास बैठकर उसके सिर पर हाथ फेरने लगे और दीर्घनिश्वास लेकर केवल एक बार कहा—"बेटी, होश करो।

नलिनी की आँखों से आँसू की धारा बह चली। उसका दम फूलने लगा, ज़ोर से साँस लेने लगी। पिता की गोद में मुँह छिपाकर वह अनिवार्य रोदन के वेग को रोकने की चेष्टा करने लगी। घनानन्द बाबू रूँधे कण्ठस्वर से कहने लगे—बेटी! तुम सोच न करो, मैं रमेश को भली भाँति जानता हूँ। वह कभी अवि-श्वासी नहीं है। योगेन्द्र ने उसके विषय में ज़रूर भूल की है"।

योगेन्द्र से चुप न रहा गया। उसने कहा—"आप झूँटा आश्वासन क्यों देते हैं? इस कष्ट से बचा कर क्या उसे दुगुना कष्ट देना चाहते हैं? नलिन को अब कुछ देर विचारने का समय दीजिए।"

नलिनी तब अच्छी तरह होश में आ गई थी। वह पिता की गोद से सिर उठा कर बैठी और योगेन्द्र के मुह की ओर देख कर बोली—"मुझे जो कुछ विचारने को था, विचार चुकी। जब तक मैं उनके मुँह से यह बात न सुनूँगी तबतक मैं कदापि विश्वास नहीं करूँगी। इसे तुम सच जानो।" यह कह कर वह खड़ी हुई। घनानन्द बाबू ने उसका हाथ पकड़ लिया और कहा—"गिर पड़ोगी।"

नलिनी उसका हाथ पकड़ कर अपने सोने के घर में गई। बिछौने पर लेटकर उसने अपने पिता से कहा—"मुझको कुछ देर अकेली रहने दीजिए। मैं सोऊँगी।"

घनानन्द—"हरिशरण की माँ को बुला दूँ ? पङ्खा झलेगी।"

नलिनी—"पङ्खे की ज़रूरत नहीं ।"

घनानन्द बाबू पास के घर में जा बैठे । यह लड़की जब छः महीने की थी तभी उसे छोड़ कर उसकी माँ मर गई । नलिनी की माँ की बात वे सोचने लगे। उसकी वह भक्ति, वह धैर्य और वह चिरप्रसन्नता उन्हें स्मरण हो आई। उसी गृहलक्ष्मी की मूर्ति के सदृश जो बालिका इतने दिन उनकी गोद में लालित पालित होकर अब बड़ी हुई है, उसके अनिष्ट की आशङ्का से उन का हृदय व्याकुल हो उठा। वे मन ही मन उसे पुकार कर कहने लगे—"बेटी, तुम्हारे सभी विघ्न दूर हों, तुम सदा सुख से रहो। तुमको सुखी देखकर जिसको तुम हृदय से चाहते हो, उसके घर में तुम्हें लक्ष्मी की भाँति प्रतिष्ठित देखकर मैं तुम्हारी माँ के पास ख़ुशी से जा सकूँगा। यह कह कर उन्होंने अपनी चादर के छोर से आँसू पोंछ डाले।

स्त्रियों की बुद्धि पर योगेन्द्र को पहले ही से बड़ी अश्रद्धा थी। आज वह और भी दृढ़ हुई । स्त्रियाँ ऐसी हठधर्म्मिणी होती हैं कि वे प्रत्यक्ष प्रमाण को भी नहीं मानतीं। उन्हें किस तरह समझाया जाय? दो दो मिलकर चार होते हैं, इसमें किसी को सुख हो या दुःख वे इस बात को किसी अवसर पर अपनी हठधर्म्मिता के कारण हर्गिज़ न मानेंगी। युक्ति यदि काले को भली भाँति काला सिद्ध करदे और इन स्त्रियों का प्रेम यदि उसे उजला कहदे तो युक्ति बेचारी झख मारेगी। उसका कुछ ज़ोर उन पर न चलेगा। उलटा वे उस पर ख़फ़ा हो उठेंगी

इन सबों के द्वारा संसार का व्यवहार कैसे चलता है, यह योगेन्द्र की बुद्धि में न आया।

योगेन्द्र ने अक्षय को पुकारा।

अक्षय धीरे धीरे घर में आया। योगेन्द्र ने कहा—"सब सुन ही चुके हो, अब इसका क्या उपाय है?"

अक्षय—"भाई! मुझे इन सब बातों में क्यों लपेटते हो? मैं इतने दिन इस बखेड़े से एक दम अलग था। तुम, आकर मुझे क्यों इस झंझट में उलझाना चाहते हो?"

योगेन्द्र—"अच्छा, यह सब बात पीछे होगी। अब नलिनी के पास रमेश के मुँह से वे सब बातें क़बूल न कराने से काम न चलेगा। इसके सिवाय दूसरा उपाय नहीं देखता हूँ।"

अक्षय—"तुम पागल हुए हो? कोई अपने मुँह से—"

योगेन्द्र—"अगर वह एक चिट्ठी लिख दे तो और अच्छा हो। तुमको यह भार अपने ऊपर लेना होगा। देरी करने से कार्य सिद्धि में बाधा होगी?"

अक्षय—"अच्छा, मुझसे जहाँ तक जो हो सकेगा, अवश्य यत्न करूगा।"

इक्कीसवाँ परिच्छेद

रमेश ने रात के नौ बजे कमला को साथ ले सियालदह स्टेशन की यात्रा की। वह सीधे न जाकर ज़रा घूम कर गया। उसने गाड़ीवान को कितनी ही गलियों की हवा खिलाई। कोलूटोले में एक मकान के पास आकर उसने गाड़ीवान को धीरे धीरे गाड़ी हाँकने की आज्ञा दी। रमेश ने गाड़ी से मुँह निकाल कर देखा। परिचित घर में किसी तरह का परिवर्तन देखने में न आया।

रमेश ने इतने ज़ोर से एक दीर्घनिश्वास लिया कि सोई हुई कमला चकित हो उठी। उसने पूछा, अयँ, तुम्हें क्या हुआ है?"

रमेश ने जवाब दिया—"कुछ नहीं।" और कुछ न बोला। गाड़ी के भीतर मुँह छिपाकर बैठ रहा। कमला गाड़ी के कोने में होकर सो रही। कुछ देर के लिए कमला का रहना रमेश को असह्य जान पड़ा।

गाड़ी यथासमय स्टेशन पर जा पहुँची। सेकेन्ड क्लास की एक गाड़ी पहले ही से रिज़र्व की हुई मौजूद थी। कमला और रमेश उसमें जा बैठे। एक बेञ्च पर कमला के लिए बिछौना बिछाकर और बीच में पर्दा देकर रमेश ने कमला से कहा—"तुम इस बेञ्च पर सो रहो।"

कमला ने कहा—"गाड़ी चलने पर मैं सोऊँगी। तब तक मैं इस खिड़की के पास बैठकर बाहर का दृश्य देखती हूँ।"

रमेश ने कहा—"अच्छा।" कमला माँथे पर कपड़ा सँभाल कर प्लेटफ़ार्म की ओर दृष्टि करके लोगों का इधर उधर जाना आना देखने लगी।

रमेश के मन में और ही चिन्ता थी। स्टेशन की ओर देख रहा था। पर चित्त उसका कहीं और ही जगह था।

गाड़ी जब चल पड़ी तब रमेश का ध्यान टूटा। वह चौंक उठा। उसे मालूम हुआ जैसे उसका एक परिचित व्यक्ति गाड़ी की ओर दौड़ा आ रहा।

इसी समय कमला खिलखिला कर हँस उठी। रमेश ने खिड़की से मुँह निकाल कर देखा—"रेलवे कर्मचारी से हाथ छुड़ाकर एक आदमी किसी तरह चलती गाड़ी पर चढ़ गया है। चादर लेने के लिए जब उस व्यक्ति ने खिड़की से बाहर हाथ निकाला, तब रमेश ने उसे पहचान लिया। वह और कोई नहीं, अक्षय है।"

इस चादर की खैंचातानी का एक अपूर्व दृश्य देखकर कमला बहुत देर तक हसती रही।

रमेश ने कमला से कहा—"साढ़े दस बज गये। गाड़ी रवाना हो गई। अब तुम सो रहो।

बालिका बिछौने पर लेट गई। जब तक उसे नींद न आई तब तक वह बीच बीच में अक्षयकुमार की घटना पर खिल-खिला उठती थी।

किन्तु इस व्यवहार से रमेश को कुछ विशेष कौतूहल न हुआ। वह जानता था—देहात से अक्षयकुमार का कोई सम्बन्ध नहीं है। वह कई पुश्त से कलकत्ते का वासी है। आज इस हड़बड़ी के साथ वह कलकत्ता छोड़ कर कहाँ जा रहा है? रमेश समझ गया कि वह उसी की टोह में चला है।

यदि अक्षय उसके गाँव जाकर कमला के सम्बन्ध की बातों की जाँच करे और पुरवासियों के साथ इस बात को लेकर एक नया बखेड़ा खड़ा करे तो बात बड़ी भयङ्कर हो उठेगी। इसे सोचकर रमेश का हृदय चञ्चल हो उठा। उसके गाँव का कौन आदमी क्या कहेगा, कैसे कैसे तर्क-वितर्क चलेंगे, यह रमेश मानो प्रत्यक्ष देखने लगा। कलकत्ते जैसे बड़े शहर में सभी अवस्था में लोग अपने को छिपा सकता है, और जब चाहे, तब वहाँ वैसी जगह मिल सकती है, जहाँ रहने से किसी तरह का भय न रहे, परन्तु छोटी सी बस्ती की बात ही न्यारी है।" इस बात को वह जितना ही सोचने लगा, उतना ही वह अधीर होने लगा।

बारकपुर में गाड़ी ठहरी। रमेश गाड़ी से मुँह बाहर कर देखने लगा। अक्षय गाड़ी से न उतरा। नैहाटी में कितने ही लोग उतरे। उनमें अक्षय दिखाई न दिया। बगुला स्टेशन में भी रमेश ने ख़ूब देखा, गाड़ी से उतरने वाले मुसाफ़िरों में अक्षय का कहीं पता नहीं। इसके बाद उसे और किसी स्टेशन में अक्षय के उतरने की कोई सम्भावना न देख पड़ी!

रात बहुत बीतने पर रमेश सो गया। दूसरे दिन सवेरे गोयालन्दो गाड़ी पहुँचने पर रमेश ने देखा—अक्षय सिर और

मुह पर चादर दिये हाथ में एक बेग लिये स्टीमर की ओर दौड़ा जा रहा है।

जिस स्टीमर पर रमेश सवार होगा, उसके खुलने में अब भी देर है। किन्तु उसके पास ही एक और ष्टीमर खुलने पर था। यात्रियों को सावधान करने के लिए बार बार सीटी बजा रहा था। रमेश ने एक व्यक्ति से पूछा—"यह स्टीमर कहाँ जायगा?"

"पश्चिम।"

"कहाँ तक जायगा?"

"पानी पूरा मिलने से बनारस तक जाता है।"

यह सुनकर रमेश तुरन्त उस स्टीमर पर जाकर कमला को एक कमरे में बिठा आया और झट पट थोड़ा दूध, चावल, दाल मोल ले ली।

इधर अक्षय रेलवे ष्टीमर पर सब यात्रियों के पहले एक ऐसी जगह में जा खड़ा हुआ, जहाँ से अन्यान्य यात्रिगण जहाज़ पर सवार होते समय स्पष्ट देख पड़ें। यात्रियों की विशेष भीड़ भाड़ न थी। जहाज़ रवाना होने में कुछ विलम्ब था, यह अवकाश पाकर कितने ही यात्रियों ने मुँह हाथ धोकर, स्नान कर लिया। कितने ही किनारे बैठ कर कुछ खाने पीने लगे। अक्षय गोयालंद से परिचित न था। उसने समझा, यहाँ पास ही कोई होटल होगा, रमेश कमला को लेकर कुछ खाने पीने गया होगा।

जब आखिरी जहाज़ खुलने की सीटी बजने लगी तब भी रमेश कहीं दिखाई न दिया। सीटी सुन कर सभी मुसाफ़िर

हड़बड़ा कर दौड़े, और डोलते हुए तख्ते पर से होकर जहाज़ पर जमा होने लगे। वारंवार सीटी सुन कर लोगों की भीड़ क्रमशः बढ़ने लगी। अक्षय ने आँखें फाड़ फाड़ कर चारों ओर देखा, रमेश का कहीं कोई चिह्न मात्र भी दिखाई न दिया। जब सभी मुसाफ़िर जहाज़ पर सवार हो चुके तख़्ता खींच लिया गया। लङ्गर उठा लेने का हुक्म दे दिया गया। तब अक्षय घबरा कर बोल उठा—"मैं उतरूगा।" पर ख़लासियों ने उसकी बात पर कान न दिया। किनारा ष्टीमर से दूर न था। अक्षय ज़मीन पर कूद पड़ा।

किनारे आकर भी अक्षय को रमेश की कुछ ख़बर न लगी। कुछ देर हुई, गोयालन्द से सवेरे की पैसिञ्जर ट्रेन कलकत्ते की तरफ गई है। अक्षय मन ही मन सोचने लगा, "कल रात को गाड़ी में सवार होते समय कर्मचारी के द्वारा उसकी धर पकड़ होने से वह अवश्य रमेश से देखा गया, और उसकी नियत बुरी जान कर रमेश देश न जाकर सवेरे की गाड़ी से फिर कलकत्ते लौट गया। कलकत्ते में यदि कोई आदमी छिपकर रहना चाहे तो उसे बाहर करना सहज नहीं।

बाईसवाँ परिच्छेद

अक्षय दिन भर गोयालन्द में किसी तरह छटपटा कर रहा। सायङ्काल की डाकगाड़ी में सवार हुआ। दूसरे दिन सवेरे ही कलकत्ते पहुँच कर उसने पहले रमेश के दर्जीपाड़े, के मकान जा कर देखा, उसका दर्वाज़ा बन्द था, पूछने पर मालूम हुआ, वहाँ कोई नहीं आया है।"

कोलूटोला में आकर देखा। रमेश का घर सूना पड़ा है। आख़िर उसने घनानन्द बाबू के यहाँ आकर योगेन्द्र से कहा—"भाग गया। खोजने पर भी उसे न पकड़ सका।

योगेन्द्र—"सो क्यों?"

अक्षय ने उसके भाग निकलने का सारा वृत्तान्त कह सुनाया।

अक्षय को देखकर रमेश कमला को लेकर भाग गया।

इससे रमेश पर योगेन्द्र का सन्देह और भी दृढ़ हो गया।

योगेन्द्र ने कहा—"इन सब युक्तियों से कुछ न होगा। सिर्फ़ नलिनी ही नहीं, पिता भी इसी एक बात को पकड़े हुए हैं। वे कहते हैं, रमेश के मुह से जब तक वे आख़िरी बात

सुन न लेंगे, उस पर अविश्वास न करेंगे। यही क्या, अगर रमेश आज भी आकर कहदे कि "मैं अभी कुछ न कहूँगा।" तो भी पिता उसके साथ नलिनी का ब्याह कर देने में कुछ आगा पीछा न करेंगे। मैं इन सबों की बात में पड़ कर भारी मुश्किल में पड़ा हूँ। पिताजी नलिनी का कुछ भी कष्ट नहीं देख सकते। यदि नलिनी आज यह हठ पकड़े कि "रमेश के भलेही दूसरी स्त्री हो, मैं उसीसे ब्याह करूँगी तो पिता उसी में सहमत हो जाँयगे। जैसे हो सके और जितना शीघ्र हो सके, रमेश के द्वारा वह बात कहलानी होगी। तुमको हताश, होने से न बनेगा। मैं ख़ुद इस कार्य में लग पड़ता, परन्तु मैं कार्य सिद्ध करने का ढङ्ग नहीं जानता। मुझसे बहुत होगा तो यही कि रमेश के साथ मारपीट की नौबत आजायगी। जान पड़ता है, तुमने अभी मुँह हाथ नहीं धोये हैं। चाय भी तो नहीं पी होगी।"

अक्षय मुह धोकर चाय पीते पीते सोचने लगा। इसी समय घनानन्द बाबू नलिनी का हाथ पकड़े चायघर में आये। अक्षय को देखते ही नलिनी उलटे पैर घर से बाहर हो गई।

योगेन्द्र ने क्रोध कर के कहा—"नलिनी की यह बड़ी अशिष्टता है। पिता जी! आप उस अभद्र व्यवहार में योग न दें। उसको यहाँ आना उचित है, ऐसे न आवेगी तो मैं उसे बलपूर्वक यहाँ ले आऊँगा।" यह कह कर वह नलिनी को पुकारने लगा।

नलिनी तब तक ऊपर चली गई। अक्षय ने योगेन्द्र से कहा—"देखता हूँ, तुम उस मामले को और भी ख़राब कर

दोगे। उसके सामने मेरे सम्बन्ध की कोई बात न बोलो। समय पर उसका प्रतीकार हो जायगा। ज़बरदस्ती करने से सब बात बिगड़ जायगी।"

अक्षय चाय पी कर चला गया। अक्षय अब तक अधीर न हुआ था। उसके हृदय की धीरता बनी थी। सभी लक्षण उसके प्रतिकूल थे। तब भी वह अपने उद्योग पर भरोसा किये बैठा था। उसके मानसिक भाव में भी किसी तरह का फ़र्क न पड़ा था। वह जिस बात को मन में ठाने था, उस पर अटल विश्वास किये था। एकबार अकृतकार्य होने पर वह सहसा मुँह उदास कर उससे पराङ्मुख न होता था। अपनी कार्य-सिद्धि के हेतु अनादर और अपमान को चुपचाप सह लेता था। वह बड़े प्रौढ़ हृदय का पुरुष था। उसके साथ कोई किसी तरह का व्यवहार क्यों न करे, पर वह अपने सिद्धान्त से सहसा विचलित न होता था।

अक्षय के चले जाने पर घनानन्द बाबू फिर नलिनी को साथ ले कर चायटेबुल के पास आये। आज नलिनी का मुँह उदास है। उसके नेत्रके नीचे काली झाँई पड़ गई है। घर में आते ही उसने आँखें नीची करलीं। योगेन्द्र के मुँह की ओर वह नज़र न उठा सकी। वह जानती थी, योगेन्द्र उस पर और रमेश पर नाराज़ हैं, तथा उन दोनों के विरुद्ध विचार कर रहा है। इसलिए योगेन्द्र से बोलना या उसकी ओर आँख उठा कर देखना उसके लिए एक कठिन समस्या हो पड़ी।

यद्यपि प्रेम ने नलिनी के विश्वास को अविचल कर रक्खा था, तथापि युक्ति को कोई एकदम बहिष्कृत कैसे कर सकता

है ? नलिनी योगेन्द्र के सामने कल अपने विश्वास की दृढ़ता दिखाकर चली गई। किन्तु अन्धेरी रात को जब वह अपने शयनागार में चारपाई पर पड़ी थी तब उसका वह धैर्य वह मानसिक बल न रहा। वस्तुतः कुछ दिन पहले ही से रमेश के व्यवहार का कुछ तत्त्व उसे मालूम न होता था। सख़्त चोट लगने से माँ जिस तरह बच्चे को दोनों हाथों से पकड़ कर छाती से लगा कर उसकी रक्षा करती है नलिनी ने भी रमेश के प्रति दृढ़ विश्वास को सब प्रमाणों के ख़िलाफ़ जान कर भी उसी तरह बलपूर्वक छाती से दबा रक्खा। परन्तु बल क्या सब समय में बराबर रह सकता है ?"

नलिनी के शयनगृह की पास वाली कोठरी में घनानन्द बाबू सोये थे। नलिनी जो चारपाई पर बराबर करवटें बदलती थी, वह उन्हें मालूम होता था। वे बीच बीच में उठ कर उस के घर के द्वार पर जाकर कहते—"बेटी, क्या तुम्हें नींद नहीं आती ?" नलिनी कहती थी—"आप क्यों जागे हुए हैं ? मैं ऊँघ रही थी, अभी सो रहूँगी।"

दूसरे दिन सवेरे उठकर नलिनी छत के ऊपर घूमने गई—रमेश के घर के दरवाज़े और खिड़कियाँ सब बन्द थीं।

धीरे धीरे सूर्य भगवान् बहुत ऊपर उठ आये। नलिनी के लिए आज का यह दिन ऐसा सूना, ऐसा आशाहीन और ऐसा निरानन्द जान पड़ा कि वह छत के एक कोने में बैठ कर दोनों

हाथों से मुँह ढाँक कर रो उठी—आज दिन भर में कोई एकबार भी न आवेगा, चाय पीने के समय किसी के आने की आशा नहीं। पास वाले घर में कोई है, यह कल्पना करने का सुख भी न रहा।

नलिनी ने झट उठ कर आँखें पोंछ डालीं, पिता को आते देख कर बोली—"क्या है?"

घनानन्द बाबू नलिनी की पीठ पर हाथ रख कर बोले—"आज मेरे उठने में बहुत विलम्ब हो गया।"

घनानन्द बाबू मारे चिन्ता के रात भर जगे थे। सवेरे उन्हें नींद आई। मुँह पर सूर्य का प्रकाश पड़ते ही वे झट उठे। मुँह हाथ धोकर नलिनी की ख़बर लेने गये। घर में कोई न था। सवेरे उसे ,छत पर अकेली घूमते देख उनके हृदय में बड़ी चोट लगी। उन्होंने कहा—"बेटी! चलो, चाय पीने चलो।"

योगेन्द्र के सामने बैठकर चाय पीने की इच्छा नलिनी की न थी, पर वह जानती थी, नियम के विरुद्ध कोई काम होने से उसके पिता के मन में दुःख होता है। वह प्रतिदिन अपने हाथ से पिता के गिलास में चाय डाल कर पीने को देती थी। इस पितृसेवा से उसने अपने को वञ्चित करना न चाहा।

नीचे जाकर चाय घर में पहुँचने के पूर्व जब उसने बाहर से योगेन्द्र को किसी के साथ बात करते सुना, तब उसकी

छाती धड़क उठी। उसने जाना, शायद रमेश आया है। इतने सवेरे यहाँ और कौन आवेगा ?"

थरथराते हुए पैर से घर में प्रवेश करके ज्यों ही अक्षय-कुमार को देखा त्यों ही वह अपने को न रोक सकी, उलटे पैर वह घर से बाहर हो गई।

घनानन्द बाबू जब उसे दूसरी वार घर में ले आये, तब वह अपने पिता की कुरसी के पास खड़ी हो कर मुंह नीचा करके पिता के लिए चाय तैयार करने लगी।

योगेन्द्र नलिनी के व्यवहार से बहुत रुष्ट था। नलिनी रमेश के लिए इतना खेद कर रही थी, यह उसे बहुत असह्य जान पड़ता था। इसपर भी उसने जब देखा कि घनानन्द बाबू उसके दुःख के साथी हैं और वह भी उन्हीं की स्नेह छाया में रहकर अपने को सुरक्षित समझती है, तब ईर्ष्या और भी बढ़ गई। वह मन में कहने लगा। सब मानो उसके लिए भारी अन्याय करता हैं। हम सब जो उसके स्नेहवश होकर कर्तव्य-पालन की चेष्टा कर रहे हैं, हम लोग जो उसके यथार्थ रूप से हितसाधन में प्रवृत्त हैं। इसके लिए कृतज्ञता प्रकाश करना तो दूर रहे, उलटे हमी लोगों को वह मन ही मन दोषी बना रही है। पिताजी तो व्यवहार की बात कुछ जानते ही नहीं। अभी आश्वासन देने का समय नहीं है। बाधा देने का समय है। यह न करके वे उसकी रुचि रखना ही अच्छा समझते हैं।"

योगेन्द्र ने घनानन्द बाबू से कहा—"आपको मालूम नहीं, क्या हुआ है ?"

घनानन्द—"नहीं। कहो, क्या हुआ है ?"

योगेन्द्र—"रमेश कल अपनी स्त्री को लेकर गोयालन्द मेल से अपने घर जा रहा था। अक्षय को उसी गाड़ी में चढ़ते देख वह घर न जाकर फिर कलकत्ते लौट आया है।"

नलिनी का हाथ काँप उठा—वह गिलास में चाय ढाल रही थी। चाय उसके हाथ से गिर पड़ी। वह पिता के पास दूसरी कुरसी पर बैठ गई।

योगेन्द्र एक बार उसके मुँह की ओर देखकर कहने लगा, रास्ते से लौट आने की क्या ज़रूरत थी, यह मैं नहीं कह सकता। अक्षय तो पहले ही से उसकी सब बात जानता था। एक तो उसका वह कपट व्यवहार, उस पर भी स्त्री को लेकर चोर की तरह चारों ओर भागते फिरना, मुझे बड़ा ही बुरा लगता है।

नलिनी इस विषय को कैसा समझती है वह वही जाने। परन्तु उसके कपटजाल के अनेक प्रमाण मिलते हैं। नलिनी ने काँपते काँपते खड़ी होकर पिता से कहा—"मैं प्रमाण नहीं चाहती, आप सब उनके व्यवहार का प्रमाण ढूँढकर जो विचार करना चाहें करें। मैं उनकी विचारक नहीं।"

योगेन्द्र—"तुम्हारे साथ जिसका ब्याह होगा, उससे हम सबों का कोई सम्बन्ध न रहेगा ?"

नलिनी—"मैं ब्याह की बात नहीं करती। तुम इस सम्बन्ध को भले ही तोड़ दो; तुम्हारी इच्छा। किन्तु मेरा मन तोड़ने की चेष्टा तुम वृथा कर रहे हो।" यह कहते कहते नलिनी का कण्ठ रुद्ध हो गया। उसकी आँखों में आँसू भर आये। घना-नन्द बाबू ने उसका हाथ पकड़ कर कहा—"चलो बेटी! हम तुम ऊपर चलें।"

तेईसवाँ परिच्छेद

स्टीमर खुल गया। पहली और दूसरी श्रेणी के कमरे में कोई मनुष्य न था। रमेश ने एक कमरा पसन्द करके उसमें अपना बिस्तरा लगाया। सवेरे दूध पीकर उस कमरे की खिड़की खोलकर कमला नदी और नदी का तट देखने लगी। रमेश ने कहा—"कमला, जानती हो हम सब कहाँ जा रहे हैं?"

कमला—"अपने देश को जा रहे हैं।"

रमेश—"अपना देश तो तुम्हें अच्छा नहीं लगता। हम देश नहीं जायँगे।"

कमला—"क्या आपने मेरे ही लिए देश जाना बन्द कर दिया?"

रमेश—"हाँ, तुम्हारे ही लिए।"

कमला ने ज़रा मुँह भारी करके कहा—"ऐसा आपने क्यों किया? मैंने एक दिन बात ही बात में कुछ कह दिया। उसी पर आप इतने नाराज़ हो गये। आपको थोड़े ही में क्रोध हो आता है।"

रमेश ने हँसकर कहा—"मैं कुछ भी क्रोध नहीं करता। मेरी भी इच्छा देश जाने की नहीं है।"

कमला ने उत्सुक चित्त से पूँछा—"तो हम सब कहाँ जा रहे हैं?"

रमेश—"पश्चिम।"

पश्चिम का नाम सुनकर कमला आँखें फाड़ कर रमेश की ओर देखने लगी। जिन लोगों ने घर छोड़ कभी परदेश का मुँह नहीं देखा। उन्हें एकाएक पश्चिम जाने का नाम सुनकर कितना हर्ष होता है, यह वही बता सकते हैं। पश्चिम में कितने ही तीर्थ हैं, कितने ही अच्छे अच्छे शहर हैं, कितनी ही राजा और सम्राट् की पुरानी कीर्तियाँ हैं। कितने ही कारुनिर्म्मित देव मन्दिर हैं, कितनी ही पुरानी बातें और वीरता के इतिहास हैं।

कमला ने पुलकित होकर पूँछा—"पश्चिम में हम सब कहाँ जा रही हैं?"

रमेश—"उसका कुछ निश्चय नहीं। मुँगेर, पटना, दानापुर बक्सर, ग़ाज़ीपुर, काशी, इन जगहों में कहीं एक जगह उतर जायँगे।"

इन कितने जाने और कितने अनजाने शहरों का नाम सुनकर कमला की कल्पनावृत्ति और भी उत्तेजित हो गई उसने ताली पीटकर कहा—"वाह! तब तो ख़ूब मज़ा होगा।"

रमेश—"मज़ा तो पीछे होगा, पहले यह तो बताओ कि खाने पीने का क्या प्रबन्ध होगा? तुम नौकर के हाथ का पकाया खा सकोगी?"

कमला ने घृणा से नाक सिकोड़ कर कहा—"नहीं, नहीं, मैं न खा सकूँगा।"

रमेश—"तो दूसरा क्या उपाय करोगी।"

कमला—"मैं खुद रोटी पका लूँगी।"

रमेश—"पकाना जानती हो ?"

कमला ने हसकर कहा—"आप मुझे क्या समझते हैं ? मैं सब जानती हूँ। घरका कोई काम ऐसा नहीं जो न कर सकूँ। मामा के घर तो मैं ही रसोई बराबर बनाती थी।"

रमेश ने खेद प्रकाश करके कहा—"इसी से तुम्हारे साथ प्रश्न करना ठीक न हुआ। अच्छा, तो अब रसोई पानी का प्रबन्ध करना ठीक है।"

इतना कहकर रमेश चला गया और एक लोहे का चूल्हा कहीं से ले आया। साथ ही इसके काशी तक पहुँचा देने का ख़र्च और कुछ वेतन का लोभ देकर उसने उमेश नामक एक कहार के बालक को भी काम करने के लिए रख लिया।

रमेश—"कमला, आज क्या रसोई होगी ?"

कमला—"दाल चावल मौजूद है। कहिए तो खिचड़ी चढ़ा दूँ।"

रमेश कहीं से खिचड़ी का थोड़ा मसाला माँग लाया। रमेश की अनभिज्ञता देख कमला हँस उठी। बोली, सिर्फ़ मसाला लेकर क्या करूँगी ? सिल लोढ़ा तो हई नहीं, मसाला कैसे पीसा जायगा ? जब आप मसाला लाने लगे तब आपको सिल लोढ़े का भी तो ख़याल करना मुनासिब था।

बालिका के इस मधुर तिरस्कार को चुपचाप सहकर रमेश सिल लोढ़े की खोज में गया। सिल लोढ़ा तो न मिला, पर कुछ देर में वह कहीं से एक हमामदिस्ता माँग कर ले आया।

हमामदिस्ते में मसाला कूटने का अभ्यास कमला को न था, तो भी लाचार होकर उसी में मसाला कूटने लगी।

रमेश ने कहा—"तुम कहो तो मसाला किसी से पिसाकर ले आऊँ।"

कमला ने ऐसा पसंद न किया। वह आपही उत्साहपूर्वक मसाला कूटने लगी। इसमें उसे विशेष कौतूहल बोध होने लगा। मसाला छिटक कर जो नीचे गिर पड़ा था, यह उसके हसने का विशेष कारण हुआ, मसाला गिरते देख वह अपनी हसी को न रोक सकती थी। उसको हँसते देख रमेश भी सहज ही हँस पड़ता था।

इस प्रकार मसाले को किसी तरह कूट पीस, आँचल के दोनों छोर कमर में खोंसकर एक घिरी जगह में कमला ने रसोई चढ़ा दी।। कलकत्ते से एक हाँडी में कुछ मिठाई लाई गई थी। उसी से काम चला लिया गया।

रसोई चढ़ा कर कमला ने रमेश से कहा—"आप जाइए, शीघ्र स्नान कर आइए, रसोई होने में अब देर नहीं है।"

इधर रसोई तैयार हुई, उधर रमेश स्नान कर आया। अब यह प्रश्न उठा कि थाली तो साथ में है नहीं, भोजन कैसे होगा? खिचड़ी किसमें परोसी जायगी?"

रमेश ने डरते डरते कहा—"कहो तो किसी खानसाम से एक रकाबी माँग लाऊँ?"

कमला—"छीः!"

रमेश ने कोमल स्वर में कमला को जता दिया कि ऐसा अनाचार पूर्व में भी उससे कई वार हो चुका है।

कमला ने कहा—"पहले जो हुआ सो हुआ। अब वह बात न होगी। मैं ऐसा अनाचार देख न सकूगी।"

जिस ढकनी से हाँड़ी का मुह ढका था, वह उसी को अच्छी तरह धोकर ले आई। कहा, आज आप इसी में खाइए, कल से देखा जायगा।"

कमला ने अपने हाथ से चौका आसन ठीक करके रसोई परोसी। रमेश पवित्रतापूर्वक भोजन करने बैठा। दो एक कौर खाकर रमेश ने कहा—"वाह! खिचड़ी बहुत अच्छी बनी।"

कमला ने लजा कर कहा—"जाइए, आपको सभी बातों में ठट्ठा ही सूझता है।"

रमेश—"ठट्ठा नहीं, मैं सच कहता हूँ। 'हाथ-कङ्गन को आरसी क्या है।' कुछ देर में देखोहोगी। "यह कहते कहते उसने आगे का अन्न निःशेष कर फिर कुछ लेना चाहा। कमला ने अब की वार ख़ूब यथेष्ट परोस दिया। रमेश न घबरा कर कहा—"कुछ अपने लिए भी रक्खी है, या सब मेरे ही आगे परोस दी?"

कमला—"अभी बहुत है। उसके लिए आप चिन्ता न करो।"

रमेश के तृप्तिपूर्वक भोजन करने से कमला बहुत प्रसन्न हुई। रमेश ने पूछा—"तुम किस बर्तन में भोजन करोगी?"

कमला—"क्यों? इसी ढकनी में।"

रमेश ने कहा—"नहीं, नहीं, यह न होगा। तुम जूठे बर्तन में कैसे खाओगी?"

कमला ने कहा—"क्यों न खाऊँगी?"

रमेश—"नहीं, यह नहीं हो सकता।"

कमला—"अच्छी तरह हो सकता है। मैं सब ठीक कर लेती हूँ।"

"उमेश! तुम कैसे खाओगे?"

उमेश—"नीचे हलवाई पूरी मिठाई बेच रहा है, मैं उससे एक पत्ता माँग लाता हूँ?"

रमेश ने कमला से कहा—"अगर तुम ढकनी ही में खाओगी तो मुझे दो, मैं उसे अच्छी तरह धोकर ला देता हूँ?"

कमला—"आप को क्या हो गया है!" कुछ देर बाद फिर उसने कहा—"मैं बीड़ा न लगा सकी। आपने पान तो मँगाया ही नहीं।"

रमेश—"नीचे तम्बोली पान बेचता है। ले आता हूँ।"

इस तरह पाकप्रणाली का सब काम बड़ी सुगमता के साथ ठीक हो गया। रमेश मन ही मन उद्विग्न होकर सोचने लगा—"दाम्पत्य भाव को इस तरह कब तक परदे में रख सकूँगा?"

गृहिणी पद-प्राप्त करने के लिए कमला को किसी की सहायता या शिक्षा की आवश्यकता न थी। कारण यह कि वह मामा के घर रह कर घर का सब काम धन्धा करना सीख गई

थी, रसोई बनाती थी, घर की सब वस्तुओं को बड़ी हिफ़ाज़त से रखती थी। उस पर भी वह रोज़ रोज़ मामा और मामी की घुड़कियाँ सहती थी।

कमला की दक्षता, तत्परता और कार्य करने का उत्साह देखकर रमेश बहुत प्रसन्न हुआ, पर साथ ही यह भी सोचने लगा कि भविष्यत् में इसे लेकर कैसे घरका काम चलाया जा सकेगा? इसे कैसे पास रक्खूँगा या दूर कर सकूँगा? हम दोनों के बीच जो एक यवनिका गिरी है उसे कौन उठावेगा? अगर हम दोनों के बीच इस समय नलिनी होती तो अनायास ही यवनिका उठ जाती। किन्तु इस आशा को यदि एकदम त्याग देना ही पड़े तो मैं अकेला कमला की समस्त समस्याओं की मीमांसा कैसे कर सकूँगा, यह कठिन जान पड़ता है। आखिर उसने निश्चय किया कि कमला से सब बातें खोल कर कह देना ही उचित है। अब इन बातों को छिपा रखने से बड़ी गड़बड़ी होगी।"

चौबीसवाँ परिच्छेद

अभी दिन पहर भर भी न चढ़ा होगा कि स्टीमर एक बालू के टीले में लग कर अटक गया। अनेक प्रयत्न करने पर भी ष्टीमर न चला। कछार के नीचे बहुत दूर तक बालू का मैदान आकर नदी के जल से मिला था। जिस पर जलचर पक्षियों के पैरों के चिह्न हो रहे थे। नदी के निकटवर्ती गाँव की स्त्रियाँ सिर पर घड़ा लेकर वहाँ पानी लेने के लिए आई थीं। उन में कितनी ही मुँह पर बिना घूँघट डाले और कितनी ही युवतियाँ घूँघट डाले ष्टीमर की ओर देख कर अपने मन के कुतूहल को मिटा रही थीं। गाँव के लड़के सब किनारे खड़े हो कर जहाज़ के रुक जाने से एक कुतूहल समझ खूब ज़ोर से चिल्ला चिल्ला कर उछल रहे थे।

ष्टीमर दिन भर वहीं अटका रहा। क्रमशः सूर्यास्त हुआ। रमेश जहाज़ का रेलिङ्ग पकड़ कर चुपचाप सूर्यास्त समय की शोभा देखने लगा। कमला अपनी रसोई बनाने की जगह से धीरे धीरे आकर कमरे के दरवाज़े के पास खड़ी हुई। जब देखा कि रमेश शीघ्र पीछे की ओर मुँह न फिरावेगा, तब वह दो एक बार धीरे से खाँसी। इससे भी कोई फल न हुआ। आख़िर वह अपनी कुञ्जियों के गुच्छे से किवाड़ खटखटाने लगी। जब शब्द अधिक हुआ तब रमेश ने मुँह फिराया। कमला को खड़ी देख कर वह उसके पास आया और बोला—"यह तुम्हारे पुकारने की कैसी युक्ति है ?"

कमला—"और कैसे पुकारू ?"

रमेश—"क्यों ? मेरे बाप ने मेरा नामकरण क्यों किया था ? यदि वह किसी व्यवहार में न आया तो वह एक प्रकार से व्यर्थ ही हुआ। काम के समय तुम मुझको रमेश बाबू कह कर पुकारो तो क्या हर्ज ?"

कमला ने फिर इस बात को ठट्ठा ही समझा। उसका मुँह सायंकालिक लालिमा से जो लाल था वह और भी लाल हो गया। उसने ज़रा गर्दन टेढ़ी करके कहा—"आप क्या क्या कहा करते हैं ! सुनिए, आपका भोजन तैयार है। सबेरे ही कुछ खा लीजिए, आज दिन में आपको अच्छी तरह भोजन न मिला।"

नदी की ठण्ढी हवा लगने से रमेश को भूख मालूम होती थी; किन्तु सामग्री के अभाव से कमला व्यग्र हो पड़ेगी; इसके लिए वह कुछ न बोलता था। ऐसे समय में अयाचित भोजन के संवाद से उसके मन में जो सुख उत्पन्न हुआ; उसमें एक विचित्रता भरी थी। वह केवल शीघ्र क्षुधा निवृत्त होने की विचित्रता न थी। विचित्रता यह थी कि रमेश कुछ न जानता था, तो भी उसके आहार की चिन्ता कमला के मन में जागृत थी। कमला रमेश को सुखी रखने की चेष्टा में सदा लगी रहती है। यह देख कर रमेश को उस पर बड़ी ही श्रद्धा उत्पन्न हुई; परन्तु वह उसको प्राप्य न थी। इतनी बड़ी बात केवल भ्रम के ऊपर खड़ी थी, इस बात का कठिन आघात उसके हृदय में लगा। उसने सिर झुकाकर एक लम्बी साँस ले कमरे के भीतर प्रवेश किया।

कमला ने उसके मुह का भाव देखकर आश्चर्यान्वित होकर कहा—"मालूम होता है, आपकी इच्छा अभी खाने की नहीं है। क्या आपको भूख नहीं लगी है? क्या मैं आपको ज़िद करके खिलाना चाहती हूँ?"

रमेश ने झट मुह पर प्रसन्नता का भाव झलका कर कहा—"ज़िद काहे की? मेरे पेट में आपही आग लगी है। अभी तो तुम भले ही कुआँ झनकार कर बुला लाई हो, परोसने के समय मालूम होगा।" यह कहकर रमेश ने चारों ओर देखकर कहा—"खाने की वस्तु तो कहीं कुछ नज़र नहीं आती। क्षुधा का वेग अधिक होने पर भी घर के ये सब असबाब मुझे हज़म न होंगे, लड़कपन से मेरे खाने पीने का दूसरा अभ्यास है। रमेश ने कमरे की कुरसी, चारपाई आदि वस्तुओं की ओर उङ्गली उठाकर दिखाई।"

कमला खिलखिलाकर हँस उठी। हँसी का वेग रुकने पर बोली—"जान पड़ता है, अब आप मारे भूख के अधीर हुए जाते हैं? पहले आपको भूख प्यास न थी। पर मेरे पुकारते ही आपको भूख की याद आई। अच्छा आप दो एक मिनट धैर्य से बैठें, मैं अभी जलपान की वस्तु ले आती हूँ।"

रमेश—"देरी होने से ये मेज़ स्टूल, और कुरसी आदि कुछ देखने में न आवेगा। पीछे मुझे दोष न देना।"

इस हास्य-विनोद से कमला को बड़ी ख़ुशी हुई। वह फिर हँसने लगी। हँसते हँसते वह रसोई बनाने की जगह से जल पान लाने गई। रमेश के कृत्रिम प्रफुल्लमुख पर फिर उदासी छा गई।

कमला साखू के पत्ते से ढकी हुई कुछ चीज हाथ में लिए शीघ्र ही कमरे मे आई। उसको चारपाई पर रखकर आँचल से मेज़ झाड़ने लगी।

रमेश ने जल्दी से पूछा—"यह क्या कर रही हो?"

कमला—"आप देखते तो रहिए, मैं क्या कर रही हूँ।" कहकर उसने मेज़ पर पत्ता बिछाकर उस पर पूरी तरकारी रख दी।

रमेश ने कहा—क्या ही आश्चर्य है! तुमने पूरी कैसे बनाई? कमला ने मुस्कराकर कहा—"आप ही बताइए, यह कैसे बनी?"

रमेश ने कठिन चिन्ता की मुद्रा करके कहा—"ज़रूर ही तुम दुकान से मोल लाई हो।"

कमला ने तमक कर कहा—"कभी नहीं, राम का नाम लो।"

रमेश ने खाते खाते पूरी के सम्बन्ध में अनेक असम्भव के द्वारा कमला को चिढ़ा डाला। जब उसने कहा—"आरब्योपन्यास के जादूगर अलाउद्दीन ने बेलूचिस्तान से गरमागरम पूरी तैयार कराकर दैत्य के द्वारा सौगात भेजी है।" तब कमला अधीर हो उठी। उसने मुँह फेर कर कहा—"जाइए, मैं अब आपसे न बोलूँगी!"

रमेश ने डर कर कहा—"नहीं, नहीं, मैं अनुमान करके थक गया। पर कोई कारण स्थिर न कर सका कि तुम्हें इस

बीच दरया में पूरी का सामान कैसे मिला। कारण न मालूम हुआ तो न हो, खाने में तो अच्छा मालूम होता है।" यह कह कर रमेश एकाग्र मनसे जठरानल की ज्वाला शान्त करने लगा।

जहाज़ सूखे में अटका देख कर कमला ने बस्ती से भोजन की आवश्यक सामग्री मोल ले आने के लिए उमेश को भेजा था। कमला जब स्कूल में थी तब रमेश ने उसको कुछ रुपये जलपान के लिए दिये थे, उन्हीं में से उसने कुछ बचा रक्खा था। उसीसे उसने थोड़ा घी और आटा मोल मँगा लिया। कमला ने उमेश से पूछा—"तुम क्या खाओगे?"

उमेश—"गाँव में एक ग्वाले के घर बहुत बढ़िया दही देख आया हूँ। केला अपने घर में ही मौजूद है। दो एक पैसे का चिउड़ा और कुछ फल मोल मिल जाने से आज भर पेट फलाहार हो जायगा। आपकी दया होगी तो आज मेरा यही भोजन होगा।"

उस लड़के की रुचि फलाहार करने की देख कर कमला उत्साहपूर्वक बोली—"कुछ पैसे बचे हैं?"

उमेश—"कुछ भी नहीं।"

कमला बड़ी कठिनाई में पड़ गई। रमेश से मुँह खोल कर कैसे रुपया माँगेगी, यही सोचने लगी। कुछ देर के बाद बोली—"अगर तुम्हारे नसीब में आज फलाहार न बदा हो तो पूरी ही सही, चलो आटा गूँध लें।"

उमेश ने कहा—"मगर दही ऐसा उमदा देख आया हूँ, सो आपसे क्या कहूँ।"

कमला—"देखो उमेश ! बाबू जब खाने को बैठ, तब तुम सौदा लाने के लिए पैसा माँगने आना ।"

रमेश जब कुछ भोजन कर चुका तब उमेश उसके सामने आ खड़ा हुआ । रमेश ने सिर उठा कर उसकी ओर देखा ।

उसने धीरे स्वर में कमला से कहा—"माँ, बाज़ार के लिए कुछ पैसा चाहिए ।"

तब रमेश को चेतना हुई कि भोजन की तैयारी करने में रुपये की ज़रूरत होती है । जादूगर की अपेक्षा करने से काम नहीं चल सकता ।" उसने कमला से कहा—"तुम्हारे पास तो रुपया नहीं है, मुझे क्यों नहीं याद दिलाया ?"

कमला ने मौन साध अपराध स्वीकार कर लिया । भोजन करके रमेश ने कमला के हाथ में एक छोटा सा कैश बक्स दे कर कहा—"यह लो, इसमें से रुपया निकाल कर जो ख़र्च ज़रूरी हो, करो ।"

यों गृहस्थ का कुल भार मेरे हाथ से धीरे धीरे कमला के हाथ में जा रहा है, यह रमेश जहाज़ का रेलिंग पकड़ कर मन ही मन सोचने और पश्चिम आकाश की ओर देखने लगा । पश्चिम आकाश की ओर देखते ही देखते उसकी आँखों के चारों ओर अन्धकार छा गया ।

उमेश ने आज भर पेट चिउड़ा दही और केले का फलाहार किया । कमला उसके सामने खड़ी होकर उसका सारा जीवन वृत्तान्त पूछने लगी ।
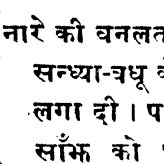
वह सौतेली माँ से सताया जाकर घर से विरक्त हो अपनी नानी के पास काशी भागा जा रहा था । उसने कमला

से कहा—"माँ! यदि तुम अपने पास रक्खो, तो मैं कहीं न जाउगा।"

मातृहीन बालक के मुह से 'मा' सम्बोधन सुन कर बालिका के कोमल हृदय में मातृभाव का सञ्चार हुआ। कमला ने करुणा भरे स्वर में कहा—"अच्छा तो, उमेश, तुम हमारे ही साथ रहो।"

पचीसवाँ परिच्छेद

किनारे की वनलता ने अपनी श्यामल छटा से सन्ध्या-वधू के सुनहले आँचल में कालीगोट लगा दी। पक्षीगण दिन भर अन्यत्र चर कर साँझ को अपने अपने घोंसले में आकर कलरव से जङ्गल की निस्तब्धता भङ्ग करने लगे। नदी में उस समय एक भी नाव न थी; सिर्फ एक बड़ी डोंगी निस्तरङ्ग जल के ऊपर से धीरे धीरे चली जा रही थी।

रमेश जहाज़ की छत पर खड़ा होकर नवोदित शुक्ल-पक्ष के चन्द्रमा की शोभा देख रहा था।

धीरे धीरे पश्चिम आकाश से सन्ध्या काल की सुनहली रेखा लुप्त हो गई। चन्द्रमा की चटकीली चाँदनी की ऐन्द्रजालिक शक्ति से सारा संसार मुग्ध सा हो गया। ऐसे समय में रमेश को नलिनी का स्मरण होते ही उसका सर्वाङ्ग कण्टकित हो गया। आँखों में आँसू भर आये। उसका पिछले दो वर्ष का समस्त जीवन-वृत्तान्त उसकी आँखों के सामने नाचने लगा। नलिनी के साथ उसके प्रथम परिचय का दिन स्मरण हो आया। उस दिन को रमेश अपने जीवन का एक विशेष दिन जान कर मन ही मन सोचने लगा,—"योगेन्द्र जब उसे अपने चाय-टेबुल के पास ले गया, वहाँ नलिनी को बैठी देख कर लज्जाशील रमेश ने अपने को भारी विपज्जाल में फँसा समझा। धीरे धीरे उसकी लज्जा भङ्ग हुई। वह नलिनी

के साथ मिल जुल गया। वही मेल मिलाप रमेश के बन्धन का कारण हुआ। रमेश ने काव्य-साहित्य में जो कुछ प्रेम की कहानी पढ़ी थी, वह नलिनी के ऊपर आरोपित करने लगा।" मैं प्रेमिक हूँ, प्रेम करना जानता हूँ" इसका अभिमान उसके मन में उत्पन्न हुआ। इसके सहपाठी परीक्षोत्तीर्ण होने के लिए प्रेम की कविता का अर्थ कण्ठस्थ करके ही अपने को धन्य मानते थे किन्तु रमेश प्रेम को चरितार्थ कर अपने को धन्य मानता था। यह सोच कर वह अन्य छात्रों को कृपापात्र समझता था। रमेश ने अच्छी तरह आलोचना करके देखा, उस दिन भी वह प्रेम के द्वार ही पर था। किन्तु कमला ने अकस्मात् आकर जब उसकी जीवन-समस्या को जटिल कर दिया तब नलिनी के प्रति उसका प्रेम आकार धारण कर उसके हृदय में जाग्रत् हो उठा।

रमेश दोनों हाथ सिर पर रख कर सोचने लगा। उसके जीवन का शेष भाग सामने पड़ा है, किन्तु वर्तमान जीवन संकट-जाल में फँसा है। क्या उस जाल को वह अपने सबल हाथों से काटकर बाहर न हो सकेगा?

दृढ़ संकल्प के आवेश में आकर उसने एकाएक सिर उठा कर देखा, पास ही एक कुरसी पर हाथ टेके कमला खड़ी है। कमला चकित होकर बोली—"मालूम होता है आप सोये थे, मैंने ही आप को जगा दिया।"

कमला को दुखी होकर लौटते देख रमेश ने कहा—"नहीं, नहीं, मैं सोया न था। तुम बैठो, मैं तुमसे एक कहानी कहूँगा।" कहानी का नाम सुनकर कमला पुलकित होकर कुरसी को

ज़रा और आगे बढ़ाकर बैठी। रमेश पहले ही निश्चय कर चुका था, "कमला से सब बातें खोलकर कह देना उचित है।" किन्तु वह इतनी बड़ी गहरी चोट उसे एकाएक न दे सका। इसी से उसने कहा, "बैठो, मैं तुमसे एक कहानी कहूँगा।"

रमेश ने कहा—"एक समय एक जाति के क्षत्रिय थे। वे—"

कमला ने पूछा—"किस समय? कब? क्या बहुत काल पूर्व?"

रमेश—"हाँ, बहुत काल पूर्व। जब तुम्हारा जन्म न हुआ था।"

कमला—"क्या तब आप का जन्म हुआ था? क्या आप बहुत पुराने समय के हैं? अच्छा, उसके बाद।"

रमेश—"उन क्षत्रियों की रीति थी कि वे स्वयं विवाह करने न जाकर तलवार भेज देते थे। उस तलवार के साथ लड़की का ब्याह हो जाने पर उसे घर लाकर फिर उसके साथ ब्याह करते थे।"

कमला—"छीः, छीः, ऐसा भी कहीं ब्याह होता है?"

रमेश—"मैं भी ऐसे ब्याह को पसन्द नहीं करता। किन्तु क्या किया जाय, यह क्षत्रियों की कथा कह रहा हूँ। वे ससुर के घर जाकर ब्याह करने में अपना अपमान समझते थे। मैं जिस राजा की कथा कह रहा हूँ। वह इसी जाति का क्षत्रिय था। वह एक दिन—"

कमला—"वे कहाँ के राजा थे, यह तो आपने कहा ही नहीं।"

रमेश—"वह मद्रदेश का राजा था। एक दिन वह—

कमला—"राजा का नाम क्या था, यह पहले कहिए।"

कमला सब बातों को स्पष्ट कर लेना चाहती थी। "उसके निकट कथा सम्बन्धी कोई विषय छोड़ देने से वह आगे बढ़ने न देगी, यदि यह रमेश पहले से जानता होता तो वह और भी सावधान होकर कहानी कहता। अब उसे मालूम हो गया, कमला को कथा सुनने का जैसा शौक़ है उससे वह कथा में किसी जगह चालाकी करने न देगी।"

रमेश कुछ देर के बाद बोला—"राजा का नाम था रणजीत-सिंह।"

कमला ने याद कर लिया—"रणजीतसिंह, मद्रदेश का राजा। फिर उसने पूछा—तिसके बाद?"

रमेश—"तिस के बाद, एक दिन राजा ने भाट के मुँह से सुना कि उनके स्वजातीय एक राजा के एक परम सुन्दरी बेटी है।"

कमला—"वे कहाँ के राजा थे?"

रमेश—"मान लो, वह काञ्ची का राजा था।"

कमला—"मान लूँ! तो क्या वे यथार्थ में काञ्ची के राजा न थे?"

रमेश—"काञ्ची ही का राजा था। तुम उसका नाम जानना चाहती हो? उसका नाम था अमरसिंह।

कमला—"उस लड़की का नाम कहना तो आप भूल ही गये?"

रमेश—"हाँ, हाँ, सचमुच, मैं कहना भूल गया। उस लड़की का नाम—अच्छा मैं कहता हूँ—उसका नाम—उसका नाम था चन्द्रकला।"

कमला—"आश्चर्य है! आप इसतरह क्यों भूलते हैं? कहीं मेरा नाम भी न भूल जायँ?"

रमेश—"कोशल देश के राजा ने भाट के मुँह से यह वृत्तान्त सुनकर—"

कमला—"कोशल के राजा कहाँ से निकल पड़े? आपने तो मद्रदेश का राजा कहा था।"

रमेश—"क्या तुम समझती हो वह एक ही देश का राजा था? नहीं, वह मद्रदेश का भी राजा था और कोशल का भी।"

कमला—"दोनों राज्य क्या सटे थे?"

रमेश—"हाँ।"

इस तरह वारंवार भूल करते करते और सतर्क कमला के प्रश्न की सहायता से उन सब भूलों का किसी तरह संशोधन करते करते रमेश ने कथा का सिलसिला ठीक कर यों कहना आरम्भ किया।

"मद्रदेश के राजा रणजीतसिंह ने काञ्चीराज के पास उनकी कन्या के ब्याह का प्रस्ताव दूत के द्वारा कहला भेजा।

काञ्ची के राजा अमरसिंह बड़ी ख़ुशी के साथ उनके प्रस्ताव पर सम्मत हुए।

तदनन्तर रणजीतसिंह के छोटे भाई इन्द्रजीतसिंह ने सेना सामन्त को साथ ले रङ्गविरङ्ग की भंढ़िया फहराते भाँति भाँति के बाजे बजाते, डंका पीटते हुए कई दिनों में काञ्ची पहुँच कर एक वाटिका में डेरा डाला। काञ्ची नगर में उत्सव की धूम मचगई।

राजा के पुरोहित ने गणना करके विवाह का शुभ दिन और शुभ मुहूर्त स्थिर कर दिया। कृष्णपक्ष की द्वादशी तिथि को ढाई पहर रात बीतने बाद ब्याह का लग्न निश्चित हुआ। उस रात को घर घर मङ्गलाचार होने लगा। तोरण बन्दनवार से नगर-निवासियों ने अपना अपना घर अलङ्कृत किया। सारा शहर दीपावली से जगमगा उठा। आज रात में राजकुमारी चन्द्र-कला का ब्याह होगा।

परन्तु ब्याह होगा किसके साथ, यह राजकुमारी न जानती थी। उसके जन्मकाल में परमहंस नित्यानन्द स्वामी ने राजा से कहा था—"तुम्हारी इस कन्या के ऊपर अशुभग्रह की दृष्टि है ब्याह के समय जिसमें इसे वर का नाम मालूम न हो ऐसा करना।"

नियत समय में तलवार के साथ राजकुमारी का ग्रन्थि-बन्धन हो गया। इन्द्रजीतसिंह ने मुखदर्शनी दाख़िल कर भाभी को प्रणाम किया।

मद्रराज्य के रणजीत और इन्द्रजीत सिंह मानो द्वितीय राम-लक्ष्मण थे। इन्द्रजीतसिंह ने चन्द्रकला के संकुचित मुख-कमल

की ओर नहीं देखा। उन्होंने केवल उसके पायज़ेब-भूषित दोनों पैर देखे।

इन्द्रजीतसिंह ने यथोक्त रीति से व्याह होने के दूसरे ही दिन मोतियों की झालर लगी मख़मल के पर्दे से ढकी हुई पालकी पर वधू को बिठाकर अपने देश की यात्रा की। अशुभ ग्रह की बात याद करके काञ्चीराज ने शङ्कितहृदय से कन्या के मस्तक पर दहना हाथ रखकर आशीर्वाद दिया। माता कन्या को छाती से लगा कर आँसू बरसाने लगी। अशुभ ग्रह के शान्त्यर्थ सैकड़ों ब्राह्मणों को देव-मन्दिर में पूजा-पाठ करने का संकल्प दिया गया।

काञ्ची से मद्रदेश बहुत दूर था। लगभग एक महीने का रास्ता था। दूसरी रात को जब वेतसा नदी के किनारे शिविर स्थापित कर इन्द्रजीतसिंह के साथी लोग विश्राम की आयोजना कर रहे थे, ऐसे समय में जङ्गल के भीतर मशाल की रौशनी देखी गई। उसके जानने के लिए इन्द्रजीत ने सेना भेजी।

सेना ने आकर कहा—"वे लोग भी बराती हैं। हमारी ही श्रेणी के क्षत्रिय हैं। अश्वविवाह करा कर वधू को पति के घर लिये जा रहे हैं। रास्ते में अनेक विघ्नों का डर है, इसीसे वे सब श्रीमान् के शरण के प्रार्थी हैं। आपकी आज्ञा पाने पर कुछ दूर तक वे हम सभों के साथ मिलकर चलेंगे।

इन्द्रजीतसिंह ने कहा—"शरणागत को आश्रय देना हमारा धर्म है। वे निर्भय होकर हमारे साथ चलें। तुम लोग बराबर उनकी रक्षा में तत्पर रहना।"

इस प्रकार दो बराती एक साथ होकर चले। आज अमावस की रात है। सामने छोटे छोटे पहाड़ हैं। पीछे घना जङ्गल है। थके हुए सैनिक गण झिल्ली और समीपस्थ झरनों के मधुर शब्द का अनुभव करते करते गाढ़ निद्रा में निमग्न हो पड़े हैं। इसी समय एकाएक अतर्कित कोलाहल से सब की नींद टूट गई। सभी ने देखा—"मद्रराज के घोड़े पागल की भाँति इधर उधर दौड़ रहे हैं। किसी ने उनका बन्धन काट दिया है। किसी किसी तम्बू में आग भी लगी है, जिसके प्रकाश से अमावस की अँधेरी रात उजली हो गई है।

"कुछ देर में सबको मालूम हो गया, डाकुओं ने आक्रमण किया है। परस्पर मार काट शुरू हुई। अँधेरे में शत्रु मित्र का भेद कठिन हो पड़ा। सभी उच्छृंखल हो उठे।

डकैत इस सुयोग में लूट पाट करके जङ्गल में जा छिपे।

युद्ध शान्त होने पर राजकुमारी को किसी ने न देखा कि कहा गई, क्या हुई। वह कोलाहल सुनकर खीमे से बाहर हो गई थी और एक दल को भागता हुआ देख उसे अपना दल समझ कर उसी में जा मिली थी।

वह दूसरे बराती का दल था। मार काट के समय डाकुओं ने सुयोग पाकर उसकी वधू को हर ली थी। राजकुमारी चन्द्रकला को ही वह दल अपनी वधू जान कर उसे ले अपने देश की ओर बड़े वेग से चल दिया।

ये क्षत्रिय साधारण ज़मीदार थे। कलिङ्ग देश समुद्र के किनारे इनका घर था। वहाँ राजकुमारी के साथ अन्यपक्ष के वर का मिलन हुआ। वर का नाम था चेतसिंह।

चेतसिंह की माँ ने बहू का सादर स्वागत कर उसके घर ले गई। टोले महल्ले की स्त्रियों ने बहू को देखकर कहा—"अहा, ऐसा सुन्दर रूप तो हम सबों ने कभी न देखा था। मालूम होता है जैसे, साक्षात् स्वर्ग की अप्सरा हो।"

चेतसिंह नववधू को गृहलक्ष्मी समझ मन ही मन अपने भाग्य को सहारने लगा। राजकुमारी भी सतीधर्म की मर्यादा जानती थी। उसने चेतसिंह को अपना पति जानकर उसे मन ही मन आत्मसमर्पण कर दिया।

कुछ दिन तो उन दोनों के लज्जाभङ्ग ही में गये। जब लज्जा भङ्ग हुई तब उसके कथोपकथन से चेतसिंह को मालूम हो गया कि जिसे वह अपनी वधू समझ कर घर लाया है, वह राजकुमारी चन्द्रकला है।

छब्बीसवाँ परिच्छेद

कमला ने साँस रोक कर बड़े आग्रह के साथ पूछा—"तब क्या हुआ ?"

रमेश "मैं यहीं तक जानता हूँ, तब क्या हुआ यह मुझे मालूम नहीं। तुम्हीं कहो, तिसके बाद क्या हुआ ?"

कमला—"नहीं, नहीं, मैं न मानूँगी, तिसके बाद क्या हुआ, यह मुझसे कहिए।"

रमेश—"मैं सच कहता हूँ, जिस ग्रन्थ से मुझे यह कहानी मिली है, वह अब तक सम्पूर्ण नहीं छपा है। कौन जाने उसका शेष भाग कब प्रकाशित होगा ?"

कमला ने क्रुद्ध हो कर कहा—"आप बड़े छली हैं। यह आपका भारी अन्याय है।"

रमेश—"जो ग्रन्थ लिख रहे हैं, तुम उन पर क्रोध करो। मैं तुमसे केवल इतना ही पूछता हूँ—"चन्द्रकला को लेकर चेतसिंह क्या करेगा ?"

कमला नदी की ओर देख कर सोचने लगी। कुछ देर के बाद बोली—"मैं नहीं बता सकती कि वह क्या करेगा। मेरी बुद्धि में इस प्रश्न का कोई समीचीन उत्तर नहीं आता।"

रमेश ने कुछ देर चुप रह कर कहा—"क्या चेतसिंह ने चन्द्रकला से सब बातें खोल कर कह दी होंगी।"

कमला—"आप जो कहें वही ठीक। आप सब बात स्पष्ट करके नहीं कहते, यह अच्छा नहीं मालूम होता। सब बात साफ़ साफ़ क्यों नहीं कहते ?"

रमेश—"अच्छा, अब साफ़ साफ़ कहूँगा।"

कुछ देर के बाद रमेश ने कहा—"अगर।"

कमला—"अगर क्या ?"

रमेश—"मान लो, यदि मैं ही चेतसिंह होऊँ और तुम यदि चन्द्रकला हो—"

कमला अनखा कर बोली—"आप ऐसी बात मुझसे न कहें। मैं आपसे सच कहती हूँ, यह बात अच्छी नहीं लगती।"

रमेश—"नहीं, यह तुम को कहना होगा। वैसा होने से मेरा क्या कर्तव्य होगा और तुम क्या करोगी ?"

कमला इस प्रश्न का कुछ उत्तर न देकर कुरसी पर से उठ कर झट वहाँ से चली गई। देखा, उमेश उसके कमरे के द्वार पर चुपचाप बैठा नदी की ओर देख रहा है। कमला ने पूछा—"उमेश ! तुमने कभी भूत देखा है ?"

उमेश—"हाँ, देखा है।"

कमला ने उसके पास ही एक मूढ़े पर बैठ कर कहा—"अच्छा, बताओ तो, कैसा भूत देखा ?"

कमला जब खिसिया कर चली गई तब रमेश ने फिर उसे न पुकारा।

रमेश की दृष्टि के सामने बाँस का घना जङ्गल पड़ जाने से चन्द्रमा अदृश्य हो गया है। डेक के ऊपर की रोशनी बुझा कर ख़लासी सब जहाज़ के नीचे के हिस्से में भोजन करने और सोने के उद्योग में गये हैं। पहली और दूसरी श्रेणी में कोई यात्री न था। तीसरी श्रेणी के अधिकांश यात्री रसोई आदि बनाने के लिए जहाज़ से उतर कर किनारे की सूखी बालू पर गये हैं। नदी का तीक्ष्ण प्रवाह लोहे की लङ्गर को झनकारता हुआ बह रहा था। रह रह कर गङ्गा की तरङ्ग स्टीमर को डगमगा देती थी।

रमेश अपने कर्तव्य की मीमांसा करने लगा। उसने निश्चय किया कि नलिनी या कमला, इन दोनों में एक को छोड़ना ही होगा। दोनों के निर्वाह का कोई रास्ता नहीं है। तथापि नलिनी को आश्रय है, वह निरवलम्ब नहीं है। वह अब भी मुझे भूल कर दूसरे के साथ ब्याह कर सकती है। किन्तु कमला को त्याग देने से उसका कोई उपाय नहीं, उसका जीवन व्यर्थ हो जायगा।

मनुष्य की स्वार्थपरता का अन्त नहीं है। नलिनी को रमेश के भूलने की सम्भावना है। उसकी रक्षा का उपाय है। वह अनन्य-गति नहीं है। इससे रमेश को कुछ सान्त्वना न हुई। उसकी अधीरता और बढ़ गई। उसने समझा, नलिनी उसके हाथ से निकली जा रही है। वह सदा के लिए दूसरे की होकर रहना चाहती है। अब भी हाथ बढ़ा कर उसे अपनी ओर खींच सकता हूँ।"

रमेश दोनों हाथ सिर पर रख कर इस प्रकार मनही मन सोचने लगा।

गीदड़ बोलने लगे। साथ ही गाँव के दो एक कुत्ते भूँकने लगे। रमेश ने चौंक कर सिर उठाकर देखा, सामने कमला डेक का रेलिंग पकड़े अन्धकार में अकेली खड़ी है। रमेश ने कुरसी से उठकर कहा—"कमला, तुम अब भी सोने न गई? रात बहुत जा चुकी।"

कमला—"आप सोने न जायँगे?"

रमेश—"मैं अब सोने जाता हूँ। पूरब ओर के कमरे में मेरा बिस्तर लगा है। तुम भी अब देर न करो, जाकर अपने बिछौने पर सो रहो।"

कमला इस पर कुछ न बोलकर धीरे धीरे अपने निर्दिष्ट कमरे में गई। वह रमेश से यह न कह सकी कि कुछ ही देर पहले उसने भूत की कहानी सुनी है और वह अकेली सोने जाती है। उसके कमरे में दूसरा कोई नहीं है।

कमला को अनिच्छापूर्वक जाते देख रमेश के हृदय में गहरी चोट लगी। उसने कहा—"कमला, डरने की कोई बात नहीं, तुम्हारी कोठरी के पास ही मेरी कोठरी है। बीच का दरवाज़ा खुला रहेगा।"

कमला ने लापरवाई के साथ सिर हिला कर कहा—"मैं क्यों डरूँगी?"

रमेश अपनी कोठरी में जा बत्ती बुझाकर सो रहा उसने मन हीमन कहा—"कमला का परित्याग करना न्यायसङ्गत नहीं, इस लिए अब नलिनी की आशा त्याग देना ही अच्छा है। आज यही स्थिर हुआ। इसमें आगा पीछा करना ठीक नहीं।"

नलिनी की आशा त्यागने से जीवन के कितने सुखों से हाथ धोने पड़ेंगे, रमेश अँधेरे में सो कर यही सोचने लगा। अब वह बिछौने पर पड़ा न रहा सका, उठकर बाहर आया। नदी की तरङ्ग की भाँति उसके मन में अनेक प्रकार के संकल्प विकल्प लहराने लगे।

दूसरे दिन कमला जब जागी तब दिन निकल आया था। पर सुर्योदय होने में कुछ विलम्ब था। उसने चारों ओर नज़र उठा कर देखा, घर में कोई न था। तब उसे धक से याद आ गया कि वह जहाज़ पर है। धीरे से उठकर उसने खिड़की की किवाड़ हटा कर देखा, नदी के स्वच्छ जल पर कुछ कुछ कुहरा छाया है। पूरब ओर उदय काल की लालिमा दिखाई दे रही है। देखते ही देखते सफ़ेद पाल की नौकाओं से गङ्गा की धारा भर गई।

कमला किसी तरह न समझ सकी कि कौन सी गूढ़ यंत्रणा उसके हृदय को व्यथित कर रही है। शरद ऋतु की यह लालिमा विभूषित उषा आज क्यों उसके मनमें आनन्द नहीं उपजाती? आज क्यों रह रह कर उसकी आँखों में आँसू उमड़ आते हैं? उसके न सुसर है, न सास है, न संगिनी है और न कोई स्वजन परिजन है। इसका दुःख उसके मनमें कल तक न था। रात ही भर में क्या परिवर्तन हुआ जिससे आज उसके मन में यह चिन्ता समा गई कि एक रमेश ही उसके सम्पूर्ण आश्रयस्थानीय नहीं हैं उसे कुछ आत्मीयजनों का सहारा और दरकार है। ऐसा क्यों उसके मनमें हुआ? इसलिए कि जगत् बहुत बड़ा है और वह बालिका नितान्त छोटी है।

कमला बड़ी देर तक किवाड़ पर हाथ रख कर चुप खड़ी रही। नदी का प्रवाह प्रभातकालिक सूर्य की किरण पड़ने से चञ्चल-स्वर्णस्रोत की तरह दिखाई दे रहा था। ख़लासी सब अपने काम में लग पड़े थे। एन्जिन से भक् भक् शब्द होना शुरू हो गया। लङ्गर उठने और जहाज़ को ठेल कर गहरे पानी में ले जाने के शब्द से असमय में ही जागकर झुँड के झुँड बालक नदी के किनारे दौड़ आये।

इसी समय इस हल्ले गुल्ले में रमेश की नींद टूट गई। वह कमला को देखने के लिए उसकी कोठरी के द्वार पर गया।

कमला ने चकित होकर यथास्थान आँचल रहने पर भी ज़रा उसे खींच कर अपने अङ्ग को विशेष रूप से ढकने की चेष्टा की।

रमेश ने कहा—"कमला, तुम मुँह हाथ धो चुकीं?"

इस प्रश्न से कमला को क्रोध होगा, यह आशङ्का रमेश को न थी। यदि वह यह जानता तो उससे ऐसा प्रश्न न करता। हठात् कमला को क्रोध हुआ। उसने दूसरी ओर मुँह फिरा कर केवल सिर हिलाया—नहीं।"

रमेश ने कहा—"अब समय हो गया। झट पट स्नान कर लो।"

कमला इसका कुछ उत्तर न दे कर एक साड़ी, तौलिया लेकर रमेश के पास से होकर स्नान घर में चली गई।

रमेश जो सबेरे ही उठ कर कमला को देखने आया, इसे केवल कमला ने अनावश्यक ही नहीं समझा, बल्कि इसमें उसने अपना अपमान समझा। रमेश का भाव उस पर कैसा है यह कुछ कुछ उस झलक गया। ससुराल में किसी ने उस को लज्जा करना न सिखाया था। सिर पर किस समय कितना बड़ा घूँघट डालना चाहिए, इसका भी उसे पूर्ण बोध न था—किन्तु रमेश के सामने आते ही न मालूम क्यों उसका हृदय आज लज्जा से संकुचित होने लगा।

स्नान कर कमला जब अपनी कोठरी में आकर बैठी, तब दिन का काम उसके सामने आया। आँचल के छोर में बँधी हुई कुञ्जी, जो कन्धे पर लटक रही थी, लेकर कपड़े की गठरी खोलते ही छोटे से कैश-बक्स पर नज़र पड़ी। इस कैश बक्स के पाने के समय कमला ने एक विशेष गौरव का अनुभव किया था। उसके हाथ में एक स्वाधीनशक्ति आई थी। इसी से उसने बड़े यत्न से कैश-बक्स को अपनी पेटी में बन्द करके रक्खा था। आज कमला ने उस बक्स को हाथ में उठा कर कुछ भी हर्ष न पाया। आज वह बक्स अपना न जान पड़ा। वह रमेश का बक्स है। उस बक्स पर कमला की पूर्ण स्वाधीनता नहीं है। इसलिए वह रुपये का बक्स कमला को एक भार सा जान पड़ा।

रमेश ने कमला के पास आकर कहा—"क्या इस खुली पेटी के भीतर किसी गूढ़ रहस्य का अर्थ तो नहीं मिला है? देखता हूँ, निश्चिन्त होकर बैठी हो?"

कमला ने कैश-बक्स उठाकर कहा—"लीजिए, यह आपका बक्स है।"

रमेश—"मैं लेकर क्या करूँगा ?"

कमला—"क्यों ? आप जब जिस चीज़ की ज़रूरत समझें मुझे मँगा दीजिएगा।"

रमेश—"मालूम होता है, तुम्हें कुछ दरकार नहीं ?"

कमला ने ज़रा गर्दन झुकाकर कहा,"मुझे कुछ न चाहिए।"

रमेश ने हँसकर कहा—"इतनी बड़ी बात कितने लोगों के मुँह से निकल सकती है ? कुछ हो, जो तुम्हारे इतने अनादर की वस्तु है, क्या वह दूसरे को दी जाने योग्य है ? मैं भी वह न लूँगा।"

कमला ने कुछ उत्तर न देकर मेज़ के ऊपर कैश-बक्स रख दिया।

रमेश ने कहा—"अच्छा, तुम सच सच कहो, मैंने अपनी कहानी पूरी न की ? क्या इसीसे तुम मुझ पर इतनी नाराज़ हो ?"

कमला ने सिर नीचा करके कहा—"नाराज़ कौन है ?"

रमेश—"अगर नाराज़ न हो, तो यह कैश-बक्स अपने पास रक्खो। इसीसे मुझको तुम्हारी बात की सत्यता प्रमाणित हो जायगी।"

कमला—"कैशबक्स न रखने से मेरी नाराज़गी क्यों ज़ाहिर होगी ? आपकी वस्तु है, आप अपने पास रखिएगा। इसमें नाराज़गी की क्या बात है ?"

रमेश—"अब वह मेरी वस्तु नहीं है। देकर ले लेने से मरने पर मुझे ब्रह्मराक्षस होना पड़ेगा। क्या मुझे इसका डर नहीं है ?"

रमेश की ब्रह्मराक्षस होने की बात सुनकर हठात् कमला को हँसी आ गई। वह हँसते हँसते बोली—"कभी नहीं। देकर ले लेने से ब्रह्मराक्षस होना पड़ता है, यह तो मैंने कभी नहीं सुना।"

अकस्मात् इस हँसी से सन्धि का सूत्रपात हुआ। रमेश ने कहा—"दूसरे से तुम यह बात कैसे सुनोगी? अगर तुम कभी किसी ब्रह्मराक्षस को देख पातीं तो उससे पूछकर सच झूठ जान सकतीं।"

कमला ने कुतूहलाक्रान्त होकर पूछा—"अच्छा, सच कहिए, आपने कभी सच्चा ब्रह्मराक्षस देखा है?"

रमेश—"ब्रह्मराक्षस तो अनेक देखे हैं, पर सच झूँट की बात मैं नहीं कह सकता।"

कमला—"क्यों? उमेश ने तो देखा है।"

रमेश—"कौन उमेश?"

कमला—"वही लड़का, जो हमारे साथ जा रहा है कहता था, उसने अपनी आँख से ब्रह्मराक्षस देखा है।"

रमेश—"मैं इस विषय में उमेश की समता नहीं कर सकता"

इधर ख़लासी सब अनेक यत्न करके स्टीमर को गहरे पानी में ले आये। जहाज़ कुछ ही दूर अपनी जगह से आगे बढ़ा होगा कि इतने में एक आदमी सिर पर टोकरी लिए दौड़ता हुआ किनारे आया और हाथ उठाकर जहाज़ रोकने के लिए प्रार्थना करने लगा। जहाज़ के ड्राइवर ने उसकी व्याकुलता पर कुछ

ध्यान न दिया। तब वह रमेश बाबू की ओर देखकर 'बाबू' कहके चिल्लाने लगा। रमेश ने दोनों हाथ डुला कर जता दिया कि स्टीमर ठहराने का अधिकार उसे नहीं है।

उस निकटवर्ती व्यक्ति को देखकर कमला एकाएक बोल-उठी अहा! यह तो उमेश है! उसे मत छोड़िए, उसे जहाज़ पर चढ़ा लीजिए।"

रमेश—"मेरे कहने से ष्टीमर थोड़े ही रुकेगा?"

कमला ने अधीर होकर कहा—"नहीं, नहीं, आप रोकने को कहिए। एकबार कहिए तो, किनारा यहाँ से अधिक दूर नहीं है।

रमेश ने कप्तान से जहाज़ रोकने का अनुरोध किया कप्तान ने कहा—"बाबू, कम्पनी का ऐसा नियम नहीं है।"

कमला ने बाहर आकर कप्तान से कहा—"उसे छोड़कर मैं नहीं जा सकूँगी। दो मिनट के लिए आप जहाज़ को ठहरा-इए, वह मेरा आदमी है।"

रमेश ने कप्तान के नियम भङ्ग का एक सहज उपाय सोचा इनाम के लोभ से कप्तान ने जहाज़ ठहरा कर उमेश को ले लिया और उसे ख़ूब फटकार बताई। वह उस पर कुछ ध्यान न दे कमला के आगे टोकरी रख जैसे कुछ न हुआ हो, हँसने लगा।

कमला के हृदय का क्षोभ तब भी दूर न हुआ था। उसने उमेश से कहा—"तू हँसता है! अगर जहाज़ न ठहरता तो तुम्हारी क्या दशा होती?"

उमेश ने उसके प्रश्न का कोई उत्तर न देकर टोकरी को उँडेल दिया। उसमें से कच्चे केले, दो तीन क़िस्म की भाजी और बैंगन निकल पड़े।

कमला ने पूछा—"ये सब कहाँ से लाये?"

उमेश ने उन व्यञ्जनों के संग्रह का जो व्याख्यान कहा, वह सन्तोष-जनक न था। कल बाज़ार से दही आदि वस्तु लाने के समय वह किसी की फुलवाड़ी और किसी के खेत में ये सब पदार्थ देख आया। आज ख़ूब तड़के जहाज़ खुलने के पहले ही वह किनारे उतर कर बिना किसी से कुछ पूछे इन सब चीज़ों को जहाँ तहाँ से लाने चला गया।

रमेश ने अत्यन्त रुष्ट होकर कहा—"तू दूसरे के खेत से ये सब चीज़ें चुरा कर क्यों ले आया है?"

उमेश—"चोरी क्यों करूँगा? खेत में कितना ही उपजा था, मैं थोड़ा सा ले आया तो कौन बड़ा अन्याय किया? इससे उसकी क्या हानि हुई?"

रमेश—"थोड़ा लेना क्या चोरी नहीं होता? मूर्ख! जा यहाँ से, ये सब चीज़ें मेरे सामने से उठा ले जा।"

उमेश ने कातर दृष्टि से एकबार कमला के मुँह की ओर देखकर कहा—"माँ, यह साग भाजी बहुत उमदा है और—"

रमेश ने दुगुना क्रोध करके कहा—"तू अभी यहाँ से अपनी साग भाजी ले जा। नहीं तो मैं सब नदी में फेंक दूँगा।"

उमेश ने यह सोचकर कि अब क्या करना चाहिए, कमला के मुँह की ओर देखा। कमला ने ले जाने का संकेत किया।

उस संकेत के भीतर करुणा मिली प्रसन्नता देख उमेश उन साग-भाजियों को टोकरी में उठाकर वहाँ से धीरे धीरे चला गया। रमेश ने कमला से कहा—"देखो, यह बहुत बुरा काम है। तुम उस लड़के को आश्रय न दो।"

यह कह कर रमेश चिट्ठी-पत्री लिखने के लिए अपनी कोठरी में चला गया। कमला ने खिड़की से सिर निकाल कर देखा, उमेश उसकी रसोई बनाने की जगह चूल्हे के पास चुप-चाप बैठा है।

सेकेण्ड क्लास का कोई यात्री न था। कमला ने पाक का प्रबन्ध करने के बहाने रसोई के स्थान में जाकर उमेश से कहा—"क्या तू ने उन सब चीज़ों को फेंक दिया?"

उमेश—"इतने परिश्रम से लाया, सो क्या फेंकने ही के लिए? इसी घर में सब रक्खा है।

कमला ने जरा घुड़की देकर कहा—"तू ने भारी अन्याय किया है! फिर कभी ऐसा काम न करना। दूसरे की तिनके के बराबर चीज़ क्यों न हो, बिना माँगे हर्गिज़ न छूना। देखो, अगर स्टीमर चला जाता!"

इतना कह कर कमला घर के भीतर गई और उमेश को पुकार कर कहा—"छुरी लाओ।"

उमेश छुरी ले आया। कमला तरकारी बनाने लगी।"

उमेश ने कहा—"माँ, यह साग बेसन लगाकर भूनने से बड़ा अच्छा होता है।

कमला ने क्रुद्ध होकर कहा—"अच्छा, बेसन तैयार करो।"

कमला ने उमेश के साथ ऐसे भाव का अवलम्बन किया, जिसमें वह बहक कर बात न करे। गम्भीरभाव धारण कर कमला ने उसके लाये साग केले और बैंगनों को काटकर रसोई चढ़ा दी।

अहा! इस अनाथ बालक को आश्रय न देकर कमला कैसे रह सकती? साग चुराना कितना बड़ा दोष है, यह कमला नहीं जानती थी, किन्तु निराश्रय बालक को आश्रय देना कितना बड़ा धर्म है, यह वह जानती है। वह ग़रीब लड़का जो कमला को प्रसन्न करने के लिए कल ही से तरकारी की खोज में घूम रहा था, और ज़रा देर होने ही से उसे स्टीमर छुट जाता, क्या इसका दुःख कमला को न होता?"

कमला ने कहा—उमेश, तुम्हारे लिए कल का थोड़ा सा दही रक्खा है। तुम्हें आज भी दही खिलाऊँगी, पर ऐसा काम फिर कभी न करना।"

उमेश ने अत्यन्त दुःखी होकर कहा—"माँ! क्या आपने कल वह दही नहीं खाया?"

कमला—"तुम्हारी भाँति दही पर मेरी उनकी तृष्णा नहीं रहती।"

उमेश! सब तो हुआ, गाय के दूध का क्या प्रबन्ध होगा? बिना दूध के बाबू कैसे खायँगे?"

उमेश—"दूध का प्रबन्ध कर सकता हूँ, परन्तु बिना दाम के मिल नहीं सकता।"

कमला फिर शासनकार्य में प्रवृत्त हुई। उसने दोनों भौहें तान कर कहा—"उमेश, तुझसा मूर्ख मैंने कभी नहीं देखा। क्या मैंने तुझसे बिना मूल्य कोई चीज़ लाने को कहा है?"

कल से उमेश के मन में एक प्रकार की धारणा हो गई है कि कमला को रमेश से रुपया माँगना सहज नहीं है। इस लिए वह रमेश की पर्वा न रख, कमला और आप दोनों मिल कर किस तरह घरका काम चला सकता है, इसका कोई सहज उपाय मन ही मन सोच रहा था। तरकारी से तो वह एक प्रकार निश्चिन्त हो गया। किन्तु दूध का क्या उपाय किया जाय, इसकी युक्ति अभी तक स्थिर न कर सका था। संसार में केवल निःस्वार्थ भक्ति के बल से साधारण दूध दही तक का भी प्रबन्ध होना कठिन है। पैसा दरकार है, इस-लिए कमला के अकिञ्चित् भक्त उमेश के लिए यह संसार बड़ा ही कठिन जान पड़ा।

उमेश ने कुछ अधीर होकर कहा, "माँ, अगर बाबू से कह कर किसी तरह पाँच आने पैसे का सवाल कर दो तो मैं दो एक सेर दूध लाने की कोशिश करूँ।"

कमला उद्विग्न होकर बोली—"नहीं, नहीं, अब तुझे स्टीमर से उतरने न दूँगी। अब तू किनारे जायगा तो तुझे कोई जहाज़ पर न ले सकेगा।"

उमेश—"मैं किनारे क्यों जाऊँगा? जहाज़ पर कप्तान की एक गैया है। उसे रोज़ सात आठ सेर दूध होता है। शायद आरज़ करने से थोड़ा मोल देदे।"

कमला ने झट एक रुपया लाकर उमेश के हाथ में दिया। और कहा—"जो दाम ले सो देकर बाक़ी फिरता ले लेना।"

उमेश चार सेर दूध ले आया, किन्तु कुछ फिरता न लाया। कहा, चार सेर दूध का पूरा एक रुपया ले लिया।"

कमला ने मुस्कुराकर कहा—"अब स्टीमर ठहरेगा तो रुपया तुड़ा लूँगी।"

उमेश ने गम्भीरतापूर्वक कहा—"हाँ, यह बात बहुत ज़रूरी है। रुपया एक दफ़े जहाँ बाहर हुआ, फिर उसका फिरना कठिन हो पड़ता है।"

रमेश ने भोजन को बैठ कर कहा—"वाह! भोजन की सामग्री तो अच्छी बनी है।" दूध देखकर रमेश को और भी आश्चर्य हुआ। रमेश भोजन कर के तृप्त हो गया।

इस प्रकार उस दिन मध्याह्न का भोजन बड़े समारोह के के साथ हुआ। रमेश भोजन करके आराम-कुरसी पर लेट गया।

कमला उमेश को खिलाने बैठी। उमेश को अच्छी तरह भोजन करा कर पीछे आप भी कुछ खा लिया।

इस प्रकार दिन का काम और हास्यविनोद में सवेरे का मनमुटाव कब कैसे दूर हुआ, यह कमला न जान सकी।

क्रमशः दिन बीत चला। साँझ हुई। नदी के दोनों किनारे हरे धान से लहराते हुए खेतों की संकीर्ण राह से होकर

गाँव की कितनी ही स्त्रियाँ बगल में घड़ा दाब कर पानी भरने के लिए आ रही थीं।

कमला पान लगा कर, बाल सँवार, मुँह हाथ धो, साड़ी बदल जब सायङ्कालिक गृहकार्य करने को तैयार हो गई तब सूर्यास्त हो गया था। जहाज़ स्टेशन के घाट पर आकर ठहर गया और लङ्गर डाल दिया गया।

आज कमला को रात की रसोई बनाने में वैसा झंझट न था। दिन की ढेर तरकारी इस समय के लिए रक्खी थी। इसी समय रमेश ने आकर कहा—"आज दिन में बहुत ज़्यादा खा गया। इस समय कुछ न खाऊँगा।"

कमला ने उदास हो कर कहा—"कुछ न खाइएगा? थोड़ा दूध हलुवा।"

रमेश—"नहीं, कुछ भी नहीं।" यह कह कर वह चला गया।

कमला ने दिन की रक्खी सब चीजें उमेश के आगे परोस दीं।

उमेश ने कहा—"अपने लिए कुछ न रक्खा?"

कमला—"मैं खा चुकी?"

इस तरह कमला का समस्त दिन-कृत्य पूरा हुआ।

तब चाँदनी चारों ओर अच्छी तरह खिल गई थी। किनारे कोई गाँव न था। नदी के किनारे धान के हरे खेतों पर उजाली रात की छटा छा रही थी।

घाट पर टीन के बने छोटे से घर में स्टीमर-आफ़िस था। वहाँ एक दुबला पतला क्लर्क स्टूल पर बैठ, मेज़ के ऊपर

एक चिराग़ रख बही लिख रहा था । खुले दरवाज़े की राह से रमेश उस क्लर्क को देख रहा था और दीर्घनिश्वास लेकर मन ही मन सोच रहा था, यदि मेरा नसीब इस क्लर्क की भाँति मुझे भी एक छोटे से सीधे सादे काम में उलझा रखता, तो मैं भी दिन भर बैठा बैठा हिसाब लिखता, काम करता, काम में त्रुटि होने से मालिक की घुड़की खाता । दिन का काम पूरा करके रात को अपने घर जाता । अगर इस तरह मेरा जीवन व्यतीत होता तो क्या ही अच्छा होता ।"

कुछ देर में आफ़िस का चिराग़ बुझ गया । क्लर्क घर में ताला लगा जाड़े के भय से सिर पर कपड़ा रख खेत के बीच से होकर अपने घर को चला गया ।

कमला जो बड़ी देर से रेलिङ्ग पकड़े रमेश के पीछे चुप खड़ी थी, यह वह नहीं जानता था । कमला ने सोचा था, रमेश सन्ध्या होने के पीछे उसे बुला लेगा इसलिए घर का सब काम धन्धा करके जब उसने देखा, रमेश उसकी खोज ख़बर लेने न आया, तब वह आपही धीरे धीरे जहाज़ की छत पर गई । किन्तु वहाँ जाकर वह एक जगह खड़ी हो रही । रमेश के पास न जा सकी । चन्द्रमा का प्रकाश रमेश के मुँह पर पड़ रहा था । ध्यानमग्न रमेश और कमला के बीच मानो यह विराट् रात्रि चाँदनी रूपी चादर से सर्वाङ्ग ढक, ठोड़ी पर उँगली रख, खड़ी हो चुपचाप पहरा दे रही थी ।

रमेश जब दोनों हाथों से मुँह ढक कर चुपचाप अपनी कोठरी में बैठा था तब कमला पैर की आहट बचा कर धीरे

धीरे उसकी कोठरी की ओर गई, जिसमें रमेश को मालूम न हो कि कमला उसकी टोह लेने आई है ।

रमेश के सोने का घर सूना था । अँधेरे में अकेली जाने के कारण कमला की छाती धड़कने लगी । घर के भीतर प्रवेश करने का उसे साहस न हुआ । वह द्वार के पास खड़ी हो झाँकी मार बाहर हो गई । घर से बाहर होते समय छाता टीन की पेटी के ऊपर गिरने से एक शब्द हुआ । उससे चौंक कर रमेश ने सिर उठाया और कुरसी से उठ कर देखा, कमला उसके सोने के घर के सामने खड़ी है। रमेश ने कहा—"कमला, यह क्या ! मैंने समझा था, तुम सोई होगी, क्या तुम डरती तो नहीं हो ? अच्छा, अब मैं बाहर न जाऊँगा । मैं इसी घर में रहूँगा । दोनों घरों के बीच का दरवाज़ा खुला ही रहेगा ।

कमला ने बड़ी प्रौढ़ता के साथ कहा—"मैं नहीं डरती ।" यह कह कर उसने बड़े वेग से अपने अँधेरे घर में प्रवेश किया और जिस दरवाज़े को रमेश ने खुला रक्खा था, उसे उसने बन्द कर दिया । चारपाई पर लेट कर उसने मुँह चादर से ढक लिया । संसार में वह अपने को अकेली समझ अधीर हो उठी । उसे अपना जीवन भार सा मालूम होने लगा । जहाँ अपना कोई सम्बन्धी नहीं, स्वाधीनता नहीं, वहाँ कोई क्यों कर जी सकता है ?"

रात उसके लिए पहाड़ हो गई । रमेश पास वाली कोठरी में नींद से सो गया था । कमला अब बिस्तर पर न रह सकी । वह धीरे धीरे कोठरी से बाहर आई । जहाज़ का

रेलिङ्ग पकड़ कर नदी के किनारे की ओर देखने लगी। कहीं किसी प्राणी के बोलने का शब्द सुनाई न देता था। सर्वत्र सन्नाटा छाया था। चन्द्रमा पच्छिम की ओर प्रयाण कर चुका था। धान के खेतों के बीच से होकर जो पगडंडी गई है, कमला उसकी ओर देखकर सोचने लगी, "इस राह से कितनी ही स्त्रियाँ रोज़रोज़ नदी से पानी भर कर अपने घर जाती होंगी" घर का नाम याद आते ही उसकी आँखों में आँसू भर आये। हाय! इस संसार में उसके कहीं घर नहीं। उसने नज़र उठाकर एकबार दुःख भरी दृष्टि से चारों ओर देखा। गहरी रात में सूना किनारा साँय साँय कर रहा है। विशाल आकाश इस छोर से उस छोर तक ख़ाली पड़ा है। हा! उसे इतना बड़ा आकाश और इतनी बड़ी पृथ्वी व्यर्थ मालूम होने लगी। उसे एक छोटे से घर की आवश्यकता थी। कमला एकाएक चौंक उठी। उसके पास कोई एक आदमी खड़ा था। वह कहने लगा—

"माँ, डरो मत, मैं उमेश हूँ। रात बहुत बीती। आप अभी तक जागी हैं, सोने को क्यों नहीं जातीं?"

इतनी देर से जो आँसू उसकी आँखों में भरे थे, वे टपक पड़े। कमला रमेश की ओर से मुँह फेर कर खड़ी हुई। उसने उस गृहहीन दीन बालक से कुछ कहना चाहा, पर उसके मुँह से एक भी शब्द न निकला।

उमेश कमला को रोते देख अत्यन्त दुःखी हुआ। वह क्या कह कर उसे सान्त्वना दे, यह मन ही मन सोचने लगा। आख़िर उसने सोच कर कमला से कहा—"माँ, आपने जो वह रुपया दिया था, उसमें पाँच आने पैसे मेरे पास मौजूद हैं।"

कमला को तब तक कुछ धैर्य हो आया था। उमेश के इस असम्बद्ध कथन से कमला ने कुछ हँस कर कहा—"अच्छा, वह अपने पास रहने दो। अब तुम भी सो रहो।"

चन्द्रमा अस्ताचल को पहुँच गया। कमला इस बार ज्योंही बिछौने पर जा लेटी त्योंही उसे गाढ़ी नींद आगई। कुछ देर के लिए चिन्ता ने उसकी जान छोड़ दी। सवेरे की धूप जब उसके द्वार पर उसे जगाने को आ पहुँची तब भी वह निद्रा में निमग्न थी।

अट्ठाईसवाँ परिच्छेद

दो घड़ी दिन चढ़ आया। कमला की नींद टूटी। वह झट उठ, मुँह हाथ धो, घर के काम में लग पड़ी। पर आज उसका मन बहुत उदास था। उमेश जब कमला के काम में सहायता देने आया, तब कमला ने टूटे स्वर में कहा—"जाओ, उमेश! आज मुझे रंज मत दो।"

उमेश थोड़े ही में चुप होने वाला न था। उसने कहा—"माँ, मैं रंज क्यों दूँगा, मसाला पीसने आया हूँ।"

सवेरे रमेश ने कमला के मुख नेत्र का भाव देखकर पूछा—"कमला, तुम्हारी तबीयत अच्छी है?"

कमला इस प्रश्न का उत्तर केवल सिर हिला कर दे, रसोई घर में चली गई।

रमेश ने देखा—"बात दिन दिन भारी हुई जाती है। अब शीघ्र ही इसकी कुछ मीमांसा हो जानी चाहिए। नलिनी के साथ एकबार खुलासा बात चीत हो जाने पर सहज ही कर्तव्य की मीमांसा हो जायगी।

रमेश बड़ी देर तक सोच विचार करने के बाद नलिनी को चिट्ठी लिखने बैठा। एकबार लिखकर फिर उसे काटता था। इसी समय किसी ने पीछे से आकर पूछा—"महाशय! आपका नाम?" सुनकर रमेश ने चौंक कर सिर उठाया। देखा, एक अधेड़

भद्र मनुष्य सामने खड़ा है। रमेश का ध्यान जो चिट्ठी लिखने की ओर एकान्त भाव से लगा था, वह कुछ देर के लिए उचट गया। वह भौंचक सा हो कर उसके मुँह की ओर देखने लगा।

"आप ब्राह्मण हैं। आपका नाम रमेश बाबू है। यह मैं पहले ही जान चुका हूँ। आप बुरा न मानें, हमारे देश में नाम गाँव पूछने की एक परिपाटी है। यह शिष्टता है, पर कोई कोई इसे अशिष्टता समझ बुरा मानते हैं। यदि आप बुरा समझते हों तो आप भी मुझसे पूछ लें मैं ज़रा भी बुरा न मानूँगा। मैं अपना नाम, बाप का नाम, और पितामह का नाम बताने में कुछ भी उज्र न करूँगा।"

रमेश ने हँसकर कहा—"मैं इन बातों का बुरा नहीं मानता। यह एक क़ायदे की बात है। बिना पूछे कोई किसी का परिचय नहीं जान सकता। आप कृपा करके अपना नाम बतावें तो मैं उसी में ख़ुश हूँगा।"

"मेरा नाम त्रिलोकनाथ चक्रवर्ती है। पश्चिमोत्तर प्रदेश में सभी लोग मुझे जानते हैं। आपने तो इतिहास पढ़ा है? भारतवर्ष में भरत चक्रवर्ती राजा होने के कारण जैसे प्रसिद्ध थे, वैसे ही मैं भी पश्चिमोत्तर देश में अपने गुण के कारण सर्वत्र प्रसिद्ध हूँ। जब आप पश्चिम जा रहे हैं तब मेरा परिचय जानेहींगे। किन्तु आप कहाँ तक जाना चाहते हैं?"

रमेश—"मैं अभी यह ठीक ठीक नहीं बता सकता।"

त्रिलोक—"आप ठीक ठीक बतावें चाहे न बतावें, पर जहाज़ को अब अपने अड्डे पर पहुँचने में विलम्ब नहीं है।"

रमेश—"एक दिन गोयालन्द में गाड़ी से उतर कर देखा, "स्टीमर बार बार चलने की सोटी दे रहा था, तब मैंने अच्छी तरह जाना, मेरा मन स्थिर करने में देरी है पर जहाज़ खुलने में देरी नहीं है। तो भी जो काम जल्दी का था वह मैंने कर ही डाला।"

त्रिलोक—"महाशय! आप धन्य हैं। आप पर मेरी भक्ति बढ़ी जाती है। मुझ में और आप में बड़ा अन्तर है। हम सब पहले कहीं जाने का निश्चय कर लेते हैं तब जहाज़ पर पाँव रखते हैं। कारण हम सब भीरु स्वभाव के मनुष्य हैं। आपने जाने का तो निश्चय किया है. पर कहाँ जायँगे इसका कुछ निश्चय नहीं। यह क्या साधारण बात है। परिवार भी तो आपके साथ ही है?"

"हाँ" कह कर इस प्रश्न के उत्तर देने में रमेश का मन कुछ देर के लिए सन्देह में पड़ गया। उसे चुप देख त्रिलोक-नाथ चक्रवर्ती ने कहा—"आप मुझे क्षमा करें, परिवार आपके साथ में है, यह ख़बर मुझे पहले ही ज़ाहिर हो चुकी है। आप वृथा मुझ पर कुछ सन्देह न करें। बहूजी इसी घर में रसोई बना रही हैं। मैं भी पेट की आग बुझाने के लिए रसोई घर की खोज करते करते वहाँ जा पहुँचा। मैंने बहूजी से कहा—"आप मुझे देख कर संकोच न करें। मैं अब बराबर पश्चिम देश में रहता हूँ। पश्चिम के रहने वाले सभी भद्र मनुष्य मुझे जानते हैं। आप तो साक्षात् अन्नपूर्णा का अवतार ही जान पड़ती है।" फिर मैंने कहा—"आप जब रसोई करने बैठी हैं तब मेरी भी ख़बर लीजिएगा, भूलने से न बनेगा। मैं निरुपाय हूँ।" इस पर बहूजी हँसी। मैं समझ गया, अन्नपूर्णा मुझ पर

प्रसन्न हुई हैं। आज मुझे किसी तरह की चिन्ता न रही। प्रति दिन पञ्चाङ्ग देखकर शुभ मुहूर्त ही में यात्रा करता हूँ। किन्तु ऐसा भाग्य क्या सब वार संघटित होता है? आप काम कर रहे हैं, आपको तकलीफ़ न दूँगा। यदि आप आज्ञा दें तो मैं बहूजी के काम में कुछ सहायता करूँ। जब हम सब हैं तब वे अपने हाथ से सब काम क्यों करेंगी? नहीं, नहीं, आप लिखिए मैं आपके काम में बाधा डालना नहीं चाहता।"

यह कह कर चक्रवर्ती उठ कर रसोई घर की तरफ़ गये। जाकर उन्होंने कमला से कहा—रसोई आप बनाती हैं तो बनावें, इमली की चटनी मैं ही बनाऊँगा। आप यह सोचती होंगी कि इमली तो हई नहीं, चटनी किस चीज़ की बनेगी; किन्तु मेरे रहते आप इमली की चिन्ता न करें। मैं अभी सब चीज़े ले आता हूँ।"

इतना कह कर चक्रवर्ती एक झोली उठा लाये, उसमें काग़ज़ में लपेटी इमली और चटनी के सब मसाले मौजूद थे।

चक्रवर्ती ने कमला से कहा—"मैं चटनी बहुत उम्दा बनाना जानता हूँ। जब आप उसे जीभ पर रक्खेंगे तब जानेंगे, अभी मैं उसकी तारीफ़ क्या करूँ? अच्छा, अब समय अधिक हुआ। आप स्नान कर आवें। रसोई में जो कुछ काम बाक़ी रह गया है, उसे मैं पूरा किये देता हूँ। आप कुछ संकोच न करें। मैं रसोई बनाना जानता हूँ। जहाँ रहता हूँ अपने हाथ से रसोई बनाता हूँ। मेरे घरके लोग बराबर बीमार रहा करते हैं। उनकी अरुचि दूर करने के लिए इमली की चटनी और मसालेदार तरकारी बनाते बनाते मैं सिद्धहस्त हो गया हूँ। आप बूढ़े की

बात सुनकर हँसती होगी, पर इसे आप हास्य न समझें। मैंने आपसे सब बातें सच सच कही हैं।"

कमला मुस्कुराती हुई बोली—"मैं आपसे चटनी बनाना सीखूँगी।"

चक्रवर्ती—"पाक-विद्या भी कुछ सामान्य विद्या नहीं है। आप झटपट सीख लेना चाहती हैं, यह कैसे होगा? यदि एक ही दिन में आपको ये सब बातें सिखा कर विद्या की मर्यादा बिगाड़ डालूँ तो सरस्वती देवी अप्रसन्न हो जाँयगी। इसके लिए दो चार दिन इस वृद्ध की ख़ुशामद करनी होगी। मुझे क्योंकर ख़ुश कर सकोगी, उसकी तुम्हें चिन्ता न करनी होगी, मैं स्वयं सब बात तुम से विस्तारपूर्वक कह दूँगा। पहली बात तो यह कि मैं पान कुछ अधिक खाता हूँ। मुझे वश करना सहज नहीं है। किन्तु तुम्हारा प्रसन्न मुँह देखकर मैं आप ही तुम्हारे अधीन हो कर रहना चाहता हूँ।" उमेश की ओर देखकर "कहो जी, तुम्हारा नाम क्या है?"

उमेश ने कुछ उत्तर न दिया। वह पहले ही से चिढ़ा था। वह मन ही मन सोच रहा था, कमला के स्नेह-राज्य में कहाँ से एक बूढ़ा आकर शरीक होना चाहता है। कमला ने उसे मौन देखकर कहा—"इसका नाम उमेश है।"

वृद्ध—"यह लड़का बड़ा अच्छा मालूम होता है। यह बहुत गम्भीर है। इसके साथ मेरी पट जायगी। अब आप देर न करें। मैं शीघ्र ही तरकारी बना लेता हूँ।"

कमला जो अपने को निरवलम्ब समझती थी, वह इस वृद्ध को पाकर सावलम्ब हो गई।

रमेश भी उस वृद्ध के आने से कुछ निश्चिन्त सा हुआ। आरम्भ में जब रमेश कई मास तक कमला को अपनी स्त्री करके जानता था तब जो उसका आचरण और उसकी बेरोक निकटवर्तिता थी उससे अबके व्यवहार में इतना अन्तर पड़ गया है जो कमला किसी तरह सह्य नहीं कर सकती। ऐसे समय में यदि ये चक्रवर्ती महाशय रमेश की ओर से कमला के मन को फेर सकें तो रमेश अपने हृदय के घाव पर सन्तोष की पट्टी बाँध कर मर्म-वेदना से अपने को बचा सके।

कमला पास ही अपनी कोठरी के द्वार पर खड़ी हुई। चक्रवर्ती ने कमला के पैर में जूता देखकर कहा—"यह क्या? इसे तो मैं पसन्द नहीं करता।"

इस वाक्य का अर्थ कमला की समझ में कुछ न आया। वह आश्चर्ययुक्त हो वृद्ध का मुँह देखने लगी।

वृद्ध ने रमेश से कहा—"यह जो जूता देखता हूँ, रमेश बाबू यह आप ही के करने से हुआ है। आप चाहे जो समझें, पर मेरी समझ में यह आप अधर्म कर रहे हैं। देखिएगा, देश की भूमि को इन चरणों के स्पर्श से वञ्चित न कीजिएगा। ऐसा न होने से देश मिट्टी में मिल जायगा। यदि रामचन्द्रजी सीता के डशन का बूट पहनाते तो लक्ष्मण क्या उनके साथ साथ चौदह वर्ष तक वन में घूमते? कभी नहीं। मेरी बात,

सुनकर आपको हँसी आती होगी और मेरी बात अच्छी न लगती होगी। न लगने की बात ही है। आप जहाज़ की सीटी सुन कर विना कुछ सोचे विचारे उस पर सवार हो जाते हैं, पर कहाँ जायँगे, इसे एक बार भी नहीं सोचते।"

रमेश ने कहा—"आपही मेरे गम्य स्थान का ठीक कर दीजिए न! जहाज़ की सीटी की अपेक्षा आपका परामर्श पक्का होगा।"

चक्रवर्ती—"देखिए, आपकी विवेचना-शक्ति इतने ही में बढ़ गई। थोड़े ही देर के परिचय का यह फल! अच्छा, आप कहीं जाना चाहते हैं तो गाज़ीपुर चलिए।" (कमला की ओर देख कर) कहो माँ जी, गाज़ीपुर चलोगी? वहाँ गुलाब की खेती होती है। इत्र से सारा देश सुगन्धमय रहता है। तुम्हारा यह बूढ़ा भक्त भी वहीं रहता है।"

रमेश ने कमला के मुँह की ओर देखा। कमला ने सिर हिला कर सम्मति जताई।

इसके अनन्तर उमेश और चक्रवर्ती दोनों कमला की कोठरी में जा बैठे। रमेश एक लम्बी साँस लेकर बाहर ही रह गया। मध्याह्न का समय है। जहाज़ बड़ी तेज़ी के साथ धक् धक् करता हुआ चला जा रहा है। दोनों तटों का दृश्य क्रमशः अग्रपश्चात् होकर एक विचित्र भाव प्रकट कर रहा है। कहीं खेतों में हरे धान, कहीं नाव लगने का घाट, कहीं

बालू का टीला; कहीं बस्ती, कहीं बाज़ार, दृष्टिगोचर हो रहे हैं।

इस शरत्काल के मध्याह्न की सुमधुर स्तब्धता में पास की कोठरी के भीतर से जब रह रह कर कमला की कुतूहल-व्यञ्जक मीठी हँसी रमेश के कान में प्रवेश करने लगी तब उसका हृदय आनन्द से उमगने लगा।

उनतीसवाँ परिच्छेद

कमला के हृदय में अब भी बालपन बना है। कोई संशय, आशङ्का या वेदना चिरस्थायी होकर उसके हृदय में ठहरने नहीं पाती। इधर कई दिनों से रमेश के व्यवहार-सम्बन्ध में कमला को चिन्ता करने की फुरसत न मिली। धार में जहाँ रुकावट होती है वहीं तरङ्ग ज़्यादा चोट करती है। कमला के हृदय-स्रोत में जो रमेश के आचरण से एक जगह अटकाव हो गया था उसी जगह आवर्त स्वरूप भाँति भाँति की बातें आक्रमण कर घूम रही थीं। वृद्ध चक्रवर्ती को पाकर कमला के हृदय स्रोत का जो वह आवर्त था वह मिट गया। वह उस वृद्ध के सान्त्वना-वाक्यों से अपना सारा दुःख भूल गई।

आश्विन के सुन्दर दिन जल पथ के विचित्र दृश्यों को रमणीय बनाकर बीच बीच में कमला के गृह-कौशल को भी बढ़ाने लगे।

कमला बड़े उत्साह से घर का काम करने लगी। उमेश अब कभी स्टीमर फेल नहीं करता। पर उसकी टोकरी साग-भाजियों से भरकर आ जाती थी। उमेश की यह सवेरे की टोकरी-भरण-लीला भारी कुतूहल का विषय हो गया। टोकरी के कारण रोज़ सवेरे एक न एक हास्य की बात निकल पड़ती थी। जिस दिन रमेश उपस्थित रहता था उस दिन विनोद में बाधा पड़ जाती थी। वह उमेश पर चोरी का बिना सन्देह किये नहीं

रह सकता था। जब वह उमेश पर चोरी का सन्देह करता था तब कमला उत्तेजित होकर बोल उठती थी—"वाह! मैंने अपने हाथ से यह सब वस्तु लाने के लिए उमेश को पैसा गिन दिया है।"

रमेश—"इससे उसकी चोरी की मात्रा और बढ़ जायगी।" साग-भाजी तो चुराकर लाता ही है, पैसा भी चुरावेगा। यह कह कर जब वह उमेश को पुकार कर हिसाब माँगता था तब उमेश कुछ का कुछ कहने लग जाता था। जो हिसाब एक बार बनाता था वह दूसरी बार के हिसाब से नहीं मिलता था। अन्त में जमा से अधिक ख़र्च की संख्या हो जाती थी। तो भी वह ज़रा नहीं शरमाता था। वह कहता था, अगर मैं हिसाब करना जानता तो मेरी यही दशा रहती? तब तो मैं गुमास्ता का काम कर सकता।"

चक्रवर्ती कहते—"रमेश बाबू, भोजन करने के बाद आप इसका विचार करेंगे। मैं तो अभी इस लड़के को बिना उत्साह दिये नहीं रह सकता। सुनो उमेश! संग्रह करने की विद्या साधारण विद्या नहीं है। लोग ऐसे कम मिलेंगे जो संग्रह करना जानते हों। उद्योग सभी करते हैं, परन्तु उनमें कृतकार्य कितने होते हैं? सुनिए रमेश बाबू! मैं गुणी की क़दर करना जानता हूँ। विदेश में इतने सवेरे कितने लड़के साग-भाजियों का संग्रह करके ला सकते हैं? सन्देह बहुत लोग कर सकते हैं, परन्तु संग्रह हज़ार में विरला ही कोई कर सकता है।"

रमेश—"यह आप अच्छा नहीं करते। उत्साह देकर अन्याय करते हैं।"

चक्रवर्ती—"लड़के के पास विद्या बहुत नहीं है, जो कुछ है वह भी यदि उत्साह के अभाव से नष्ट हो जाय तो बड़े खेद का विषय है। उमेश ! इन तरकारियों को अच्छी तरह धो लाओ।"

रमेश उमेश पर सन्देह कर जितना ही उसे डाट डपट दिखाता था उतना ही उस पर कमला का अनुग्रह दिन दिन बढ़ता जाता था। चक्रवर्ती भी उमेश ही के पक्ष में था। इससे कमला का दिल रमेश से अलग और स्वतन्त्र सा हो गया। जब से चक्रवर्ती आये हैं तब से उनका उत्साह देख रमेश पहले से विशेष उत्सुकता के साथ कमला को देखता है तो भी उस दल में पूरे तौर से सम्मिलित नहीं होने पाता।

पूरनमासी के दो एक दिन पूर्व सवेरे उठ कर सबों ने देखा, सारा आकाशमण्डल काले बादल से घिरा है। हवा कुछ तेज़ी के साथ चल रही है। कभी कुछ पानी बरस भी जाता है, और कभी कुछ धूप भी निकल आती है। आज गङ्गा में अधिक नावें नहीं हैं, जो दो एक हैं, वे बड़े वेग से किनारे की ओर जा रही हैं। पानी भरने के लिए जो स्त्रियाँ आज घाट पर आती हैं। वे देर तक नहीं ठहरतीं, पानी लेकर झट चल देती हैं।

स्टीमर अपनी राह पकड़े चला जा रहा है। अनेक प्रकार की असुविधा होने पर भी कमला की रसोई का काम किसी तरह होने लगा। चक्रवर्ती ने आकाश की ओर देख कर कमला से कहा—"आज जो कुछ बनाना हो सो एक ही दफ़े

बना लो, जिसमें फिर दूसरे वक्त रसोई न बनानी पड़े। तुम रसोई चढ़ा दो। मैं थोड़ी चपातियाँ बना लेता हूँ।"

खाते पीते आज अतिकाल हो गया। ज्यों ज्यों हवा तेज़ बहने लगी त्यों त्यों नदी की तरङ्ग ऊपर को उछलने लगी। सूर्यास्त हुआ या अभी दिन है, यह किसी ने न जाना। जहाज़ ने आगे जाने का इरादा छोड़ कुछ दिन रहते ही लङ्गर डाल दिया।

साँझ हुई। दिन की अपेक्षा बादल ने और भी भयङ्कर रूप धारण किया। बिजली चमकने लगी। हवा ख़ूब ज़ोर से बहने लगी और मूसलधार पानी बरसने लगा।

कमला एकबार पानी में डूब चुकी है। झड़ी देखकर उसका हृदय काँपने लगा। रमेश ने कमला को आश्वासन देकर कहा—"स्टीमर पर कोई डर नहीं, तुम निश्चिन्त हो कर सो रहो। मैं पासवाली कोठरी में जाग रहा हूँ।"

द्वार के पास आकर चक्रवर्ती ने कहा—"मा लक्ष्मी! कुछ नहीं। झड़ी के बाप का सम्मर्थ्य क्या, जो तुम्हें कुछ क्लेश दे सके?"

झड़ी के बाप का सामर्थ्य कहाँ तक है, यह कहना तो कठिन है, परन्तु झड़ी का कितना बड़ा सामर्थ्य है, यह कमला को भली भाँति मालूम था। वह झट द्वार के नज़दीक आकर बोली—"चक्रवर्ती जी! तुम घर के भीतर आकर बैठो।"

चक्रवर्ती जी ने संकुचित हो कर कहा—"यह तुम्हारे सोने का समय है। अभी—"

घर के भीतर प्रवेश करके देखा—"रमेश बाबू वहाँ नहीं हैं। उन्होंने आश्चर्ययुक्त हो कर कहा—"ऐसी झड़ी में रमेश बाबू कहाँ गये?"

"कौन! चक्रवर्ती जी? मैं यहीं तो पास वाले घर में हूँ।"

पास वाले घर में झाँक कर चक्रवर्ती ने देखा—"रमेश बिछौने पर लेटा हुआ सिरहाने चिराग़ रख कोई किताब पढ़ रहा है।"

चक्रवर्ती ने कहा—"बहूजी इस घरमें अकेली डरती हैं, आपकी पुस्तक तो झड़ी से डरती नहीं, उसे अभी रख देने में अन्याय न होगा। इस घर में आइए।"

कमला ने एक दुर्निवार आवेश के वश अपने को भूल झट दौड़ कर चक्रवर्ती के पास जा, ज़ोर से उनका हाथ दाब कर रुद्ध स्वर में कहा—"नहीं, नहीं" झड़ी के सबब यह शब्द रमेश के कान तक न पहुँचा। किन्तु चक्रवर्ती विस्मित होकर लौट आये।

रमेश पुस्तक रख कर उस घर में गया और पूछा—"क्या चक्रवर्ती जी, कहिए, क्या मामला है? जान पड़ता है, कमला आपको—"

कमला रमेश के मुँह की ओर देखकर बोल उठी—"नहीं। नहीं। मैंने इन्हें केवल कोई कहानी कहने के लिए बुलाया था।"

किस बातके उत्तर में कमला ने "नहीं, नहीं, कहा, यह पूछने से क्या वह कुछ उत्तर न दे सकती ? इस "नहीं" का अर्थ यही कि अगर आप यह समझते हों कि मेरा भय दूर करने की आवश्यकता है—नहीं, कोई आवश्यकता नहीं। अगर यह समझते हो कि मेरे पास किसी के बैठने की आवश्यकता है—सो भी नहीं।

कुछ ही देर बाद कमला ने चक्रवर्ती से कहा—"रात बहुत बीती। अब आप सोने के लिए जाइए। एकबार उमेश की खोज कीजिएगा। शायद वह डरता होगा !"

दरवाज़े के पास ही से यह आवाज़ आई—"मैं किसी से नहीं डरता।"

उमेश घुटने से सिर अड़ाकर दरवाज़े के पास ही बैठा था। यह देख कमला का हृदय द्रवित हो गया। वह झट बाहर आकर बोली—"सुन उमेश ! तू बाहर बैठकर क्यों पानी में भीग रहा है, अभागा कहीं का, जा, चक्रवर्ती के साथ जाकर सो रह।"

कमला के मुँह से अपने को अभागा सुन, उमेश बड़ी ख़ुशी से चक्रवर्ती के साथ सोने के लिए गया।

रमेश ने पूछा—"जितनी देर तुम्हें नींद न आवे, उतनी देर कहो, तो मैं यहाँ बैठकर तुम को कोई क़िस्सा सुनाऊँ।"

कमला—"नहीं, मैं बड़ी देर से ऊँघ रही हूँ। अब शीघ्र ही सो जाऊँगी।"

रमेश ने कमला के मनका भाव न समझा हो—यह नहीं, किन्तु वह उस पर फिर कुछ न बोला। कमला के ग्लानि भरे मुँह की ओर देखकर वह धीरे धीरे अपने कमरे में चला गया।”

नींद से कमला बिछौने पर स्थिर होकर कैसे पड़ी रहती। ऐसी शान्ति उसके मनमें कहाँ थी। तो भी भावना करते करते कुछ देर में वह सो गई। झड़ी के प्रबल वेग के साथ साथ नदी की तरङ्ग भी क्रम से बढ़ने लगी। ख़लासी सब घबरा उठे। जहाज़ के कर्मचारी यात्रियों को सावधान करने के लिए लङ्गर डालने पर भी प्रबल वायु के आघात से जहाज़ धीरे धीरे डोलने लगा।

कमला चारपाई छोड़ कमरे के बाहर आ खड़ी हुई। कुछ देर से पानी बरसना बन्द हो गया परन्तु हवा का वेग वैसा ही प्रबल है। बादल से ढका रहने के कारण शुक्ल पक्ष की चतुर्दशी का आकाश धुँधला सा दिखाई दे रहा है। किनारा साफ़ साफ़ दिखाई नहीं देता।

इस उन्मादिनी रात और मेघाच्छन्न आकाश की ओर देख कर कमला का हृदय काँपने लगा। भय से, या आनन्द से, यह ठीक ठीक नहीं कहा जा सकता। इस प्रलय के भीतर जो एक प्रबल शक्ति है, एक बन्धनहीन स्वाधीनता है मानो उसने कमला के हृदय में सोई हुई एक संगिनी को जगा दिया। इस विश्वव्यापी विद्रोह के तीव्र वेग ने कमला के चित्त को विचलित कर दिया। कैसा विद्रोह है, यह क्या झंझा वायु की सनसनाहट में जाना जा सकता है? नहीं, वह कमला के हृदय में ही छिपा है।

तीसवाँ परिच्छेद

दूसरे दिन सवेरे झड़ी का वेग कुछ कम हुआ, पर एकदम शान्त न हुआ। लङ्गर उठाना चाहिए या नहीं, जहाज़ के कर्मचारी जब भी इसका ठीक नहीं कर सकते थे। वे सब घबराहट के साथ आकाश की ओर देख रहे थे।

चक्रवर्ती सवेरे ही रमेश को खोज ख़बर लेने कमला की पासवाली कोठरी में गये। देखा, तब भी रमेश चारपाई पर पड़े हैं। चक्रवर्ती को देख कर वे झट उठ बैठे। इस घर में रमेश की स्वतन्त्र शय्या देख चक्रवर्ती ने गत रात्रि की घटना के साथ साथ सब बातों का अनुमान मन ही मन कर लिया। पूछा, "कल रात में शायद इसी घर में आपका सोना हुआ था?"

रमेश ने इस प्रश्न का कुछ उत्तर न देकर कहा—"कहिए, कल का दिन कैसा ख़राब था? शायद ही आपको रात में नींद आई होगी?"

चक्रवर्ती—"रमेश बाबू, "आप मुझे जैसा जाहिल सा देखते हैं, मेरी बातचीत भी वैसी ही होती है, तो भी इतनी बड़ी उम्र में मुझे कई बार कठिन से कठिन विपत्तियों से सामना करना पड़ा और उनसे बचने की अनेक मीमांसायें भी करनी पड़ी हैं। इसके सिवा कितने ही गूढ़ाशय महानुभावों के भी दर्शन हुए हैं, परन्तु उन सबों में आपका नम्बर सब से

बड़ा चढ़ा मालूम होता है। आपसे कठिन लोग मुझे बहुत कम मिले हैं।"

यह सुन कर रमेश का मुँह कुछ देरके लिए लाल हो गया, परन्तु तुरन्त ही उसने अपने को सँभाल कर हँस कर कहा—"कठिन होने ही से जो कोई सब समय में अपराधी समझा जाय, यह नहीं तिलगू भाषा की शिशुपाठ्य पुस्तक भी कठिन होती है किन्तु तैलङ्ग के बालकों के लिए वह बड़ी ही सीधी है। जो विषय समझ में न आवे उस पर सहसा दोष देना ठीक नहीं, जो अक्षर नहीं पहिचानते, वे अक्षर पर अनिमेष दृष्टि रखने से भी क्या उसे पहचान सकते हैं? सब जगह अनुभव से काम नहीं चल सकता।"

वृद्ध ने कहा—"मुझे क्षमा कीजिए। मेरे साथ जिन बातों का सम्पर्क नहीं है, उनके जानने की चेष्टा करना मेरी धृष्टता मात्र है। परन्तु संसार में विरला ही कोई ऐसा मनुष्य मिलता है, जिसके साथ भेंट होने से सम्बन्ध स्थिर हो जाता है। आप जहाज़ के कप्तान से पूछ देखें, अभी बहू जी के साथ उनका जो सम्बन्ध है उसे वह अवश्य ही स्वीकार करेंगे। न करेंगे तो मैं उन्हें मुसलमान न समझूँगा। तिलगू भाषा की बात जाने दीजिए। केवल क्रोध करने से कुछ न होगा। मेरी बात को आप अच्छी तरह सोच देखें।"

रमेश—"मैं क्रोध नहीं करता। परन्तु मैं क्रोध करूँ या न करूँ, आप दुःख पावें या न पावें। तिलगू भाषा तैलङ्ग में रहेगी। प्रकृति का ऐसा ही कठोर नियम है।"

यह कह कर रमेश ने एक लम्बी साँस ली।

रमेश को अब इस बात की चिन्ता हुई कि गाज़ीपुर जाना उचित है या नहीं। पहले उसने सोचा था, नई जगह में वास-स्थान आदि का निश्चय करने के लिए चक्रवर्ती का परिचय कुछ काम देगा। अब वह ख़याल बदल गया। उसने सोचा, यह परिचय असुविधा का भी कारण हो सकता है। आलोचना और अनुसन्धान होने से कदाचित् कमला के अंश में कुछ ख़राबी आ पड़े।"

गाज़ीपुर पहुँचने के एक दिन पूर्व रमेश ने चक्रवर्ती से कहा—"गाज़ीपुर मेरे प्रैक्टिस के लिए ठीक जगह नहीं मालूम होती, इसलिए मैंने काशी जाने ही का विचार किया है।"

वृद्ध ने हँसकर कहा—"बार बार विचार बदलने को विचार स्थिर करना न कह कर उसे अस्थिर करना ही कहना चाहिए। ख़ैर, जो कुछ हो, अब काशी जाना ही आपका आख़िरी विचार स्थिर हुआ?"

रमेश—"हाँ।

वृद्ध कोई उत्तर न देकर चले गये और अपनी चीज़ वस्तु बाँधने लगे।"

कमला ने आकर कहा—"चक्रवर्ती जी, आज मेरे साथ झगड़ा क्यों?"

वृद्ध—"झगड़ा तो रोज़ ही होता है, पर मैं एक दिन भी झगड़े में न जीत सका।"

कमला—"आज सवेरे से आप भागे भागे फिरते हैं?"

चक्रवर्ती—"तुम सब तो मुझसे भी बढ़कर भागने की कोशिश में हो, और मुझी पर भागने का दोष लगाती हो।"

कमला इस बात का अर्थ न समझ उनके मुँह की ओर देखने लगी।

वृद्ध—"क्या रमेश ने अब भी तुमसे कुछ नहीं कहा? उन्होंने काशी जाना ही स्थिर किया है।"

यह सुनकर कमला 'हाँ-ना' कुछ न बोली। कुछ देर के बाद उसने कहा—"आप से यह काम न हो सकेगा, दीजिए, मैं आपकी सन्दूकची में सब चीज़ ठीक से रख देती हूँ।"

काशी जाने के नाम से कमला को उदासीन देख वृद्ध के हृदय में एक गहरी चोट लगी। उन्होंने मन ही मन सोचा, अच्छा ही हुआ जो इस झमेले से मैं अलग होगया। मेरे जैसे बूढ़े को इस बखेड़े में फँसने की ज़रूरत क्या? मैं क्यों इसमें आप से आप फँसने लगा?"

इसी समय रमेश काशी जाने की बात कमला से कहने आया। कहा—"मैं बड़ी देर से तुम्हें खोज रहा था।"

कमला चक्रवर्ती के कपड़ों को सजाकर सन्दूक़ में रखने लगी।

रमेश ने कहा—"कमला! हम सब इस बार गाज़ीपुर न जा सके। मैंने काशी जाकर प्रैक्टिस करने की बात ठीक की है। तुम क्या कहती हो?"

कमला ने चक्रवर्ती के सन्दूक़ की ओर से नज़र न उठाकर कहा—"नहीं, मैं गाज़ीपुर को ही जाऊँगी। मैंने अपना सब सामान ठीक कर लिया।"

कमला के इस निर्विवाद उत्तर से चकित होकर रमेश ने कहा—"क्या तुम अकेली ही जाओगी?"

कमला ने चक्रवर्ती के मुँह की ओर ममता भरी दृष्टि डाल कर कहा—"क्यों, वहाँ मेरे चक्रवर्ती जी भी तो रहेंगे।"

कमला की इस बात से चक्रवर्ती पसोपेश में पड़ गये। उन्होंने कहा—"अगर तुम मेरा इतना पक्ष लोगी तो रमेश बाबू मुझे देख न सकेंगे।"

इसके उत्तर में कमला ने सिर्फ़ इतना ही कहा—"मैं गाज़ी-पुर जाऊँगी।"

इस सम्बन्ध में किसी से कुछ सम्मति लेने की ज़रूरत भी कमला के कण्ठ स्वर से ज़ाहिर न हुई।

रमेश ने कहा—"चक्रवर्ती जी, तो गाज़ीपुर का जाना ही पक्का हुआ।"

आज आकाश में बादल का नाम नहीं है। शरद ऋतु की रात को चाँदनी चारों ओर चित्त चुरा रही थी। रमेश डेग के तख़्ते पर बैठ कर सोचने लगा—"इस तरह कब तक चलेगा। विद्रोही कमला को लेकर दिन दिन भारी उपद्रव मचने की सम्भावना है। इस लिए अब उसके साथ दूसरे ही तौर से पेश आऊँगा। कमला ही मेरी स्त्री है। मैंने तो उसे स्त्री समझ कर ही ग्रहण किया था। उसके साथ वेद-विधि से ब्याह न हुआ, इसका संकोच करना अब उचित नहीं। धर्मराज ने उस दिन कमला को बधूरूप में मेरे पास लाकर उस निर्जन बालुकामय द्वीप में स्वयं ग्रन्थिबन्धन कर दिया। उनके सदृश धार्मिक पुरोहित संसार में और कहाँ मिलेगा? परमेश्वर की लीला अगम और अपार है।"

नलिनी और रमेश के बीच एक भारी दङ्गल का मैदान आ पड़ा है । अपमान और अविश्वास आदि बाधाओं को काट कर यदि रमेश जीत सकेगा तो वह सिर उठाकर नलिनी के पास जाकर खड़ा हो सकेगा । उस दङ्गल की बात याद आने से उसे डर होता है । जीतने की उसे कोई आशा नहीं होती । वह अपने को कैसे प्रमाणित कर सकता है ? प्रमाण देने से सब बातें जन साधारण के निकट ऐसी गर्हित और कमला के अंश में ऐसी भयंकर हो उठेंगी कि उसका संकल्प तक करना कठिन है ।

इसलिए अब दुर्बल की भाँति तीन पाँच न करके कमला को खा बना कर रखने ही में सब प्रकार कुशल है । नलिनी का जब मुझपर पहले का सा भाव नहीं है तब वह प्रसन्नतापूर्वक योग्य वर के हाथ अपने मन को सौंप सकती है । यह सोच कर रमेश ने दीर्घनिश्वास ले उधर की आशा छोड़ दी ।

इकतीसवाँ परिच्छेद

रमेश ने पूछा—"क्यों रे! तू कहाँ जायगा?"

उमेश—"मैं माजी के साथ जाऊँगा।"

रमेश—"मैंने जो तेरे लिए काशी तक का टिकट ले लिया है। यह तो गाज़ीपुर का घाट है। हम सब तो काशी न जायँगे।"

उमेश "मैं भी न जाऊँगा।"

उमेश उन सबों का साथ न छोड़ेगा, यह आशङ्का रमेश के मन में न थी। किन्तु उस लड़के के चित्त की दृढ़ता देखकर रमेश क्षुब्ध हो गया। कमला से पूछा—"क्या उमेश को साथ ले जाना होगा?"

कमला—"न ले जाऊँगी तो वह कहाँ जायगा?"

रमेश—"क्यों? काशी में उसके आत्मीय हैं।"

कमला—"नहीं, वह हमी सबों के साथ जायगा, कह चुका है। उमेश! तू बराबर चक्रवर्ती के साथ साथ चलना, नहीं तो लोगों की भीड़ में कहीं खो जायगा।"

कहाँ जाना होगा, किस को साथ ले जाना होगा, इन सब बातों के विचार का भार भी कमला ने अपने ही ऊपर लिया है। पहले वह रमेश से पूछ कर कोई काम करती थी, उसकी सम्मति को नम्रतापूर्वक स्वीकार करती थी। किन्तु इधर

कई दिनों से वह अपना स्वतन्त्र विचार रखती है। इसलिए उमेश भी उसको एक छोटी सी गठरी बगल में दबा कर उसके साथ चला। इस विषय में और कोई विशेष आलोचना न हुई।

शहर और साहबगंज के बीच में चक्रवर्ती महाशय का एक छोटा सा बँगला है। उसके पीछे आम का बाग़ है। सामने एक पक्का कुवाँ है।

प्रथम दिन कमला और रमेश इसी बँगले में जाकर टिके।

चक्रवर्ती की स्त्री हरिभाविनी बराबर बीमार रहा करती है। चक्रवर्ती सब से यही कहा करते थे, किन्तु उसका चेहरा देखने से बीमारी का कोई बाह्य लक्षण दिखाई नहीं देता था। वह कम उम्र की न थी, परन्तु वृद्धा भी न थी।

शरीर अधेड़ सा प्रतीत होता था। सामने के कुछ कुछ बाल पके थे, पर कच्चे बालों का अंश अधिक था। उसको देखने से यही जान पड़ता था, जैसे बुढ़ापे ने उसपर डिग्री तो हासिल की, पर अब तक दख़ल नहीं जमा सका है।

सच तो यह है कि ये दोनों दम्पती जब युवा थे, तब हरि-भाविनी को मैलेरिया ज्वर ने पकड़ लिया था। वायु परिवर्तन के सिवा और कोई उपाय न देख चक्रवर्ती गाज़ीपुर स्कूल में अध्यापकीय वृत्ति का अवलम्बन कर यहीं रहने लगे। स्त्री के सर्वथा आरोग्य होने पर भी उसकी तन्दुरुस्ती पर उन्हें कुछ विश्वास न होता था।

रमेश आदि आगत व्यक्तियों को बाहर के घर में बिठाकर चक्रवर्ती ने अन्दर जाकर गृहिणी को पुकारा।

उनकी गृहिणी उस समय धूप में अचार और चटनी आदि के बर्तन रखकर सुखा रही थी, और गेहूँ पिसवा रही थी।

चक्रवर्ती ने आते ही कहा—"यह क्या! जाड़ा आ गया, तुम बदन पर कोई कपड़ा क्यों नहीं पहन लेतीं?"

हरिभाविनी—"आपकी सब बातें बे सिर पैर की होती हैं। जाड़ा है कहाँ—धूप से तो पीठ जली जा रही है।"

चक्रवर्ती—"यह भी तो अच्छा नहीं, छाया कहीं से लाना ही नहीं पड़ेगी।"

हरिभाविनी—"अच्छा, होगा। आपने आने में इतनी देर क्यों की?"

चक्रवर्ती—"यह पीछे कहूँगा, अभी घर पर अतिथि आये हैं। उनकी सेवा का सामान ठीक करना होगा।"

यह कह कर चक्रवर्ती ने अतिथि का परिचय दिया। चक्रवर्ती के घर पर विदेशी अतिथियों का समागम प्रायः इस तरह बराबर हुआ करता था, किन्तु सस्त्रीक अतिथि के लिए हरिभाविनी प्रस्तुत न थी। उसने कहा—"आप के घर कहाँ है जो उन्हें रक्खेंगे?

चक्रवर्ती—"पहले उनसे जान पहचान तो कर लो, पीछे घर की बात होगी। मेरी अन्नपूर्णा कहाँ है?"

हरिभावनी—"वह अपने लड़के को नहलाने गई है।"

चक्रवर्ती तुरन्त कमला को भीतर बुला लाये। कमला ने हरिभाविनी को प्रणाम किया।

हरिभाविनी ने असीस देकर कहा—"देखती हूँ, इसका मुँह मेरी शशिकला से बहुत कुछ मिलता जुलता है।"

शशिकला उसकी बड़ी लड़की थी, जो अपने स्वामी के घर कानपुर में रहती थी। चक्रवर्ती मन ही मन हँसे। वे जानते थे, कमला के साथ शशिकला का कोई सादृश्य न था। किन्तु हरिभाविनी रूप गुण में अपनी लड़की को उपमा न समझ दूसरे की लड़की को उपमेय समझती थी। सुन्दरता में वह पराई लड़की की जीत स्वीकार न कर सकती थी। अन्नपूर्णा उसके घर ही में थी, कदाचित् उसके साथ प्रत्यक्ष तुलना में उसकी हार हो, इसलिए जो उसके घर पर मौजूद न थी उसको उपमा स्थल में रखकर हरिभाविनी ने अपने घर के भीतर ही विजय-पताका फहराई।

हरिभाविनी—"ये सब आये हैं, यह बड़े आनन्द की बात है, किन्तु मेरा नया मकान तो अभी तक दुरुस्त नहीं हुआ है, इस घर में हम सब किसी तरह दिन काट रही हैं—यहाँ इनको बड़ा कष्ट होगा।"

बाज़ार में चक्रवर्ती का एक छोटा सा घर तैयार हो रहा था। पर वह एक दूकान की शकल का था। वह रहने योग्य जगह न थी। न वहाँ किसी तरह की कोई सुविधा ही थी।

चक्रवर्ती इस मिथ्याभाषण का कोई प्रतिवाद न करके कुछ हँस कर बोले—"यदि वह कष्ट को कष्ट समझतीं, तो क्या मैं उन्हें इस घर में लाता।" (अपनी स्त्री की ओर देखकर) तुम बड़ी देर से धूप में खड़ी हो, शरद ऋतु की धूप बड़ी ख़राब होती है। यह कहकर चक्रवर्ती रमेश के पास चले गये।"

इधर हरिभाविनी कमला से विस्तारपूर्वक परिचय पूछने लगी। "तुम्हारे पति वकील हैं ? वे कितने दिन से काम कर रहे हैं ? और किसी तरह का रोज़गार है ? जान पड़ता है, उन्होंने अभी तक कहीं वकालत नहीं की है ? तो फिर ख़र्च कैसे चलता है ? तुम्हारे ससुर धनी हैं ? उनके पास सम्पत्ति है ? नहीं जानती ? तुम कैसी भोली हो जो ससुर के घर की ख़बर नहीं रखती ? घर के ख़र्च के लिए स्वामी तुमको कितना मासिक देते हैं ? जब सास नहीं है तब तो आश्रम का भार तुमको अपने ही ऊपर लेना पड़ा होगा। तुम तो अब निरी बालिका नहीं हो। मेरे बड़े जमाई जो कुछ कमाते हैं, सब मेरी शशी को देते हैं।" ऐसे अनेक प्रश्न और मिष्ट संभाषण के द्वारा हरिभाविनी ने थोड़ी ही देर में कमला को हस्तगत कर लिया।

कमला रमेश के विषय में बहुत अल्पज्ञान रखती थी। उन दोनों के दाम्पत्य सम्बन्ध का विचार करने से यह अल्पज्ञान कितना असङ्गत और लज्जा का विषय है, यह हरिभाविनी के प्रश्नों से उसके मन में स्पष्ट झलक गया। उसने सोचकर देखा—"आज तक उसे रमेश के साथ किसी बात की भली भाँति आलोचना करने का अवसर नहीं मिला। वह रमेश की स्त्री हो कर भी रमेश के विषय में कुछ नहीं जानती। आज यह उसे ख़ुद अपने तईं आश्चर्य मालूम होने लगा और अपनी अनभिज्ञता पर खेद होने लगा।"

हरिभाविनी फिर कहने लगी—"बहूजी! देखूँ तुम्हारे हाथ का कड़ा। यह सोना तो उतना अच्छा नहीं जान पड़ता। क्या बापके घर से तुम कुछ गहना न लाई थीं? क्या तुम्हारे बाप

जीते नहीं हैं? इसी से तुम्हारे बदन पर इतने थोड़े ज़ेवर हैं। क्या तुम्हारे पति तुमको कुछ ज़ेवर नहीं देते? मेरे बड़े जामाता तो मेरी शशी को दूसरे तीसरे महीने एक न एक नया ज़ेवर बनवा देते हैं।"

उन दोनों में इस तरह का सवाल जवाब हो रहा था कि उसी समय अन्नपूर्णा अपनी दो वर्ष की बेटी का हाथ पकड़े वहाँ आई। अन्नपूर्णा साँवली थी। उसका मुखमण्डल छोटा मोटा सा था। आँखें दोनों बड़ी बड़ी, पर गोल थीं। ललाट चौड़ा और बाल बहुत लम्बे थे। उसका चेहरा देखने ही से मालूम होता था कि वह गम्भीर और शान्त प्रकृति की स्त्री है।

अन्नपूर्णा की छोटी सी बालिका कमला के सामने खड़ी हो कुछ देर तक टकटकी बाँध उसके मुँह की ओर देखकर बोल उठी—"मौसी" शशिकला समझ कर उसने उसे मौसी कहा हो। यह बात नहीं है। बड़ी उम्र की कोई स्त्री जो उसे प्रिय जान पड़ती, उसे वह तुरन्त मौसी कहकर पुकारने लगती। कमला ने झट उसे गोद में बिठा लिया।

हरिभाविनी ने अन्नपूर्णा से कमला का परिचय देकर कहा—"इसके पति वकील हैं, वे रोज़गार करने के लिए घर से बाहर हुए हैं। रास्ते में तुम्हारे पिता से उनकी भेट हुई। वे ही उन सबों को यहाँ ले आये हैं।"

अन्नपूर्णा ने कमला के मुँह की ओर देखा। कमला ने भी उसकी ओर देखा। इसी परस्परावलोकन ने दोनों को स्नेहसूत्र में बाँध दिया। हरिभाविनी आतिथ्य की सामग्री संग्रह करने को

गई। अन्नपूर्णा ने कमला का हाथ पकड़ कर कहा—"बहन, इधर आओ।" यह कह कर वह उसे अपने घर में ले गई।

थोड़ी ही देर के बाद उन दोनों में बड़ी घनिष्ठता के साथ बात होने लगी। जैसे उन दोनों की कब की पुरानी मित्रता हो। अन्नपूर्णा के साथ जो कमला का वयःकृत प्रभेद था, वह देखने से सहसा नहीं जान पड़ता था। अन्नपूर्णा बहुत दुबली पतली और ऊँचाई में भी छोटी थी। कमला ठीक इसके विपरीत थी। आकार और भावभङ्गी में वह अपनी उम्र को पूर्णता तक पहुँच चुकी थी। विवाह होने के बाद उसपर सास ससुर का कोई दबाव न रहने के कारण या किसी और ही कारण से वह देखते ही देखते बहुत बढ़ गई थी। उसके चेहरे पर एक प्रकार की स्वाधीनता का चिह्न झलक रहा था। नववधू को गुरुजनों के द्वारा ससुराल में जो शिक्षा मिलती है, वह उसे न मिली थी। इसी से वह बहुत बात न जानती थी।

अन्नपूर्णा की लड़की, उमा, के द्वारा दोनों के ध्यान को अपनी ओर खींचने की चेष्टा करते रहने पर भी दोनों नई सखियों में गप्प का तार बँध गया। इस कथोपकथन से कमला अपनी दीनता सहज ही समझ गई। अन्नपूर्णा को अभी बहुत कुछ कहना है। पर कमला को कुछ भी नहीं। कमला के हृदयपट पर जो उसके दाम्पत्य का चित्र है, वह पेन्सिल का खींचा हुआ एक चिह्न मात्र है। उसपर अभी कोई रङ्ग नहीं चढ़ा है। कमला इतने दिन इसपर ध्यान देने का अवकाश न पाती थी और न उसे इसका कारण जानने का अवसर ही मिला था। यद्यपि वह इस अभाव का अनुमान कई बार कर चुकी है। बीच बीच में विद्रोहभाव भी उपस्थित हो चुका है। तो भी

वह अभी तक असली हाल मालूम न कर सकी। सख्य-भाव की भूमिका ही में जब अन्नपूर्णा ने उससे अपने स्वामी का वृत्तान्त कहना आरम्भ किया, जब उसने अपने अक्षय्य हृदय भाण्डार का द्वार खोल दिया, तब कमला अपने हृदय को खाली देख चुप हो रही। वह पति की बात अन्नपूर्णा से क्या कहती? कहने की बात ही क्या थी? सुख का पूरा बोझ लेकर अन्नपूर्णा का इतिहास रूपी जहाज़ जहाँ उमङ्ग की धारा में बड़े वेग से दौड़ा जा रहा था, वहाँ कमला की सूनी नाव नैराश्य के टीले से रुक कर अचल हो पड़ी थी।

अन्नपूर्णा का पति विपिनविहारी गाज़ीपुर में अफ़ीम गोदाम में कोई काम करता है। चक्रवर्ती के दो बेटियाँ हैं। बड़ी बेटी अपनी ससुराल में है। छोटी बेटी को अपने पास से अलग करने में असमर्थ होकर चक्रवर्ती एक दरिद्र वर ले आये और उसी के साथ अन्नपूर्णा को ब्याह दिया। पीछे हाकिम हुक्काम के यहाँ कोशिश पैरवी करके उसे इसी शहर में एक नौकरी भी दिला दी। विपिनविहारी इन्हीं के यहाँ रहता है।

बात करते ही करते अन्नपूर्णा एकाएक उठ खड़ी हुई और बोली—"बहन, तुम बैठो, मैं अभी आती हूँ।" कुछ ही देर के बाद वह लौट आई और हँसकर अपने जाने का कारण कहने लगी—"वे स्नान करके भीतर आये हैं, भोजन करके आफ़िस जायँगे।"

कमला ने कुछ विस्मय के साथ पूछा—"वे भीतर आये यह तुमने कैसे जाना?"

अन्नपूर्णा—"तुम हँसो मत। सभी सुहागिन स्त्रियाँ जैसे जानती हैं वैसे ही मैंने भी जाना। क्या तुम अपने पति के पैर की आहट नहीं पहचानतीं?"

यह कह कर अन्नपूर्णा हँसकर कमला के चिबुक को ज़रा हिला, आँचल में बँधी हुई कुञ्जियों के गुच्छे को झमका कर पीठ के ऊपर फेंक, लड़की को गोद में लेकर चली गई। पैर के आहट का भाषा इतनी सरल है, यह कमला अब भी अच्छी तरह न समझ सकी। वह चुपचाप बैठकर खिड़की के बाहर दृष्टि डाल इस बात को सोचने लगी। उस समय खिड़की के बाहर एक फूल के पेड़ पर झुण्ड की झुण्ड मधु-मक्खियाँ घूम रही थीं।

बत्तीसवाँ परिच्छेद

गङ्गा के किनारे एक अच्छी जगह तजवीज़ कर किराये पर मकान लेने का विचार हो रहा है। रमेश गाज़ीपुर की अदालत में बाज़ाब्ता वकालत करने का हुक्मनामा और ज़रूरी चीज़ लाने के लिए एकबार कलकत्ता जाने का विचार स्थिर कर चुका है। परन्तु कलकत्ता जाने का उसे साहस नहीं होता। कलकत्ते की एक विशेष गली का चित्र मनमें आते ही अब भी रमेश का हृदय काँप उठता है। अब भी वह मोह जाल में पड़ा है। इधर कमला के साथ सम्पूर्णरूप से दाम्पत्य सम्बन्ध स्वीकार करने में विलम्ब करना भी ठीक नहीं। इन्हीं सब बातों को सोच विचार कर रमेश कलकत्ता जाने में आलस्य करने लगा।

कमला चक्रवर्ती के घर के भीतर ही रहती थी। भीतर जगह बहुत कम थी, इसलिए रमेश को बाहर ही दालान में रहना पड़ता था। कमला के साथ भेंट करने का उसे सुयोग न मिलता था।

इस विषम विच्छेद काण्ड को लेकर अन्नपूर्णा केवल कमला के पास दुःख प्रकाश करने लगी। कमला ने कहा—"क्यों बहन, तुम इतना सोच क्यों करती हो? ऐसा कौन सङ्कट आ पड़ा है?"

अन्नपूर्णा ने हँस कर कहा—"तुम धन्य हो! क्या तुम्हारा हृदय पत्थर से भी कठोर है? यह सब कपट कौशल रहने दो। तुम्हारे मन में जो होता है, सो क्या मैं नहीं जानती? मैं सब जानती हूँ।"

कमला ने पूछा—"अच्छा बहन, सच सच कहो, अगर दो दिन विपिन बाबू तुमसे भेंट न करें तो क्या तुम"—अन्नपूर्णा ने गर्व भरे स्वर में कहा—"यह कभी हो सकता है? वे दो दिन मुझसे अलग होकर रहेंगे?"

यह कह कर वह विपिन बाबू की अधीरता के सम्बन्ध में गप्प करने लगी। विवाह होने के बाद बालक विपिन ने गुरु-जनों की आँख बचा कर अपनी नववधू के साथ भेंट करने के लिए कब क्या क्या कौशल किया था, कब उसका आयास व्यर्थ हुआ था, कब उसका यह कपट कौशल लोगों में लक्षित हुआ था। दिन में भेंट न होने का दुःख हलका करने के लिए विपिन के मध्याह्न भोजन काल में एक बड़े आइने के भीतर गुरुजनों की दृष्टि बचा कर उन दोनों में परस्पर कैसे आँखों ही आँखों बात होती थी, यह कहते कहते पुरानी बात याद आ जाने के कारण आनन्द से अन्नपूर्णा का सर्वाङ्ग कण्टकित हो गया और चेहरा खिल उठा। इसके बाद जब आफ़िस जानेका काण्ड प्रारम्भ हुआ तब जो उतनी देर का बियोग दोनों को असह्य होता था, जब तब रुष्ट होकर विपिन बाबू का आफ़िस को भागना आदि अनेक बातें हुईं। एकवार ससुर की ओर से व्यवसाय करने के लिए कुछ दिन के हेतु विपिन को पटना जाने की बात हुई। तब अन्नपूर्णा ने अपने पति से पूछा—"आप अकेले पटना जाकर रह सकेंगे?"

विपिन ने ज़ोर बाँधकर कहा—"क्यों नहीं रह सकूँगा, ख़ूब मज़े में रहूँगा।" इस स्पर्धावाक्य से अन्नपूर्णा के मनमें बड़ी ग्लानि हुई। उसने प्राणपण से यात्रा की प्रतिज्ञा की थी। वह ज़रा भी दुःख प्रकाश न करेगी। परन्तु न मालूम वह प्रतिज्ञा नयन जल के प्रवाह के साथ किधर बह गई। दूसरे दिन जब यात्रा का सब सामान ठीक हो चुका तब एकाएक विपिन को ऐसी सिरदर्दी शुरू हुई कि यात्रा रुक ही गई। इसके बाद डाक्टर बुलाये गये। उन्होंने बहुत उमदा एक शीशी दवा दी। दवा देकर जब वे चले गये तब उस शीशी की दवा को चुपचाप नाली में फेंक कर किस अपूर्व उपाय से उसकी शिरःपीड़ा निवृत्त हुई, यह सब वृत्तान्त कहते कहते कब कितना समय बीत जाता था, इसका ज्ञान अन्नपूर्णा को न रहता था। एक बात और यह कि ऐसे समय में दरवाज़े पर किसी के आने की आहट सुन वह हड़बड़ा कर सहसा उठ खड़ी होती थी। शायद विपिन बाबू आफ़िस से न आये हों, सम्पूर्ण वार्तालाप के भीतर एक उत्कण्ठित हृदय मानो उनके आने की राह देख रहा था।

कमला के आगे ये सब बातें एकबार ही आकाश-कुसुम की भाँति रही हों, यह नहीं, इसका आभास पहले ही से कुछ कुछ उसके हृदय में पड़ चुका था। पहले कई महीनों तक रमेश के साथ प्रथम समागम के समय इस तरह की एक न एक घटना रोज़ ही हो जाया करती थी। इसके बाद भी स्कूल से छुटकारा पाकर जब वह रमेश के पास लौट आई, तब भी बीच बीच में इस तरह की तरल-तरङ्ग अपूर्व सङ्गीत और नृत्य के साथ उसके हृदय में आघात पहुँचाती थी। जिसका

ठीक अर्थ वह आज अन्नपूर्णा की इन कहानियों से समझ सकी है। समझने ही से क्या होगा? अन्नपूर्णा और विपिन में जो एक प्रकार के आग्रह का लिखाव है, वह रमेश और कमला में कहाँ पावेगा। यह जो कई दिनों से इन दोनों में परस्पर की देखा सुनी बन्द है, इससे कमला के मन में क्या चञ्चलता हुई? कुछ नहीं। और रमेश भी उसके देखने के लिए बाहर बैठ कर कोई युक्ति सोचता हो, या कुछ अधीरता प्रकट करता हो, यह भी नहीं।

निदान, जिस दिन रविवार आया, उस दिन अन्नपूर्णा कुछ कठिनता में पड़ गई। अपनी नई सखी को एक ही बार बड़ी देर तक अकेली छोड़ कर जाने में उसे लज्जा मालूम होने लगी। दूसरे छुट्टी के दिन को वह एकबार ही व्यर्थ कर देगी, इतनी बड़ी उदारता भी उसे न थी। इधर रमेश बाबू के नज़दीक रहते भी जब कमला की उससे भेंट नहीं होती तब छुट्टी के दिन अपने पति के पास जाकर सम्मिलनसुख लूटने में उसे कुछ कष्ट भी मालूम हुआ। अहा! अगर किसी तरह रमेश के साथ कमला के मिलन का कोई प्रबन्ध कर दिया जाता तो क्या ही अच्छा होता।"

इन बातों में गुरुजनों से सलाह विचार लेकर तो कुछ किया नहीं जाता। किन्तु चक्रवर्ती बिना कहे सब बात जानते थे। उन्होंने अपने घर में सब से कह दिया, आज वे किसी विशेष कार्य वश शहर के बाहर जाते हैं। रमेश को समझा दिया कि बाहर का कोई आदमी आज उनके घर न आवेगा। सदर के फाटक बन्द कर के वे जाते हैं। यह समाचार उन्होंने अपनी

कन्या को भी सुना दिया। वे भली भाँति जानते थे कि उनके इङ्गित का अर्थ अन्नपूर्णा भली भाँति समझ जाती थी।

स्नान करने के बाद अन्नपूर्णा ने कमला से कहा—"आओ बहन, तुम्हारी चोटी बाँध दूँ।"

कमला—"क्यों, आज इतनी जल्दी किस लिए?"

अन्नपूर्णा—"यह पीछे कहूँगी। पहले तुम्हारी चोटी बाँध दूँ।" यह कह कर वह कमला को अपने आगे बिठा कर कङ्घी करने लगी। आज कमला की वेणी बाँधने में अन्नपूर्णा ने कुछ विशेष परिश्रम किया।

इसके बाद साड़ी की बात लेकर दोनों सखियों में वाग्युद्ध होने लगा। अन्नपूर्णा उसे रङ्गीन साड़ी पहिराना चाहती थी। कमला पहिरने का कारण पूछती थी। आखिर बिना कारण जाने अन्नपूर्णा को सन्तुष्ट करने की इच्छा से कमला ने उसकी दी हुई साड़ी पहन ली।

दोपहर को भोजन के अनन्तर अन्नपूर्णा अपने स्वामी के कान में न मालूम क्या कह कर कुछ देर के लिए छुट्टी लेकर कमला के पास आई। इसके बाद कमला को बाहरी दालान में भेजने के लिए भारी धूम मच गई।

इसके पूर्व कमला रमेश के पास कई बार निःसङ्कोच होकर जाती आती थी। इस विषय में सामाजिक लज्जा-प्रकाश की कोई विधि है, यह जानने का आज तक उसे कोई अवसर न मिला था। परिचय के आरम्भ में ही रमेश ने संकोच का व्यवहार उठा दिया था। निर्लज्जता का दोष देकर धिक्कारने वाली कोई सङ्गिनी भी कमला के पास न थी।

किन्तु आज अन्नपूर्णा का अनुरोध पालन करना उसके लिए अत्यन्त कठिन हो गया। अन्नपूर्णा जिस अधिकार से स्वामी के पास जाती हैं यह उसे मालूम हो चुका है। कमला को जब वह अधिकार नहीं है तब वह दीनभाव से रमेश के पास क्यों जायगी।

कमला जब किसी तरह जाने को राज़ी न हुई तब अन्नपूर्णा ने समझा, वह रमेश से रूठी है। रूठने की बात ही है। कई दिन होगये, पर रमेश ने कोई युक्ति निकाल कर एकबार भी कमला को देखने की चेष्टा न की।

हरिभाविनी उस समय किवाड़ बन्द करके अपने घर में सोई थी। अन्नपूर्णा ने विपिन से आकर कहा—"आप रमेश बाबू को कमला का नाम कह कर भीतर बुला लाइए। पिताजी इसके लिए कुछ न कहेंगे। माँ सोई हैं, वह कुछ जान ही न सकेंगी।" विपिन के सदृश एकान्त प्रिय मनुष्य के लिए ऐसा दूतकर्म किसी तरह इष्ट न था तो भी छुट्टी के दिन अन्नपूर्णा के इस अनुरोध का लङ्घन वह नहीं कर सका।

रमेश बैठक में जाज़िम बिछी हुई चौकी पर चित लेटा हुआ पायोनियर (अख़बार) पढ़ रहा था। पढ़ने योग्य लेख समाप्त करके जब विज्ञापन की ओर दृष्टि दी, तब विपिन को घर में आते देख वह उल्लसित हो उठा। साथी के ख़याल से विपिन उसका जैसा चाहिए अन्तरङ्ग न था तो भी समय बिताने के लिए रमेश ने उसके आगमन को परमलाभ समझा। उसने बड़े प्रेम के साथ कहा—"आइए, विपिन बाबू, आइए, बैठिए।"

विपिन बैठने के लिए तो आया न था। उसने ज़रा सिर हिलाकर कहा,—"वे आपको एकबार भीतर बुलाती हैं।"

रमेश—"कौन, कमला ?"

विपिन—"हाँ।"

रमेश को कुछ आश्चर्य हुआ। रमेश पहले ही निश्चय कर चुका है कि कमला को पत्नीभाव से ग्रहण करेगा। किन्तु इधर कई दिनों से उसका चित्त दुविधा में पड़ा था। अनेक संकल्प विकल्प के अनन्तर उसने कमला को गृहिणी पद से अभिषिक्त करके अपने मन को नाना प्रकार के भावी सुखों का प्रलोभन दिखाकर उत्तेजित भी किया था। परन्तु आज प्रथम दिन का मिलाप भारी समस्या हो पड़ा। कुछ दिन से कमला के प्रति जो उसका बर्ताव और ही तरह का हो गया था, उसे वह एकाएक कैसे तोड़ डालेगा। इसका कोई उपाय रमेश को न सूझता था। इसी कारण वह किराये का मकान लेने में भी विलम्ब कर रहा था।

कमला ने बुलाया है, यह सुन कर रमेश ने मन में सोचा, "ज़रूर उसे मुझसे कोई विशेष प्रयोजन होगा।" प्रयोजन की बात सोचकर भी उसके मन में धड़कन पैदा हुई। पायोनियर को मेज़ पर रखकर जब वह विपिन के पीछे पीछे भीतर गया; तब शरद् ऋतु के मध्याह्नकालिक अभिसार के आभास ने उसके चित्त को कुछ चञ्चल कर दिया।

विपिन कुछ दूर ही से घर दिखाकर चला गया। कमला ने समझा था, अन्नपूर्णा विपिन के पास गई होगी, इसलिए वह खुले दरवाज़े की चौकट पर बैठ कर सामने के बाग़ की ओर

देख रही थी। अन्नपूर्णा ने कमला के हृदय के भीतर बाहर एक अनुराग की तार बाँध दी थी। दोपहर की गरम हवा में बाहर पेड़ के पत्ते जैसे मर्मर शब्दों के साथ हिल रहे थे, वैसे ही कमला के हृदय के भीतर भी एक दीर्घ निश्वास की वायु बह कर अव्यक्त वेदना के साथ उसके कलेजे को कँपा रही थी।

ऐसे समय में रमेश ने घर के भीतर प्रवेश करके जब उसे पीछे से पुकारा, तब वह चौंक उठी। उसके हृत्पिण्ड के भीतर रक्त उछलने लगा। जो कमला इसके पहले कभी रमेश के पास जाने में संकोच न करती थी, वह आज सिर उठा कर रमेश की ओर देख न सकी। उसका सम्पूर्ण चेहरा लाल हो गया।

आज के भूषण-वस्त्र की सजावट से रमेश को कमला नये रूप में देख पड़ी। कमला के इस सौन्दर्य-विकाश ने रमेश को चकित और मुग्ध कर दिया। वह धीरे धीरे कमला के पास जाकर कुछ देर चुप खड़ा रह कर कोमल स्वर में बोला—"कमला, तुमने मुझको बुलाया है?"

कमला ने चकित हो अनावश्यक उत्तेजना के साथ कहा—"नहीं, नहीं, मैंने नहीं बुलाया है। मैं क्यों आपको बुलाऊँगी?"

रमेश—"बुलाने में दोष ही क्या है?"

कमला ने दुगुनी उत्तेजना के साथ कहा—"नहीं, मैं बुलाती तो आप से कहती।"

रमेश—"अच्छा, तुमने नहीं बुलाया है, मैं अपने मन से आया हूँ।" इससे क्या मुझे कोरा लौट जाना पड़ेगा?

कमला—"आप यहाँ आये हैं—यह घरवालों को मालूम होगा तो वे क्रोध करेंगे। आप जाइए! मैंने आपको नहीं बुलाया है।"

रमेश ने कमला का हाथ पकड़ कर कहा—"अच्छा, तुम मेरे साथ बाहर के कमरे में चलो, वहाँ कोई नहीं है, और न किसी के अभी आने की सम्भावना है।"

कमला ने रमेश का हाथ छुड़ा, काँपती हुई घरके भीतर घुसकर झट किवाड़ बन्द कर दी।"

रमेश ने तब समझा, कि यह सब इस घर की किसी स्त्री का प्रपञ्च है। यह समझ कर वह पुलकित होता हुआ बाहर कमरे में गया। फिर चौकी पर लेट कर पायनियर का विज्ञापन देखने लगा। विज्ञापन बार बार पढ़ने पर भी उसका कुछ अर्थ रमेश की समझ में न आया। उसका मन चिन्ता के झूले पर चढ़कर भाँति भाँति का झोंका खा रहा था। उसका हृदय-रूपी आकाश चिन्ता-रूपिणी घन घटा से भर गया था।

अन्नपूर्णा ने बाहर से कमला के घर की किवाड़ खटखटाई। किसी ने दर्वाज़ा न खोला। तब उसने किवाड़ की झिलमिली को सीधा करके बाहर से हाथ डाल कर चटख़नी खोल डाली। घर के भीतर प्रवेश करके देखा—"कमला चारपाई पर पड़ी दोनों हाथों से मुँह छिपा कर रो रही है।"

अन्नपूर्णा को बड़ा आश्चर्य हुआ। ऐसी कौन घटना घटी है, जिससे कमला इतनी बिलख रही है। वह दौड़कर उसके कान के पास मुँह रख कर स्नेह भरे स्वर में पूछने लगी—"कहो बहन, तुम्हें क्या हुआ है, क्यों इस तरह रो रही हो?"

कमला—"तुम उन्हें क्यों बुला लाईं? तुमने बड़ा अन्याय किया।"

कमला के मन में जो भाँति भाँति की वेदनायें लहरा रही थीं, उनका अन्नपूर्णा की समझ में आना कठिन था। कमला और रमेश के बीच जो किसी तरह का सच्चा व्यवधान रह सकता है, इसकी वह कल्पना भी कर नहीं सकती। उसने बड़े यत्न से कमला का मस्तक अपनी गोद में रख कर पूछा—"क्या रमेश बाबू ने तुमसे कोई सख़ बात कही है या तुम्हारे साथ कुछ अप्रिय व्यवहार किया है? या वे बुलाने गये इससे तो उन्हें क्रोध न हुआ? तुमने उनसे क्यों नहीं कहा कि यह सब आन्ना का काम है।"

कमला—"नहीं, नहीं, उन्होंने कुछ नहीं कहा है। पर तुम उन्हें क्यों बुला लाईं?"

अन्नपूर्णा उदास हो बोली—"अच्छा बहन, यह मुझसे अपराध हुआ, क्षमा करो।"

कमला झट उठकर अन्नपूर्णा के गले से लिपट गई और कहा—"बहन, तुम देर मत करो, जाओ, विलम्ब होने से विपिन बाबू नाराज़ होंगे।"

सूने घर में रमेश बाबू ने पायनियर पर बड़ी देर तक वृथा दृष्टि दौड़ाकर एकबार ज़ोर से उसे दूर फेंक दिया। इसके अनन्तर वे उठकर बैठे और बोले—"नहीं, अब विलम्ब करना ठीक नहीं। कल ही कलकत्ते जाकर सब ठीक ठाक कर आता हूँ। कमला को पत्नीभाव से ग्रहण करने में जितना विलम्ब हो रहा है, उतना ही मेरा अन्याय बढ़ रहा है।"

रमेश की कर्तव्य-बुद्धि ने आज एकाएक पूर्ण रूप से जागकर सब संशयों को दूर कर दिया।

तेतीसवाँ परिच्छेद

रमेश ने निश्चय किया था कि मैं वह कलकत्ते में अपना काम करके शीघ्र लौट आऊँगा और कोलूटोला स्ट्रीट की पासवाली गली में भी न जाऊँगा रमेश दर्ज़ीपाड़ा वाले मकान में आकर रहा। दिन में वह बहुत कम समय अपने ज़रूरी कामों में बिताता था। वह और दफ़े कलकत्ते आकर जिन सब लोगों से भेट करता था, अबको बार वह उनसे भेट न कर सका। रास्ते में कहीं किसी परिचित व्यक्ति से भेट न हो, इस भय से वह बराबर चौकन्ना रहता था।

किन्तु कलकत्ता आते ही रमेश का ख़याल बदल गया। उसके पूर्व कल्पित सिद्धान्त में हेर फेर होने लगा। जो कमला उसकी आँखों में बस गई थी, जिसने अपने नवीन भूषण-वसन की सजावट और किशोर अवस्था की मोहिनी छवि से उसके मनको लुभा लिया था, कलकत्ते आकर उसकी ओर से रमेश का चित्त बहुत कुछ उचट गया। रमेश ने दर्ज़ीपाड़ा के मकान में कमला को कल्पनाक्षेत्र में लाकर अनुराग की दृष्टि से देखने की चेष्टा की। किन्तु यहाँ उसका चित्त ऐसा करने को राज़ी न हुआ। आज कमला उसके समीप एक अभद्र अशिक्षिता बालिका की भाँति प्रतिभासित हुई।

भारी वस्तु को हटाने के लिए जितने बल का प्रयोग किया जाय उतना ही बल घटता है। रमेश नलिनी को मन से

हटाने के लिए जितना ज़ोर मारने लगा उतनी ही उसकी मानसिक शक्ति घटने लगी। "नलिनी को किसी तरह मनके भीतर प्रवेश करने न दूँगा," यह प्रतिज्ञा करते करते नलिनी की बात दिन रात रमेश के मन में आघात पहुँचा रही थी। भूलने का कठिन संकल्प ही स्मरण रखने का प्रबल कारण हो गया।

यदि रमेश चाहता तो बहुत शीघ्र कलकत्ते का काम करके गाज़ीपुर लौट आता। किन्तु वहाँ जाते ही उसका काम बहुत बढ़ गया। आख़िर वह भी पार लग गया।

कल रमेश किसी काम से पहले इलाहाबाद होकर तब गाज़ीपुर जायगा। इतने दिन से वह विचारा धैर्य धारण किये चला आता है। क्या उसका कुछ पुरस्कार उसे न मिलना चाहिए? विदा होने के पूर्व चुपचाप एकबार कोलूटोले की ख़बर ले आवे तो क्या हर्ज़ है?

आज कोलूटोला महल्ले की उसी गली से होकर जाने की बात ठीक करके वह एक चिट्ठी लिखने बैठा। उसमें कमला के साथ अपना सम्बन्ध विस्तारपूर्वक लिखा। इसबार गाज़ीपुर लौटकर वह अगत्या हतभागिनी कमला को पत्नी-भाव से ग्रहण करेगा।" यह भी सूचित कर दिया। इस प्रकार उसने नलिनी से अपना चिर विच्छेद होने के पूर्व ही को सारी सच्ची घटना जता कर इस पत्र द्वारा उसने विदा माँगी।

चिट्ठी को लिफ़ाफे में बन्द करके उसके ऊपर किसी का नाम न लिखा। चिट्ठी में भी उसने न किसी का नाम लेकर सम्बोधन किया, न नीचे अपना नाम लिखा।

घनानन्द बाबू के नौकर सभी रमेश से राज़ी रहते थे। कारण यह कि रमेश नलिनी के सभी छोटे बड़े आत्मीय जनों को समता भरी दृष्टि से देखता था। कभी कभी वह किसी त्योहार पर नलिनी के नौकरों को इनाम कह कर कोई कपड़ा या कुछ नक़द दे देता था। रमेश ने निश्चय किया था, साँझ हो जाने पर वह कोलूटोला वाले मकान में जाकर एकबार दूर से नलिनी को देख आवेगा और किसी नौकर के द्वारा वह चिट्ठी चुपचाप नलिनी के पास भेज कर सदा के लिए पुराने प्रेम-बन्धन को तोड़ कर चला जायगा।

रमेश ने चिराग़ बत्ती के समय चिट्ठी हाथ में ले थरथराते पैर और काँपते हृदय से उस गली के भीतर प्रवेश किया। फाटक के पास आकर देखा, दरवाज़ा बन्द है। ऊपर नज़र उठाकर देखा, झरोखे मोखे सब बन्द हैं। मकान सूना पड़ा है। सर्वत्र अँधेरा छाया है।

तथापि रमेश ने बाहर से किवाड़ पर धक्का दिया। दो चार बार ठोकर देने पर भीतर से एक दरबान दरवाज़ा खोल कर बाहर आया। रमेश ने पूछा—"कौन, रामधन तो नहीं?"

दरबान—"हाँ बाबू, मैं रामधन ही हूँ।"

रमेश—"बाबू कहाँ गये हैं?"

दरबान—"लल्ली को लेकर पश्चिम हवा खाने गये हैं।"

रमेश—"कहाँ गये हैं?"

दरबान—"यह मैं नहीं कह सकता?"

रमेश—"और साथ में कौन गया है?"

दरबान—"कमलनयन बाबू गये हैं ?"

रमेश—"ये कमलनयन बाबू कौन हैं ?"

दरबान—"यह मुझे मालूम नहीं।"

रमेश ने प्रश्न करके जाना, कमलनयन एक युवा पुरुष है, कुछ दिन से इनके घर आने जाने लगा है। यद्यपि रमेश नलिनी का परित्याग करने ही चला था तथापि कमलनयन पर उसको एक स्वाभाविक ईर्ष्या उत्पन्न हुई।

रमेश ने पूछा—"तुम्हारी लक्ष्मी का स्वास्थ्य कैसा है ?"

दरबान—"स्वास्थ्य—हाँ, स्वास्थ्य तो उसका अच्छा है।"

रामधन ने समझा था, रमेश बाबू इस शुभ संवाद से प्रसन्न और चिन्तारहित होंगे। क्या जानें, रामधन ने यह भूल समझी हो।

रमेश—"मैं एकबार ऊपर जाऊँगा।"

रामधन हाथ में चिराग़ ले रमेश को ऊपर ले गया। रमेश भूत की तरह हर एक कमरे में एकबार घूम आया।

पश्चात् एक कुरसी पर बैठा। घर में जो वस्तु जहाँ थी वह वहीं थी। बीच में कमलनयन कहाँ से आये। संसार में कोइ जगह किसी के अभाव में अधिक दिन ख़ाली नहीं रह सकती। जिस झरोखे पर रमेश एक दिन नलिनी के पास खड़े होकर सावन महीने के सूर्यास्त-समय की शोभा देखते थे, वह

स्थान क्या ख़ाली रह सकेगा। अवश्य ही कोई न कोई नलिनी के साथ उस जगह को सुशोभित करेहो गा। ग्लानि से रमेश का हृदय फटने लगा।

दूसरे दिन रमेश इलाहाबाद न आकर सीधे गाज़ीपुर लौट गया।

चौंतीसवाँ परिच्छेद

रमेश कलकत्ते में प्रायः एक मास रह कर गाज़ीपुर आया। यह एक मास कमला के लिए कुछ कम समय न था। वह नहीं जानती थी कि उसके भाग्य में क्या होनेवाला है। उसका हृदय भविष्य परिणाम की चिन्ता से चूर चूर होने लगा। उषा का प्रकाश देखते ही देखते जैसे प्रातःकाल की धूप निकल आती है। कमला का स्त्री स्वभाव भी वैसे ही थोड़े समय में सोते से जाग उठा। अन्नपूर्णा के साथ यदि उसका घनिष्ठ परिचय न होता, यदि अन्नपूर्णा का प्रेम-रहस्य और वियोग-व्यथा उसके हृदय पर प्रतिफलित न होती तो न मालूम कितने दिनों में वह इन बातों का मर्म जान सकती।

इधर रमेश के आने में विलम्ब देख कर अन्नपूर्णा के अनुरोध से चक्रवर्ती ने कमला और रमेश के रहने के लिए शहर के बाहर गङ्गा के किनारे किराये पर एक मकान ठीक कर रक्खा। थोड़ा बहुत असबाब भी इकट्ठा करके घर सजाने के लिए रख छोड़ा और घर के आवश्यक काम-धन्धा करने के लिए दास-दासी का भी प्रबन्ध कर रक्खा।

अनेक दिन विलम्ब करके रमेश जब गाज़ीपुर आया तब चक्रवर्ती के घर में रहने का उसे कोई बहाना न रहा। इतने दिन बाद कमला ने अपने स्वतन्त्र घर में प्रवेश किया। मकान के चारों ओर बाग़ लगाने योग्य ज़मीन थी। दो बगली

बड़े बड़े सीसम के पेड़ों के भीतर से होकर एक छाँहदार सड़क गई है। शीतकाल में गङ्गा के दूर तक हट जाने के कारण गङ्गा की धार और किनारे के बीच बालू का एक बड़ा मैदान सा हो गया है। उस मैदान में जगह जगह किसान लोगों ने गेहूँ का खेत किया है और जहाँ तहाँ तरबूज़े और ख़रबूज़े की लता लगा दी है। घर के दक्खिन सिवाने गङ्गा के किनारे की तरफ़ अशोक का एक बहुत बड़ा पेड़ है। उसके नीचे पत्थर का चबूतरा बँधा है।

बहुत दिनों से मकान भाड़े पर न रहने के कारण मकान और उसके हाते की ज़मीन गिरी दशा में थी। बाग़ में कोई पेड़ पौधा हरा न था। घर भी कूड़े करकटों से भरा था। कमला को यह सब देख कर बुरा न लगा। गृहिणी-पद-लाभ के आनन्द में उसे सब वस्तुएँ सुन्दर दीखने लगीं। कौन घर किस व्यवहार में आवेगा, बाग़ की ज़मीन में कहाँ कौन पेड़ पौधे लगाये जायँगे, यह सब उसने मन ही मन ठीक कर लिया। चक्रवर्ती के साथ सलाह करके कमला ने सब ज़मीन आबाद करने की व्यवस्था की। स्वयं खड़ी होकर उसने रसोई घर का चूल्हा बनवाया और उसके पार्श्ववर्ती भाण्डार घर में जहाँ जो परिवर्तन करना ज़रूरी था, सब ठीक कर लिया। घर के कूड़े करकट को फेंकवा कर सब को झाड़ पोंछ कर साफ़ करवाया, तिस पीछे पीली मिट्टी और गाय के गोबर से लिपवा दिया। जिस जगह को देखने से पहले जी मचलाता था वही अब ऐसी सुहावनी हो गई कि मन को लुभाने लगी। कमला का चित्त घर-द्वार की सफ़ाई और फुलवाड़ी की सजावट पर बस गया।

गृहकार्य में रमणी का जी जितना लगता है, उतना और किसी काम में नहीं। रमेश ने कमला को आज उसी काम में जी से लगा देखा। उसका प्रसन्न मुँह, उसकी गृहकार्यदक्षता देख रमेश के मन में एक नवीन आश्चर्य के साथ विशेष हर्ष उत्पन्न हुआ।

इतने दिन रमेश ने कमला को अपने घर में स्वच्छन्दता-पूर्वक न देखा था। आज उसे जब घर की अधिकारिणी के रूप में देखा तब उसके सौन्दर्य के साथ एक महत्त्व का भी चिह्न पाया।

कमला के पास आकर रमेश ने कहा—"कमला, तुम क्या कर रही हो, थक जाओगी।"

कमला थोड़ी देर के लिए अपने काम से हाथ खींचकर रमेश की ओर सिर उठाकर मीठी हँसी हँसकर बोली—"नहीं, मैं नहीं थकूँगी।"

रमेश जो उसकी ख़बर लेने आया, इसकी वह कृतज्ञता स्वीकार कर फिर अपने काम में लग गई।

रमेश ने बहाना करके फिर उसके पास जाकर पूछा—"कमला, तुमने कुछ खाया है, या अभी तक भूखी हो?"

कमला—"खाया है नहीं तो क्या अभी तक भूखी हूँ?"

रमेश यद्यपि यह जानता था, तथापि इस प्रश्न के व्याज से वह कमला का बिना आदर किये चुप नहीं रह सकता था। कमला भी रमेश के इस अनावश्यक प्रश्न से कुछ कम प्रसन्न न होती थी।

रमेश ने फिर उसका मधुर भाषण सुनने की इच्छा से कहा—"तुम अपने हाथ से कितना काम करोगी? मुझे भी शामिल कर लो।"

कार्यकुशल लोगों में यह एक भारी दोष होता है कि वे दूसरे की कार्यकारिता पर निर्भर नहीं रहते, उन्हें इस बात का भय लगा रहता है, कि जो काम वे अपने हाथ से करेंगे वह दूसरा कोई ठीक उसी तरह कर सकेगा या नहीं। कमला ने हँसकर कहा—"यह काम आप लोगों के करने का नहीं है।"

रमेश—"पुरुष बड़े सहिष्णु होते हैं, इसी से पुरुष जाति पर जो तुम सबों की ऐसी अनादर बुद्धि रहती है, उसे वे चुपचाप सह लेते हैं। अगर मैं तुम सबों की तरह स्त्री होता तो तुमसे ख़ूब लड़ता झगड़ता। चक्रवर्ती से तो काम लेने में तुम नहीं चूकतीं। क्या मैं इतना अकर्म्मण्य हूँ जो तुम्हारा कोई काम नहीं कर सकता?"

कमला—"यह आप जानिए! किन्तु रसोई घर का झाड़ना आपका काम नहीं। मैं आप से ऐसे कामों में सहायता नहीं चाहती। आप यहाँ से हट जाइए, यहाँ धूल बहुत उड़ती है।"

रमेश ने कमला के साथ बात बढ़ाने की इच्छा से कहा—"धूल तो छोटे बड़े का विचार नहीं करती। वह जिस आँख से मुझको देखती है, उसी आँख से तुमको भी देखती है।"

कमला—"मेरा काम है, इसलिए मैं धूल में रहूँगी, आप क्यों न में रहिएगा। यह कष्ट मुझी को सहने दीजिए।"

रमेश ने नौकरों के कान बचाकर धीमे स्वर में कहा—"काम रहे चाहे न रहे, तुम जो कष्ट सहोगी, उसका अंश मैं अवश्य लूँगा।"

कमला का मुँह लाल हो गया। उसने रमेश की बात का कोई उत्तर न दे, वहाँ से ज़रा खिसक कर उमेश से कहा—"एक घड़ा पानी इस जगह क्यों नहीं डालता? देखता नहीं, यहाँ कितनी धूल जमी है।" यह कहकर आप चूने से दीवाल पोतने लगी।

रमेश ने कमला को दीवाल पोतते देख घबड़ाकर कहा—"ओफ़! कमला, यह क्या कर रही हो?"

पीछे से किसी ने कहा—"क्यों रमेश बाबू! अन्याय का काम क्या हो रहा है? यदि घर पोतने का काम इतना छोटा जान पड़ता है तो नौकर के हाथ से ही चूना क्यों नहीं पुतवाते? मैं मूर्ख हूँ। अगर मुझसे पूछिए तो मैं यही कहूँगा, बहूजी के हाथ में यह पोतन मूर्तिमान् सत्त्वगुण की शोभा दे रहा है।' (कमला की ओर देखकर) तुम्हारे बग़ीचे का जङ्गल मैंने क़रीब क़रीब साफ़ करा दिया। उसमें अब कहाँ क्या लगाओगी, वह मुझे एकबार दिखा देना होगा।"

कमला—"चक्रवर्तीजी, आ कृपा करके कुछ देर ठहर जाइए। मेरा यह घर अब पुता जाता है।"

इतना कहकर कमला घर को अच्छी तरह पोतकर कमर में लपेटे हुए आँचल को कन्धे पर डाल सिर पर कपड़ा दे बाहर आई। फुलवाड़ी में कहाँ कौन पेड़ पौधे लगाने चाहिएँ, इस विषय को लेकर वह चक्रवर्ती के साथ विचार करने लगी।

इन्हीं सब बातों में दिन समाप्त हो गया। अब भी दो एक घरका परिष्कार कुछ कुछ बाक़ी ही रहा। मकान बहुत दिनों से सूना पड़ा था और बन्द था, इससे दो चार दिन खिड़की दर-वाज़े खुले न रखने से वह रहने योग्य न होगा।

यह सोच कर कमला ने साँझ होने पर चक्रवर्ती के घर में ही रहने का निश्चय किया। इससे रमेश का मन कुछ दुखी हुआ। आज दिन भर वह यही सोचता था कि कब साँझ होगी, घर में चिराग़ बत्ती जलाऊँगा और कमला के सलज्ज मृदु मुस्कुराहट के आगे अपना हृदय सम्पूर्ण रूप से निवेदन कर दूँगा। किन्तु नये घर के वास में दो चार दिन के विलम्ब की सम्भावना देखकर रमेश दूसरे दिन अपने वकालत-सम्बन्धी काम से इलाहाबाद चला गया।

पैंतीसवाँ परिच्छेद

आज कमला के नये मकान में अन्नपूर्णा को सिद्धान्न भोजन का निमन्त्रण था। विपिन-विहारी बाबू भोजन के उपरान्त जब आफ़िस गये तब अन्नपूर्णा कमला के घर गई। कमला के अनुरोध से चक्रवर्ती उस दिन स्कूल न गये। अन्नपूर्णा ने अशोक के पेड़ तले रसोई चढ़ा दी। चक्रवर्ती तरकारी बनाने बैठे। उमेश यथासाध्य उन दोनों की सेवा-टहल करने लगा।

रसोई तैयार हो जाने पर दोनों ने तृप्तिपूर्वक भोजन किया। चक्रवर्ती पान-इलाइची खाकर घर के भीतर जाकर सो रहे। इधर दोनों सखियाँ अशोक की छाँह में बैठकर गप्प करने लगीं। इस गप्प के साथ साथ कमला के हृदय का भाव बदलने लगा। उसकी दृष्टि में यह सृष्टि नई सी मालूम होने लगी।

तीन बजते बजते अन्नपूर्णा घबरा उठी। उसके पति आफ़िस से आवेंगे। कमला ने उसे जाने को उद्यत देखकर कहा—"क्या एक दिन भी तुम्हारा नियम भङ्ग नहीं हो सकता?"

अन्नपूर्णा ने कुछ उत्तर न दिया, मुस्कुरा कर कमला का चिबुक पकड़ कर धीरे से हिला दिया और घरके भीतर जाकर पिता को जगा दिया और कहा, "मैं घर जाती हूँ।"

चक्रवर्ती ने कमला से कहा—"बेटी! तुम भी चलो।"

कमला—"नहीं, अभी यहाँ कुछ काम करना बाक़ी रह गया है। उसे पूरा करके मैं चिराग़-बत्ती के समय आऊँगी।"

चक्रवर्ती अपने पुराने नौकर और उमेश को कमला के पास रखकर आप अन्नपूर्णा को घर पहुँचाने गये। वहाँ उन्हें कोई काम था। कमला से कह गये कि "मेरे लौटने में अधिक बिलम्ब न होगा।"

कमला अपने घर के शेष कार्य को सम्पन्न कर चुकी। तब भी थोड़ा दिन था। वह हाथ पैर धो, बदन पर एक कपड़ा डाल अशोक के पेड़ के नीचे आकर बैठी। गङ्गा में बड़े बड़े जहाज़ इधर उधर जा रहे थे। उसकी शोभा देखने लगी। देखते ही देखते सूर्यास्त हो गया।

ऐसे समय में उमेश एक बहाना करके कमला के पास आ खड़ा हुआ। कहा—"माँ, बड़ी देर से आपने पान नहीं खाया। चक्रवर्ती के घर से आते समय मैं पान लेता आया था।" यह कहकर उसने एक कागज़ में लपेटा हुआ पान का बीड़ा कमला के हाथ में दिया।

कमला को तब चेत हुआ। साँझ हो गई। वह झट उठ खड़ी हुई। उमेश ने कहा—"चक्रवर्ती महाशय ने गाड़ी भेज दी है।"

कमला गाड़ी में बैठने के पूर्व एकबार घर देखने के लिए फिर भीतर गई।

एक घर में जाड़े के समय आग जलाने के लिए विलायती ढंगकी बनी एक अँगीठी थी। उसके पास ही एक मेज़ पर लम्प जल रहा था। कमला उसी मेज़ के ऊपर एक मुड़े हुए कागज़ पर हुआ पान रखकर अलमारी में से एक किताब लाने जाती थी।

उसी समय एकाएक उसकी नज़र मोड़े हुए काग़ज़ पर रमेश के हाथ के लिखे अपने नाम पर पड़ी।

कमला ने उमेश से पूछा—"यह काग़ज़ तूने कहाँ पाया?"

उमेश—"बाबू के घर के कोने में पड़ा था, मैंने झाड़ू देते समय उठा लिया।"

कमला उस काग़ज़ को खोल कर पढ़ने लगी।

रमेश ने कलकत्ते में नलिनी के पास भेजने के लिए जो सविस्तार चिट्ठी लिखी थी, यह वही चिट्ठी थी। रमेश के हाथ से वह चिट्ठी कब कहाँ गिर गई, इसकी कुछ ख़बर उसे न थी।

कमला ने उसको पढ़ लिया। उमेश ने कहा—"आप इस तरह चुप होकर खड़ी क्यों हो रहीं? रात हुई जाती है।"

कमला कुछ न बोली, चित्रवत् खड़ी रही। कमला के मुँह की ओर देखकर उमेश डर गया। कहा, घर चलो रात हो गई!"

कुछ देर के बाद चक्रवर्ती के नौकर ने आकर कहा—"बहूजी! गाड़ी बहुत देर से खड़ी है। अब चलिए।"

छत्तीसवाँ परिच्छेद

अन्नपूर्णा ने पूछा—"कहो बहन, क्या आज तुम्हारी तबीयत अच्छी नहीं है ? क्या सिर पिराता है ?"

कमला—"नहीं, चक्रवर्ती जी को नहीं देखती, वे कहाँ गये हैं ?"

अन्नपूर्णा—"स्कूल में बड़े दिन की तातील है। माँने जीजी को देखने के लिए उनको इलाहाबाद भेजा है। कुछ दिन से वह बीमार है।"

कमला—"वे कब लौटेंगे ?"

अन्नपूर्णा—"उनके लौटने में कम से कम एक सप्ताह लगेगा। तुम घर की सजावट के पीछे दिन भर प्रमाण से अधिक परिश्रम करती हो। आज तुमको बहुत अनमनो देखती हूँ। जल्दी कुछ खाकर सो रहो।"

अगर कमला अन्नपूर्णा से अपने मनकी सब बात खोलकर कह देती तो उसके जी का बोझ कुछ हलका होता, परन्तु यह कहने की बात न थी। "जिसको मैं इतने दिन अपना स्वामी समझती थी वह मेरा स्वामी नहीं है।" यह बात दूसरे से कही जाय तो कही भी जा सकती थी, परन्तु अन्नपूर्णा से किसी तरह कहने की बात न थी।

कमला सोने के घर में आकर किवाड़ बन्द करके फिर एकबार चिराग़ की रोशनी में रमेश की चिट्ठी पढ़ने लगी।

चिट्ठी जिसके पास भेजने को लिखी गई है। चिट्ठी में न उसका नाम है, न ठिकाना ही पता है। किन्तु वह कोई स्त्री है, रमेश के साथ उसके व्याह का प्रस्ताव हुआ था, परन्तु कमला ही के कारण वह प्रस्ताव तोड़ना पड़ा, यह चिट्ठी से साफ़ ज़ाहिर होता था। रमेश उसको हृदय से चाहता था, किन्तु दुर्दैव दोष से कमला कहाँ से आकर उसके सिर सवार हुई जिससे वह उस अनाथा के प्रति दया करके उस प्रेमबन्धन को सदा के लिए तोड़ने को उद्यत हुआ।" यह बात भी चिट्ठी में लिखी थी।

नौका जलमग्न होने के अनन्तर उस नदी की रेत में, जो उसकी रमेश से पहली भेंट हुई थी, तब से लेकर आज तक जो जो घटनायें हुईं थीं, सब एक एक कर कमला को स्मरण हो आईं। जो सब बात गुप्त थीं सो सब प्रकट हो गईं।

रमेश जब बराबर उसको दूसरे की स्त्री जानता है और मन ही मन चिन्तित हो रहा है कि उसे लेकर क्या करूँगा, तब जो कमला उसे अपना पति जानकर निःसंकोच हो उसके साथ रह कर सदा के लिए घर आश्रम चलाने को तैयार है, इसकी लज्जा बर्छी की भाँति कमला के हृदय को बेधने लगी। दिन दिन की विचित्र घटना याद करके वह मारे लज्जा के अधमरी सी हो गई। यह लज्जा उसके जीवन के साथ इस तरह मिल गई है जो कभी अलग होने की नहीं। कमला अपनी अवस्था की बात सोचकर स्थिर न रह सकी, एकाएक अधीर हो उठी। वह खिड़की खोलकर बाग़ के भीतर एक पेड़ के नीचे जा बैठी। एक तो जाड़े की रात, दूसरे सर्वत्र अन्धकार छाया था। केवल आकाश में तारे चमक रहे थे।

कमला पाषाण-मूर्ति की भाँति अकेली बैठ कर न मालूम मन ही मन क्या सोचने लगी । इस तरह वह कितनी देर तक बैठी रही, यह उसे मालूम न हुआ। किन्तु जब कड़े शीत ने उसके हृत्पिण्ड को कँपा दिया, जब उसका सारा शरीर थर थर काँपने लगा, गहरी रात में अँधेरे पक्ष के चन्द्रोदय ने जब बाग़ के एक प्रान्त के अन्धकार को कुछ कुछ दूर किया तब कमला ने धीरे धीरे उठ कर घरके भीतर जाकर खिड़की बन्द कर दी ।

सबेरे कमला ने आँख खोल कर देखा, अन्नपूर्णा उसकी चारपाई के पास खड़ी है। दिन बहुत चढ़ गया जान कर कमला लज्जित हो झट उठ बैठी ।

अन्नपूर्णा ने कहा—"नहीं बहन, तुम अभी मत उठो, कुछ देर और सोओ । सचमुच ही तुम्हारा जी अच्छा नहीं है। तुम्हारा मुँह एकदम सूख गया है। मालूम होता है, जैसे कितने दिन की बीमार हो। क्या है ? मुझसे कहती क्यों नहीं ?" यह कह कर अन्नपूर्णा उसके गले से लिपट गई ।

कमला का हृदय फटने लगा। उसकी आँखों के आँसू अब रोके न रुके। अन्नपूर्णा के कन्धे पर मुँह रख कर वह रोने लगी ।

अन्नपूर्णा ने उससे कुछ न कह कर दोनों बाहों से पकड़ कर उसे छाती से लगा लिया ।

कुछही देर बाद कमला अन्नपूर्णा का बाहु-बन्धन छुड़ा कर खड़ी हुई । आँखें पोंछ कर ज़ोर से हँसने लगी । अन्नपूर्णा ने कहा—"ठहरो, ठहरो, अब बहुत मत हँसो। बहुत स्त्रियों को देखा

है, पर तुम्हारी जैसी खेलवाड़ औरत मैंने नहीं देखी। तुम समझती हो, कि मैं तुम्हारा हाल कुछ जानती ही नहीं। मुझे वैसा बेवकूफ़ मत समझो, कहो तो मैं अभी तुम्हारे मन की सब बात कह दूँ। रमेश बाबू जबसे इलाहाबाद गये हैं तबसे उन्होंने तुमको एक भी चिट्ठी नहीं लिखी, इसीका तुम्हें रंज है। तुम अभिमानिनी हो। तुम्हें समझना चाहिए, वे वहाँ किसी काम से गये हैं। दो दिन बाद ही आवेंगे, इसमें क्या है। अगर उनके आने में दो दिन की देरी हो जाय तो क्या उन पर इतना क्रोध करना उचित है? "छीः! सुनो बहन, तुमको आज इतना उपदेश देती हूँ। अगर मुझ पर यह आफ़त आती तो मैं भी ठीक ऐसा ही करती। "परोपदेशे पाण्डित्यं" की बात चरितार्थ होती है। ऐसी झूठी झूठी बातों में स्त्रियाँ तुरन्त रो देती हैं, परन्तु रुलाई बन्द हो जाने पर फिर हँसते देर नहीं होती। उस क्रोध का भाव एकदम मन से मिट जाता है।" यह कह कर अन्नपूर्णा ने कमला का हाथ पकड़ कर पूछा—"सच कहो, आज तुमने मन में यही निश्चय किया है न कि रमेश बाबू आवेंगे तो उन्हें कभी माफ़ न करूँगी। कहो, यही बात है न?"

कमला—"हाँ, यही बात है।"

अन्नपूर्णा ने कमला के गाल पर एक मुलायम तमाचा मार कर कहा—"पगली! इसलिए इतना मान ठाने बैठी हो? अच्छा, देखा जायगा। अभी उठकर मुँह हाथ धो।"

अन्नपूर्णा ने दूसरे दिन अपने बाप को चिट्ठी लिखी। उसमें लिखा, "कमला रमेश बाबू के हाथ की कोई चिट्ठी न पाकर अत्यन्त चिन्तित है। एक तो वह विदेश आई है। उस पर रमेश बाबू उसे छोड़कर जहाँ तहाँ चले जाते हैं, चिट्ठी पत्री भी नहीं

लिखते। इससे उसे कितना कष्ट होता है यह लिखा नहीं जा सकता। क्या इलाहाबाद का काम उनका ख़तम न होगा? काम सभी को रहता है। तो क्या इसीसे कोई अपने इष्ट-बन्धु को दो अक्षर लिखने का श्रम स्वीकार न करेगा?"

चक्रवर्ती ने रमेश से मिल कर अपनी कन्या के पत्र का कुछ विशेष अंश सुना कर उन्हें ख़ूब फटकारा।

कमला की ओर रमेश के मनका ज़्यादा झुकाव था, इसमें सन्देह नहीं, किन्तु इस झुकाव से उसका मन और भी दुविधा के झूले में झूल रहा था।

इसी दुविधा में पड़ कर रमेश किसी तरह इलाहाबाद से लौटना न चाहता था। इसी अवसर में उसने चक्रवर्ती के मुँह से अन्नपूर्णा की चिट्ठी सुनी।

अन्नपूर्णा की चिट्ठी से रमेश को अच्छी तरह मालूम हो गया कि कमला रमेश के लिए विशेष उत्कण्ठित है। वह केवल लज्जा से स्वयं कुछ नहीं लिख सकती।

अब रमेश के हृदय से क्रमशः द्विधाभाव घटने लगा। इतने दिन रमेश के मन में सन्देह था कि कमला शायद उसे हृदय से नहीं चाहती है पर अब उसके मन से यह सन्देह जाता रहा। कमला भी उसे चाहती है। विधाता ने नदी के सूने तट में सिर्फ़ उन दोनों को मिला ही नहीं दिया बल्कि उन दोनों का हृदय भी एक कर दिया।

रमेश ने क्षण मात्र भी विलम्ब न करके कमला को एक पत्र लिखा—

"प्रियतमे !

"ऊपर जिस शब्द से मैंने सम्बोधन किया है, उसे यह मत समझो कि चिट्ठी में लिखने का यह एक प्रचलित व्यवहार मात्र है। अगर आज मैं तुमको संसार में सबकी अपेक्षा प्रिय नहीं जानता तो कभी तुम्हारे लिए "प्रियतमा" शब्द का प्रयोग नहीं करता। यदि तुम्हारे मन में कभी मुझ पर किसी तरह का सन्देह उत्पन्न हुआ हो, यदि तुम्हारे कोमल हृदय में मैंने कभी कुछ चोट पहुँचाई हो, तो आज जो मैंने शुद्धभाव से तुमको "प्रियतमा" कह कर पुकारा है, इससे तुम्हें चाहिए कि आज से तुम अपने मन के सारे सन्देह और यन्त्रणाओं को धो बहाओ। इससे बढ़कर तुम्हें विश्वास दिलाने की और कौन बात लिखूँ। इसके पूर्व तुम्हारे साथ मैंने सचमुच ऐसे अनेक आचरण किये हैं, जिनसे तुम्हें कष्ट हुआ होगा, इसके लिए यदि तुम मन ही मन मेरे विरुद्ध कुछ विचार कर रही हो तो मैं कुछ भी उसका प्रतिवाद न करूँगा। मैं इतना ही कहूँगा कि "तुम मेरी प्रियतमा हो, और तुमसे बढ़कर मेरा कोई प्यारा नहीं है।" इससे भी यदि मेरे समस्त अपराध और विरुद्ध आचरण का पूरा जवाब न हो तो और किसी तरह होना सम्भव नहीं।

"आज तुमको "प्रियतमा" कहकर मैंने तुम्हारे सब संशयों को दूर कर दिया। इस सम्बोधन से हम सब के प्रेम का बीज अङ्कुरित हो चला। तुम से मेरी यही बिनती है कि तुम मेरी प्रियतमा हो। इसमें अब कुछ सन्देह न करो। मेरे कथन पर पूरा विश्वास करो। अगर तुम मेरी इस बात को मन से क़बूल कर लोगी तो मुझे किसी संशयात्मक विषय पर तुमसे कुछ पूँछने का प्रयोजन न रहेगा।

"इसके अनन्तर तुम्हारा प्रेम मुझपर है या नहीं, यह पूछने का मुझे साहस नहीं होता। यह मैं पूछूँगा भी नहीं। इस मूक प्रश्न का उचित उत्तर एक न एक दिन तुम्हारे हृदय के भीतर से मेरे हृदय में गुप्तरीति से आही जायगा, इसमें सन्देह नहीं। यह मैं अपने प्रेम के ज़ोर से कहता हूँ। मैं अपने प्रेम बल पर अहंकार नहीं करता किन्तु जिसके लिए मैं हृदय से यत्न करूँगा, वह क्यों न सिद्ध होगा?

"मैं भली भाँति समझता हूँ कि मैं जो कुछ लिख रहा हूँ वह स्वाभाविक सा नहीं जान पड़ता, बनावटी सा जान पड़ता है। जी चाहता है इस चिट्ठी को फाड़कर फेंक डालूँ। किन्तु जो पत्र मेरे पसन्द लायक होगा वह अभी मुझसे लिखा जाना संभव नहीं। क्योंकि पत्र दो व्यक्तियों की वस्तु है, जब एक ओर से पत्र लिखा जाता है तब उसमें सब बातें लिखते नहीं बनतीं। जिस दिन मेरे और तुम्हारे हृदय में कुछ अन्तर न रहेगा, उस दिन जैसी चाहूँगा चिट्ठी लिख सकूँगा। जब आमने सामने का दरवाज़ा खुला रहता है तब बे रोक हवा आती जाती है। प्यारी कमला, मैं नहीं कह सकता, कब तुम अपने हृदय को आइने की तरह मेरे आगे रख दोगी।

"इन सब बातों का विचार क्रमशः हो होगा। घबराने की ज़रूरत नहीं। जिस दिन तुम यह चिट्ठी पाओगी, उसके दूसरे दिन सबेरे ही मैं गाज़ीपुर पहुँच जाऊँगा। तुमसे मेरा यही अनुरोध है कि गाज़ीपुर आते ही मैं तुमको नये मकान में देख सकूँ। बहुत दिन हम सब मारेमारे फिरे। अब मैं अधीर हो गया हूँ। मैं अब नये घर में प्रवेश कर प्रियतमा को गृहलक्ष्मी के स्वरूप में देखने की आशा करता हूँ। मैं तुम्हारी प्रेमपगी

दृष्टि से अपने चिरसन्तप्त हृदय को शीतल करना चाहता हूँ। शायद तुम्हें वह दिन याद होगा? उस चाँदनी रात में, उस नदी के किनारे, उस निर्जन बालुकामयी भूमि पर जो तुमसे मेरी प्रथमबार भेट हुई थी। वहाँ न छत थी, न दीवाल थी, न भाई बन्धु कुल परिवार का कोई आदमी था। वह घर के बिलकुल ही बाहर था। वह अब स्वप्न सा जान पड़ता है। वह असत्यवत् प्रतीत होता है। इसीलिए एक दिन सवेरे के प्रकाश में, घर के भीतर उस मिलन को सम्पूर्ण रूप से सच कर लेने का अभिलाष है। मैं एकबार अपने घर के द्वार पर तुम्हारी सरल सहास्य मूर्ति को देखकर चिरकाल के लिए उसे अपने हृदय पट पर अङ्कित कर लूँगा। इसके निमित्त मेरे मन में बड़ी लालसा लगी है। मैं तुम्हारे हृदय-मन्दिर का अतिथि हूँ, मुझे विमुख न करना।

प्रेमाभिलाषी,

रमेश

सैंतीसवाँ परिच्छेद

अन्नपूर्णा ने कमला को उदास देख उसका जी बहलाने की इच्छा से कहा—"आज तुम अपने नये बँगले में न जाओगी ?"

कमला—"नहीं, अब वहाँ जाने की ज़रूरत नहीं है ।"

अन्न०—"तुम्हारे घर की सजावट हो गई ।"

कमला—"हाँ, हो गई ।"

कुछ देर के बाद अन्नपूर्णा ने फिर आकर कमला से कहा—"अगर एक चीज़ तुम्हें दूँ तो तुम मुझे क्या दोगी ?"

कमला—"मेरे पास क्या है जो दूँगी ?"

अन्न०—"एकबार ही कुछ नहीं ?"

कमला—"कुछ भी नहीं ।"

अन्नपूर्णा ने कमला के गाल पर हलकी चपत लगा कर कहा—"सच कहती हो, जो कुछ तुम्हारे पास थी, जान पड़ता है वह एक व्यक्ति को दे चुकी हो । यही बात है न ?" यह कह कर अन्नपूर्णा ने आँचल के भीतर से एक पत्र निकाला ।

लिफ़ाफ़े पर रमेश का हस्ताक्षर देखकर कमला का मुँह विवर्ण हो गया । उसने मुँह फेर लिया ।

अन्नपूर्णा ने कहा—"वाह ! इसी का नाम नख़रा है ! बहुत हुआ। अब शान्त हो। मैं तुम्हारे मन की सब बात जानती हूँ। इधर तो चिट्ठी झपट कर लेने के लिए तुम मन ही मन अकुला रही हो। उधर मुँह भी फेरती हो। जब तक मुँह खोलकर पत्र न माँगोगी। मैं कभी न दूँगी। देखूँ, कब तक तुम धीरज धर सकती हो !"

इसी समय उमा ने एक खिलौने की गाड़ी में रस्सी बाँध उसे खींचती हुई आकर कहा—"मौसी।"

कमला झट उमा को गोद में लेकर उसका मुँह बारंबार चूमती हुई सोने के घर में ले गई। गाड़ी खींचने में रुकावट होने के कारण उमा चिल्लाने लगी। किन्तु कमला ने उसे नहीं छोड़ा। उसे घर के भीतर ले जाकर नाना प्रकार के प्रलाप-वाक्यों से वह उसका जी बहलाने की चेष्टा करने लगी।

अन्नपूर्णा ने आकर कहा—"मैंने हार मानी। तुम्हारी ही जीत हुई। मैं तो इतनी देर अपने को न रोक सकती। तुम धन्य हो। तुम्हारी जैसी औरत मैंने न देखी। यह लो। वृथा मैं क्यों तुम्हें सताऊँ ?"

यह कहकर अन्नपूर्णा उसके बिछौने पर रमेश की चिट्ठी फेंक कर उमा को उसकी गोद से लेकर चली गई।

कमला लिफ़ाफ़े को हाथ में लेकर बड़ी देर तक सोचती रही। पीछे उसने अछुता पछुता कर लिफ़ाफ़ा खोला। चिट्ठी की प्रथम दो चार पंक्ति पर दृष्टि पड़ते ही उसका मुँह लाल हो गया। लज्जा और क्रोध से उसने चिट्ठी को भूमि पर फेंक दिया। जब कुछ देर में उसका चित्त शान्त हुआ तब उसने धरती

से चिट्ठी उठा कर सब पढ़ डाला। सब बात उसकी समझ में आई या नहीं यह भगवान् जाने, किन्तु वह चिट्ठी उसके हाथ में बोझ सी जान पड़ी। उसने फिर चिट्ठी को मरोड़ दूर फेंक दिया। जो पुरुष उसका स्वामी नहीं है, हा, उसी के घर में उसे गृहिणी बन कर रहना होगा। उसी के लिए वह यहाँ लाई गई है! रमेश ने जान बूझ कर इतने दिन बाद उस पर माया-जाल फैलाया है। कमला ने गाज़ीपुर आकर जो रमेश की ओर अपने हृदय को इतना अग्रसर किया था, वह रमेश जानकर नहीं, अपना पति जानकर। रमेश उसी पर भूला हुआ था, इसीलिए उस अनाथिनी के ऊपर दया करके उसे यह प्रेम पत्र लिखा है। अज्ञानतः कमला ने रमेश के पास जो कुछ स्नेह का भाव प्रदर्शित किया था, उसे अब वह कैसे लौटा सकती है। यही उसके मन में भारी चिन्ता हुई। ऐसी लज्जा और सन्ताप का विषय क्यों उसके भाग्य में संघटित हुआ। उसने जन्म लेकर तो किसी का कुछ अपराध न किया था, एकाएक ऐसा कठिन संकट क्यों उसके ऊपर आ पड़ा? इससे भी बढ़कर भयङ्कर घटना तब घटेगी जब वह रमेश के घर में गृहिणी के पद से अलंकृत होकर रहेगी। कमला इस आफ़त से क्योंकर अपने को बचा सकेगी, इसका कोई उपाय उसे नहीं सूझता। रमेश जो उसके लिए ऐसा भयानक हो उठेगा, दो दिन पहले कमला को स्वप्न में भी इसका सन्देह न था।

इसी समय उमेश द्वार के पास आकर खाँसने लगा। कमला की कुछ आहट न पाकर उसने धीरे धीरे पुकारा—"माँ," कमला द्वार के पास आई। उमेश ने सिर हिला कर कहा—"श्रीपति बाबू ने लड़की के ब्याह में कलकत्ते से एक थिएटर मँगाया है।"

कमला—"अच्छा तो तुम देखने जाओ।"

उमेश—"कल सवेरे क्या आप को कुछ फूल चाहिए?"

कमला—"नहीं, नहीं, फ़ूल की कुछ ज़रूरत नहीं।"

उमेश जब जाने लगा, तब कमला ने उसे पुकार कर कहा—"सुनो उमेश! तुम थिएटर देखने जाते हो तो यह लेते जाओ।" यह कहकर कमला ने उमेश के हाथ में पाँच रुपये रख दिये।

उमेश को बड़ा आश्चर्य हुआ! थिएटर देखने के लिए पाँच रुपया देने की क्या ज़रूरत थी। यह उसने कुछ भी न जाना, कहा—"क्या बाज़ार से आप के लिए कोई चीज़ ख़रीद कर लाना होगा?"

कमला—"नहीं, मेरे लिए कुछ लाने की ज़रूरत नहीं। मुझे कुछ न चाहिए। यह तुम अपने पास रख लो। इससे अपना काम चलाना।"

उमेश को जाते देख कमला ने फिर उसे पुकार कर कहा—"उमेश, क्या तुम यही कपड़ा पहने थिएटर देखने जाओगे? तुम्हें लोग क्या कहेंगे?"

लोग उसका ऐसा भेस देखकर हसेंगे, वह इस बात को न जानता था। इसी से वह सफ़ेद धोती और चादर पहन ओढ़ कर तमाशा देखने के लिए जाना ज़रूरी न समझता था। कमला का प्रश्न सुनकर उमेश कुछ न बोला, सिर्फ़ उस के होंठ पर हँसी का चिह्न दिखाई दिया।

कमला ने दो जोड़े रेशमी धोती निकाल कर उमेश के आगे फेंक कर कहा—"यह लो, यही पहन ओढ़ कर थिएटर देखने जाओ।"

धोती का चौड़ा, और ख़ूब उमदा पाढ़ देखकर उमेश का हृदय आनन्द से उमँग उठा। उसने मारे ख़ुशी के कमला के पैरों पर गिर कर प्रणाम किया। पीछे किसी तरह अपनी हँसी को रोककर धीरे धीरे वहाँ से चल दिया।

उमेश के चले जाने पर कमला खिड़की के पास चुपचाप खड़ी हो आँसू बहाने लगी।

अन्नपूर्णा ने घर में प्रवेश करके कहा—"बहन, क्या अपनी चिट्ठी मुझे न दिखलाओगी?"

कमला से तो अन्नपूर्णा की कोई बात छिपी न थी, इसीसे अन्नपूर्णा ने भी इतने दिनों के उपरान्त सुयोग पाकर यह बात कही।

कमला ने कहा—"यही तो है देखो न" यह कहकर उंगली से चिट्ठी दिखा दी।

अन्नपूर्णा ने आश्चर्य युक्त होकर मन में कहा—"पति पर इतना क्रोध! अब भी इसके मन में क्रोध बना है। धिक्कार है ऐसे क्रोध को! उसने धरती पर से पत्र उठाकर सब पढ़ डाला। पत्र प्रेम की बात से भरा है, पर तो भी यह पत्र किस ढंग का है सो कुछ समझ में नहीं आता। कोई पुरुष इस तरह से तो अपनी स्त्री को चिट्ठी नहीं लिखता। यह तो एक विचित्र ही तरह का जान पड़ता है।" अन्ना ने पूछा—"अच्छा कहो तो बहन, क्या तुम्हारे पति कोई उपन्यास तो नहीं लिख रहे हैं?"

पति का नाम सुनते ही कमला का चेहरा फिर उदास हो गया। उसने कहा—"मैं नहीं जानती।"

अन्न०—"आज तुम अपने नये घर में जाओगी न? रमेश बाबू ने तुमको उसी मकान में रहने को बात लिखी है।"

कमला ने सिर हिलाकर जताया—"जाऊँगी।"

अन्न०—मैं आज साँझ तक ख़ुशी से तुम्हारे साथ रह सकती थी, परन्तु तुम जानती ही हो, आज नरसिंह बाबू की स्त्री आने वाली हैं। मेरी माँ तुम्हारे साथ जा भी सकती हैं।

कमला घबराकर बोली—"नहीं, नहीं, वे क्यों जायँगी? उनके जाने की कोई ज़रूरत नहीं। वहाँ नौकर हुई है। सब बातों का प्रबन्ध पहले ही ठीक हो चुका है।"

अन्नपूर्णा ने हँस कर कहा—"और तुम्हारा वाहन उमेश तुम्हारे साथ रहेगा, तुम्हें डर किस बात का?"

उमा उस समय कहीं से एक पेन्सिल लाकर स्लेट पर लकीरें खींच रही थी और ख़ूब ज़ोर से चिल्ला चिल्ला कर मनमाने निरर्थक शब्दों का उच्चारण कर रही थी। अपनी जान में वह पढ़ रही थी। अन्नपूर्णा ने उसके हाथ से स्लेट पेन्सिल छीन कर उसकी शब्दरचना में बाधा डाल दी। इससे क्रुद्ध होकर वह बेतरह रोने चिल्लाने लगी। कमला ने उसे गोद में उठाकर कहा—"चुप हो, चलो, तुझे एक बहुत बढ़िया चीज़ देती हूँ।" यह कहकर उसे अपने शयनगृह में लेजाकर बिछौने पर बिठा दिया और लाड़प्यार करके थोड़ी ही देर में उसको राज़ी कर लिया। जब वह प्रतिज्ञात वस्तु माँगने लगी तब कमला ने अपना सन्दूक़ खोल कर एक जोड़ा सोने की ब्रेसलेट (पहुँची) निकाली। यह उमदा खिलौना पाकर उमा बहुत ख़ुश हुई। मौसी ने उसके दोनों हाथों में वे पहना दीं। ढीली पहुँची पहने, हाथों को ऊपर उठाये, मारे

ख़ुशी के उछलती हुई अपनी माँ को दिखलाने गई। माँ उसके हाथ में सोने का पहुँची देखकर चकित हुई और झट उसके हाथ से पहुँची निकालकर कमला से कहा—"तुम्हारी बुद्धि कैसी है? यह सब वस्तु इसके हाथ में क्यों देती हो?"

अपनी माँ का यह कठोर व्यवहार देखकर उमा रोने लगी। कमला ने अन्नपूर्णा के पास आकर कहा—"बहन, यह पहुँची का जोड़ा मैंने उसी को दिया है।

अन्न०—"तुम पागल तो नहीं हुई?"

कमला—"मैं शपथपूर्वक कहती हूँ, यह पहुँची अब मैं न लूँगी। इसे तुड़ा कर उसी का कण्ठा बनवा दो।"

अन्न०—"नहीं, मैं सच कहती हूँ, तुम्हारी सी पगली औरत मैंने न देखी।" यह कहकर वह कमला के गले से लिपट गई।

कमला ने आँखों में आँसू भर कर कहा—"बहन, तुम्हारे यहाँ से आज मैं विदा होती हूँ। यहाँ मैं बड़े आराम से थी। ऐसा सुख मैंने अपने जीवन में कभी न पाया।"

इसके आगे वह और कुछ बोल न सकी। उसकी दोनों आँखों से आँसू टपकने लगे।

अन्नपूर्णा की आँखों में भी आँसू उमड़ आये। वह धीरज धर कर बोली—"तुम एकदम इतनी अधीर क्यों हो उठी? तुम्हारे मुँह का भाव देखने से यही जान पड़ता है जैसे तुम कितनी दूर जा रही हो। जिस सुख में तुम यहाँ थीं, वह कहना न होगा। मैं सब जानती हूँ। अब तुम्हारी सब विघ्न-बाधा दूर हुई। अपने घर में जाकर अब स्वतन्त्र राज्य करो।

हम सब कभी संयोग से जा पड़ेंगी तो तुम यही समझोगी कि कहाँ से यह आफ़त आकर मेरे सिर सवार हुई।"

विदा होते समय कमला ने अन्नपूर्णा को प्रणाम किया।

अन्नपूर्णा ने आशीर्वाद देकर कहा—"कल दोपहर को मैं तुम्हारे घर आऊँगी।"

कमला कुछ न बोली। मुँह उदास किये वहाँ से विदा हुई। नये मकान में आकर उसने उमेश को उपस्थित देखकर कहा—"क्या तुम थियटर देखने न जाओगे?"

उमेश—"आज आप यहाँ रहेंगी। मैं आपको अकेली छोड़—"

कमला—"उसके लिए तुम चिन्ता न करो। तुम थियटर देखने जाओ। यहाँ रामधन है। तुम जाओ, अब देर मत करो।"

उमेश—"अभी अभिनय आरंभ होने में विलम्ब है।"

कमला—"इससे क्या, वहाँ लड़की के ब्याह में अनेक प्रकार के उत्सव होते होंगे। सब अच्छी तरह देख आओ।"

इस विषय में उमेश को अधिक उत्साहित करने की आवश्यकता न थी। जब वह जाने लगा तब कमला ने फिर उसे पुकार कर कहा—"देखो, चक्रवर्ती जी के आने पर तुम—"

इसके आगे वह और कुछ कहना चाहती थी, पर न कह सकी। उमेश 'हाँ' करके खड़ा रहा। कमला कुछ देर सोचकर बोला, याद रक्खो, चक्रवर्ती जी तुमको हृदय से चाहते हैं, तुम्हें जब जिस चीज़ की ज़रूरत हो, उनसे माँगना। वे अवश्य देंगे। उनको मेरा प्रणाम देना। भूलना नहीं।"

उमेश इस अनुमति का कुछ अर्थ न समझ "बहुत अच्छा" कहकर चला गया।

पिछले पहर कमला को जाते देख रामधन ने पूछा—"माँ जी, आप कहाँ जाती हैं ?"

कमला—"गङ्गा स्नान करने जाती हूँ ।"

रामधन—"मैं भी साथ चलूँ ?"

कमला—"नहीं, तुम यहीं रह कर घर की निगरानी करो ।" यह कहकर उसके हाथ में निष्प्रयोजन एक रुपया देकर वह गङ्गातट की ओर चली गई ।

अड़तीसवाँ परिच्छेद

एक दिन अपराह्न को नलिनी के साथ चाय पीने की इच्छा से घनानन्द बाबू उसकी तलाश में कोठे पर गये। वह ऊपर के कमरे में न मिली। सोने के घर में जाकर देखा, वहाँ भी वह न थी। नौकर को बुलाकर पूछने से जाना, "वह कहीं बाहर भी नहीं गई है।" तब वे हड़बड़ा कर छत पर गये। दिन बहुत थोड़ा बच रहा था। नलिनी एक जगह हाथ पर गाल दिये चुपचाप बैठी थी।

घनानन्द बाबू कब उसके पीछे आकर खड़े हुए, यह उसने न जाना। आख़िर घनानन्द बाबू ने जब धीरे धीरे उसके पास आकर उसकी पीठ पर हाथ रक्खा, तब वह चौंक उठी और पिता को पीठ पीछे खड़ा देख लज्जा से सिमट गई। वह उठना चाहती थी परन्तु घनानन्द बाबू उठने के पूर्व ही उसके पास बैठ कर एक दीर्घनिश्वास त्याग कर कहने लगे—"बेटी! अगर इस समय तुम्हारी माँ जीती रहती। तो तुम्हें कोई कष्ट न होने देती। बेटी! मुझसे तुम्हारे कष्ट का कुछ निवारण न हो सका।"

वृद्ध के मुँह से यह करुणभरी वाणी सुनकर मानो नलिनी मूर्छा के भीतर से एकाएक जाग उठी। उसने एकबार पिता के मुँह की ओर देखा! उस मुँह पर स्नेह, करुण और शोक का चिह्न एक साथ देखने में आया। इन कई दिनों में उनके चेहरे

की अजब हालत हो गई। नलिनी को लेकर जो बखेड़ा खड़ा हुआ है, उसके विरुद्ध वे अकेले खड़े हुए हैं, कोई उनका सहायक नहीं है। कन्या के भग्न हृदय पर बारबार चोट पहुँचाते हैं पर उसके जुड़ाने की कोई तदबीर उनसे नहीं बन पड़ती। नलिनी को सान्त्वना देने में अपनेको सर्वथा असमर्थ जान आज उन्हें उसकी माँ का स्मरण हो आया है।

कुछ देर तक नलिनी लज्जा से सिर नीचा किये बैठी रही। पश्चात् उसने अपने मन के सब झंझटों को दूर फेंक कर पिता से पूछा—"आप का स्वास्थ्य कैसा है?"

स्वास्थ्य! स्वास्थ्य जो एक आलोच्य विषय है। यह कई दिनों से घनानन्द बाबू एकदम भूल गये थे। उन्होंने कहा—"मेरा स्वास्थ्य! मेरा स्वास्थ्य तो अच्छा है। अभी तुम्हारा जैसा चेहरा देखता हूँ, तुम्हारा दुर्बल शरीर देखता हूँ, उसी की बड़ी चिन्ता लगी है। मैं तो किसी तरह अब तक चला जा रहा हूँ। बुढ़ापे का समय आ गया, तो भी एक प्रकार से शरीर की अवस्था अच्छी है। लेकिन तुम्हारी हालत देखकर डर होता है कि तुम कहीं सख़्त बीमार न हो जाओ।" यह कह कर वे धीरे धीरे उसकी पीठ पर हाथ फेरने लगे।

नलिनी ने पूछा—"अच्छा, यह तो कहिए, माँ जब मर गई, तब मैं कै वर्ष की थी?"

घनानन्द—"तब तुम तीन वर्ष की बच्ची थी। कुछ कुछ बोलना सीखा था। मुझे खूब याद है, तुमने मुझसे पूछा था—"माँ कहाँ है?" मैंने कहा—"तुम्हारी माँ अपने बापके पास गई

है। तुम्हारा जन्म होने के पूर्व ही तुम्हारे नाना संसार से चल बसे थे। तुम्हें उनके दर्शन का सौभाग्य प्राप्त न हुआ था। तुम यह भी नहीं जानती थी कि नाना किसे कहते हैं। मेरी बात सुन कर तुम चुपचाप मेरे मुँह की ओर देखने लगी। मैंने जो कहा, यह तुम न समझ सकी। कुछ देर के बाद तुम मेरा हाथ पकड़ कर अपनी माँ के सूने घर की ओर खींचकर ले जाने लगी। तुम्हें विश्वास था कि मैं उस घर में जाकर तुम्हारी माता की सच्ची ख़बर तुम्हें बता दूँगा और उससे तुम्हारी भेट करा दूँगा। तुम समझती थी कि तुम्हारा बाप सब कुछ जानता है, पर यह न जानती थी कि जानी हुई बात कहने में भी तुम्हारा बाप लड़के की भाँति भीरु और असमर्थ है। आज भी यह बात बदली नहीं है। जो मैं पहले था वह अब भी हूँ। ईश्वर ने तुम्हारे बाप के मन में स्नेह दिया है, दया भी दी है पर कुछ सामर्थ्य न दिया।" यह कह कर उन्हों ने अपना दहना हाथ नलिनी के मस्तक पर रक्खा। नलिनी ने पिता के वात्सल्य-भाव से पुलकित होकर कहा—"माँ मुझे बहुत ही कम याद है। कुछ कुछ स्मरण होता है, दोपहर को वह चारपाई पर लेटकर किताब पढ़ती थी। वह मुझे अच्छा नहीं लगता था। मैं उसके हाथ से किताब लेकर खेलना चाहती थी।"

इस तरह वार्तालाप होते होते उस समय की अनेक बातें निकल आईं। माँ कैसी थी, तब का ज़माना कैसा था, इन सब बातों की आलोचना होते होते सूर्यास्त हो गया। कलकत्ते के सब लोग अपने सायंकृत्य में लग पड़े। सिर्फ़ यही दोनों बाप बेटी मिलकर छत के एक कोने में अपने दुःख सुख की समालोचना कर रहे थे।

ऐसे समय में एकाएक सीढ़ी पर योगेन्द्र के पैर का शब्द सुनकर दोनों का वार्तालाप रुक गया। दोनों तुरन्त उठ खड़े हुए। योगेन्द्र वहाँ आकर उन दोनों को कड़ी निगाह से देख कर बोला—"मालूम होता है नलिनी की सभा अब इस छत के ऊपर ही होने लगी है।"

योगेन्द्र नलिनी के स्वतन्त्र विचार से रुष्ट हो गया था। घर में दिन रात शोक की घटा छाई रहती थी, इससे वह घर में रहना न चाहता था। बन्धुबान्धव के घर जाता था तो वहाँ नलिनी के ब्याह की जवाबदेही में पड़ जाता था। सब के प्रश्नों का उत्तर देते देते उसका दिमाग़ ख़फ़ हो गया। इस लिए कहीं जाने में उसको चैन न था। घर बाहर दोनों ही उसके लिए दुःखदायी हो रहे थे। वह बार बार यही कहता था—"नलिनी बड़ी निर्लज्जता का काम कर रही है, इसने वंशपरम्परा की मर्यादा को एक दम उठा दिया। स्त्रियों को अँगरेज़ी उपन्यास पढ़ने देने से यही सब बखेड़े खड़े होते हैं। नलिनी सोचती है, रमेश ने जब मुझे छोड़ दिया तब मेरा जीना व्यर्थ है, मेरा हृदय टूक टूक होकर फट क्यों नहीं जाता।" इसीलिए वह बड़े समारोह के साथ आज अपने हृदय को खण्ड करने बैठी है। नाविल (उपन्यास) पढ़कर कितनी ही स्त्रियाँ प्रेम के नैराश्य में अपने जीवन से हाथ धो बैठती हैं। यह प्रेमरूपी भूत कितनी ही स्त्रियों के सिर सवार होकर सब कुछ काम वह करा देता है और सब कुछ कहला देता है।

योगेन्द्र के कठोर वाक्य-प्रहार से नलिनी को बचाने के लिए, घनानन्द बाबू ने बड़ी शीघ्रता से कहा—"मैं नलिनी से कुछ

बातें कर रहा था।" अभिप्राय यह कि यही उसको गप्प करने के लिए छत पर ले आये हैं। वह अपने मन से यहाँ सभा करने नहीं आई है।

योगेन्द्र—"यह क्यों ? क्या चाय टेबुल के पास बैठकर बातें नहीं हो सकतीं ?"

नलिनी चकित हो बोली—"क्या पिताजी ने आज चाय नहीं पी है ?"

योगेन्द्र—"चाय कवि की कल्पना नहीं है जो सूर्यास्त समय के रागरञ्जित आकाश से निकल पड़ेगी। छत के कोने में बैठे रहने से चाय का प्याला आप ही आप न आ जायगा। इसके लिए हाथ-पैर का कुछ संचार करना आवश्यक है।"

घनानन्द बाबू नलिनी को दुखी देख झट बोल उठे—"आज मुझे इच्छा चाय पीने की न थी, इसी से नीचे न गया।"

योगेन्द्र—"क्या आप सब खाना पीना छोड़कर तपस्वी तो न हो जायँगे ? मैं तो हवा पीकर नहीं रह सकता।"

घनानन्द—"मैं तपस्या की बात नहीं कहता। कल रात में मुझे अच्छी नींद न आई। इसी से मैं आज इस बात को आज़मा कर देखा चाहता हूँ कि चाय न पीने से तबीयत कैसी रहती है।"

असल में नलिनी के साथ बात करते समय चाय से भरे हुए प्याले का ध्यान कई बार घनानन्द बाबू के मन में आया। पर वे आज उठ न सके। बहुत दिनों के बाद आज नलिनी

उनके साथ स्वस्थ भाव से बात कर रही थी। घनानन्द बाबू का हृदय वात्सल्य से भर गया था। वे चाय पीने की अपेक्षा नलिनी की बात सुनने में विशेष आनन्द पाते थे, इसलिए चाय पीने का ध्यान बार बार आने पर भी घनानन्द बाबू वहाँ से न उठ सके।

घनानन्द बाबू ने जो अच्छी नींद न आने के कारण आज चाय पीना छोड़ दिया है, इस बात का विश्वास नलिनी को न हुआ। उसने कहा—"चलिए पिताजी, चाय पीने चलिए।" घनानन्द बाबू उसी घड़ी निद्रा न आने की बात भूलकर टेबुल की तरफ़ दौड़े।

चाय-घर में प्रवेश करने के साथ घनानन्द बाबू ने देखा, अक्षयकुमार बैठा है, इससे उनके मन में कुछ दुःख हुआ। उन्होंने सोचा, नलिनी का चित्त आज कुछ प्रसन्न है, अक्षय को देखते ही उसकी तबीयत फिर ख़राब हो जायगी। पर अब तो इसका कोई उपाय नहीं है। कुछ ही देर में नलिनी भी वहाँ आ पहुँची। अक्षय देखते ही उठ खड़ा हुआ और बोला—"योगेन्द्र, मैं अब जाता हूँ।"

नलिनी ने कहा—"क्यों अक्षयबाबू! इतनी जल्दी क्या है? क्या घर पर कोई काम है? एक प्याला चाय पी लीजिए, तो जाइएगा।"

नलिनी की इस अभ्यर्थना से घर के सब लोग अचम्भे में आ गये। अक्षय ने फिर आसन ग्रहण करके कहा—"आपके परोक्ष में दो प्याला चाय मैं पी चुका हूँ। अगर कोई ज़्यादा हठ करे तो अब भी किसी तरह दो प्याला चाय पी सकता हूँ।

नलिनी ने हँस कर कहा—"चाय पीने के लिए तो किसी दिन आपसे हठ करना नहीं पड़ा है ।"

अक्षय—"अच्छी चीज़ का मैं प्रयोजन न रहते भी सहसा निरादर नहीं करता । ईश्वर ने इतनी बुद्धि मुझे दी है ।"

योगेन्द्र ने कहा—"तुम्हारी ऐसी श्रद्धा देखकर अच्छी चीज़ भी जिसमें तुम्हें बेकार जान कभी तुम्हारा अपमान न करे, यही मैं तुमको आशीर्वाद देता हूँ ।"

बहुत दिनों में आज घनानन्द बाबू के चाय-टेबुल के पास बातचीत का का ठाट जमा है । और दिन नलिनी, हँसी की बात निकल आने पर भी केवल कुछ मुस्कराती थी, उसकी हँसी होठों से बाहर न होने पाती थी । आज वह बात बात में खिलखिला उठती है । उसके इस कोमल व्यवहार से यह न जान पड़ता था कि यह वही नलिनी है । वह अक्षय बाबू का ठट्ठा उड़ा कर बोली—"बाबूजी, अक्षय बाबू का यह अन्याय देखिए, आपकी गोली बराबर न खाकर भी हट्टे कट्टे बने हैं, यदि उसकी कुछ भी कृतज्ञता इनके मन में बनी रहती तो ये सिर गिराने का भी तो नाम लेते । मुफ़्त में तो वह मिलने की नहीं ।"

योगेन्द्र—"इसी को बहानेबाज़ी कहते हैं । गोली के साथ आज इन्होंने कृतघ्नता का काम किया है ।"

घनानन्द बाबू अत्यन्त प्रसन्न होकर हँसने लगे । बहुत दिनों के बाद आज उनकी गोलियों की फिर समालोचना होने लगी है । इसको वे परस्पर के समझने का चिह्न जान कर निश्चिन्त हुए । उनके मन से एक भारी बोझ टल गया ।

उन्होंने कहा—"मालूम होता है, लोगों का विश्वास मेरी गोलियों पर से उठा जाता है। मेरी गोली खानेवाला यही एक अक्षय था इसे भी बहकाने की चेष्टा हो रही है।"

अक्षय ने कहा—"आप इसकी चिन्ता न कीजिए। अक्षय को बहकाना ज़रा मुश्किल है।"

योगेन्द्र—"सही है, बहकाने से पुलिस-केस चलने की सम्भावना है।"

इस प्रकार विनोदभरी बातों से घनानन्द बाबू के चाय-टेबुल पर से मानो बहुत दिनों का वैमनस्य रूपी भूत भाग गया।

आज इस चायपान की सभा शीघ्र भङ्ग न होती, किन्तु नलिनी आज यथासमय बाल न सँवार चुकी थी इस लिए वह बाल सँवारने चली गई। अक्षय भी एक ज़रूरी काम का बहाना करके चला गया।

योगेन्द्र ने घनानन्द बाबू से कहा—"अब विलम्ब न कीजिए, जैसे हो, नलिनी को ब्याह दीजिए।"

घनानन्द बाबू कुछ उत्तर न दे योगेन्द्र के मुँह की ओर देखने लगे।

योगेन्द्र ने कहा—"रमेश के साथ नलिनी का ब्याह क्यों न हुआ, इस बात को लेकर समाज में तरह तरह की गप्पें उड़ रही हैं। मैं कहाँ तक किस का मुँह बन्द करता फिरूँगा, अकेले कितने लोगों के प्रश्न का उत्तर दे सकूँगा। अगर अब

बात खुलासा कहने में कोई बाधा न रहती तब तो मैं सब का मुँह तोड़ जवाब देता, लेकिन नलिनी के स्वतन्त्र विचार की बात सोच कर चुप हो रहना पड़ता है। अब युक्ति से काम निकालना होगा। उस दिन मैंने अखिलचन्द्र को खूब ही फटकारा था। सुना है कि वह नलिनी के विषय में जो चाहे बकता फिरता है। अगर नलिन का विवाह शीघ्र हो जाय तो सब बखेड़ा मिट जाय। मेरी बात सुनिए, अब विलम्ब न कीजिए।

घनानन्द—"ब्याह किसके साथ होगा—योगेन्द्र ?"

योगेन्द्र—"एक व्यक्ति है। जो बात सर्वत्रख्यात हो चुकी है, उससे वर मिलना असम्भव है। केवल एक अक्षय बेचारा है उसे कोई उज्र न होगा, उसे गोली खाने कहिएगा गोली खायगा, ब्याह करने कहिएगा ब्याह करेगा।"

घनानन्द—"योगेन्द्र, तुम पागल तो नहीं हो गये ? क्या अक्षयकुमार के साथ नलिनी कभी ब्याह कर सकेगी ?"

योगेन्द्र—"अगर आप कुछ न बोलें तो मैं उसे राज़ी कर सकता हूँ।"

घनानन्द घबरा कर बोले—"नहीं योगेन्द्र ! तुम नलिनी को उसके लिए विवश मत करो। तुम उसे भय दिखाकर, कष्ट देकर अस्थिर मत करो। अभी कुछ दिन उसे स्थिर रहने दो। वह विचारी जन्म ही की दुखिया है। बहुत कष्ट भोग चुकी है। विवाह का अभी बहुत समय है।

योगेन्द्र—"मैं उसे कुछ भी कष्ट न दूँगा। न किसी तरह का भय दिखाऊँगा। जहाँ तक हो सकेगा बड़ी सावधानी और

कोमलता के साथ काम लूँगा। क्या आप समझते हैं, मैं बिना झगड़े के कोई बात बोल ही नहीं सकता?"

योगेन्द्र बहुत जल्दबाज़ आदमी था। उसी दिन सन्ध्या समय जब नलिनी बाल बाँध कर बाहर आई तब योगेन्द्र ने उसे पुकार कहा—"नलिन, तुमसे एक बात कहनी है।"

सुनते ही नलिनी की छाती धड़क उठी। वह योगेन्द्र के पीछे धीरे धीरे आकर कमरे में बैठी। योगेन्द्र ने कहा—"नलिनी! बाबू जी के शरीर की अवस्था जैसे दिन दिन ख़राब होती जाती है, यह तुम देख ही रही हो।"

नलिनी के मुँह पर कुछ उद्वेग का चिह्न दिखाई दिया। वह कुछ न बोली?

योगेन्द्र—"अगर इसका कुछ विशेष यत्न न किया जायगा तो वे सख़्त बीमार हो पड़ेंगे।"

नलिनी समझ गई, पिता के इस अस्वास्थ्य का दोष उसी के माथे मढ़ा जाता है। वह सिर नीचा करके इस बात को सोचने लगी।

योगेन्द्र ने कहा—"जो हो गई सो हो गई, "बीती ताहि बिसारि दे आगे की सुधि लेहु।" उन बातों की चर्चा अब एकदम छोड़ देनी होगी। अगर इस समय तुम बाबू जी के मन को सम्पूर्ण रूप से स्वस्थ रखना चाहो तो जहाँ तक हो सके, अपने मन की दुर्वासना को शीघ्र निर्मूल कर डालो।"

यह कह कर योगेन्द्र उत्तर पाने की आशा से नलिनी के मुँह की ओर देखने लगा।

नलिनी लज्जा से सिर झुकाये बोली—"मैं इन बातों के लिए बाबू जो को कभी नाराज़ करूँगी यह सँभव नहीं।"

योगेन्द्र—"मैंने माना कि तुम उन्हें नाराज़ न करोगी, किन्तु इससे और लोग तो चुप न रह सकेंगे।"

नलिनी—"इसको मैं क्या कर सकती हूँ। आपही कहिए।"

योगेन्द्र—"चारों ओर जो ये भाँति भाँति की गप्पें उड़ रही हैं, उनके रोकने का एक मात्र उपाय है।"

योगेन्द्र ने जो उपाय मन में सोच रक्खा है, नलिनी उसका अनुभव कर झट बोल उठी—"कुछ दिन के लिए बाबू जो को लेकर पश्चिम प्रदेश में भ्रमण करना क्या लाभदायक न होगा? दो चार महीने इधर उधर घूम आने से सब बात ठंडी पड़ जायगी।"

योगेन्द्र—"इससे भी जैसा चाहिए फ़ायदा न होगा। तुम्हारे मन में कोई दुःख नहीं है, इस बातका जब तक बाबू जी को पूरा निश्चय न होगा तब तक उनके मन में बर्छी चुभती रहेगी। उतने दिन वे किसी प्रकार स्वस्थ नहीं हो सकते।"

नलिनी की आँखों में आँसू भर आये। उसने झट आँखें पोंछ डालीं, बोली "मुझे क्या फ़रमाते हैं?"

योगेन्द्र—मैं जानता हूँ, वह बात सुनने में तुम्हें कठोर मालूम होगी, परन्तु यदि तुम सब ओर की भलाई चाहती हो, तो अब अपना विवाह करने में विलम्ब न करो।"

नलिनी कुछ न बोली, चुप हो रही। योगेन्द्र अपनी अधीरता को न रोक सका, बोला—"नलिन! तुम सब कल्पना के द्वारा

छोटी बात को बड़ी करने ही में अपनी प्रशंसा समझती हो, तुम्हारे व्याह के सम्बन्ध में जैसा कुछ गोल माल उपस्थित हुआ है, ऐसा कितनी ही स्त्रियों को होता है। परन्तु वह झट पट निबट जाता है। नहीं तो उस बात को लेकर जब घर घर में उपन्यास बनने लगता है तब फिर उससे उद्धार पाने की कोई आशा नहीं रहती। तुमको इन बातों से भले ही लज्जा या ग्लानि न हो, पर हम सब तो भाई लज्जा से मरे जाते हैं। जिसमें मेरे घर की बात लेकर किसी को उपन्यास बनाने का अवसर प्राप्त न हो सो शीघ्र करना चाहिए। मेरा विचार सुनो तो किसी अच्छे कुलीन वर से व्याह करके इस पचड़े को समाप्त कर दो।"

नलनी इस बात के मर्म को भली भाँति जानती थी। इस लिए योगेन्द्र की बात उसके हृदय में छुरी की तरह लगी। वह बोली—"तो क्या आप समझते हैं, मैं कौमार व्रत धारण कर सन्यास ग्रहण करूँगी?"

योगेन्द्र—"अगर यह नहीं चाहती तो व्याह कर लो। स्वर्ग पुरी के राजा इन्द्र को छोड़ तुम दूसरे को न पसन्द करो तब तो संन्यास व्रत ग्रहण करना ही ठीक है। संसार में इच्छा के अनुसार सब पदार्थ किसे प्राप्त होते हैं? जिसे जो मिल जाता है वह उसीके अनुसार अपने मन को सङ्कुचित कर सुखी होता है। मैं तो यही कहता हूँ। मनुष्य का यथार्थ महत्त्व इसी में है। सुख का कारण सन्तोष है। "सन्तोषेण विना परा-भवपदं प्राप्नोति मूढ़ो जनः।"

नलिनी ने मर्माहत हो कर कहा—"आप ऐसी बात क्या बोलते हैं। मैंने आपसे पसन्द या नापसन्द की कोई बात कभी कही है?"

योगेन्द्र—"कहा तो नहीं, पर लक्षण से जान पड़ता है। कभी कभी देखता हूँ, तुम निष्कारण या किसी अन्याय कारण वश अपने किसी हितैषी बन्धु के साथ तुरन्त बिगड़ बैठती हो, उस पर विद्वेष भाव प्रकट करने में तुम ज़रा भी कुण्ठित नहीं होती। किन्तु यह बात तुम्हें स्वीकार करनी पड़ेगी कि अब तक जितने लोगों से तुम्हारी भेंट मुलाक़ात हुई है, उनमें एक ही शख़्स ऐसा है जो तुम्हारे सुख दुःख और मान अपमान में सदा एकसा बर्ताव रखता है। इस कारण मैं उसपर मन ही मन बड़ी श्रद्धा करता हूँ। वह तुमको सुखी करने के लिए प्राण तक दे सकता है। यदि ऐसा स्वामी चाहो तो वह कहीं खोजना न होगा और काव्य का नायक चाहो तो—"

नलिनी खड़ी होकर बोली—"यह आप क्या कहते हैं? ऐसी बात न कहें। बाबू जी जो मुझे आज्ञा देंगे, उसका मैं अवश्य पालन करूँगी। यदि उनकी बात न मानूँगी तो आप भले ही काव्य की बात छेड़िएगा।"

योगेन्द्र ने तुरन्त कोमल स्वर में कहा—"बहन, क्रोध मत करो, तुम जानती ही हो, जब मेरी तबीयत बिगड़ती है तब मेरा दिमाग़ ठीक नहीं रहता। जो मेरे जी में आता है, बक जाता हूँ। मैं बचपन से ही तुम्हें देखता आता हूँ। क्या मैं नहीं जानता? लज्जा का अंश तुम में कितना अधिक है और बाबू जी पर तुम्हारी कितनी श्रद्धा और भक्ति है?"

यह कहकर योगेन्द्र घनानन्द बाबू के कमरे में चला गया। योगेन्द्र अपनी बहन के साथ न मालूम कैसी बात कर रहा है, घनानन्द बाबू अपने कमरे में बैठे मन ही मन इस बात को सोच

कर उद्विग्न हो रहे थे और उन दोनों में क्या बात चीत हो रही है, यह जानने के लिए वे वहाँ जाना ही चाहते थे; इतने में योगेन्द्र उनके समाने आ खड़ा हुआ। घनानन्द उसका मुँह देखने लगे।

योगेन्द्र ने कहा—"नलिनी ब्याह करने को राज़ी है। आप समझते होंगे, मैंने ज़िद्द करके उसे राज़ी किया होगा, पर आप ऐसा ख़याल न करें। अब एकबार आपके कहने ही से वह अक्षय के साथ ब्याह करने में कोई उज्र न करेगी।"

घनानन्द—"क्या मुझे कहना पड़ेगा?"

योगेन्द्र—"आप न कहेंगे तो क्या वह स्वयं आकर कहेगी—"मैं अक्षय कुमार से ब्याह करूँगी?" आप अपने मुँह से कहने में शरमाते हों तो मुझे हुक्म दीजिए, मैं आप की आज्ञा उसे सुना दूँगा।"

घनानन्द बाबू व्यग्र होकर बोले—"नहीं, नहीं, जो बात मुझे कहनी होगी वह स्वयं कहूँगा। इतनी जल्दी करने की क्या ज़रूरत है? मेरी सलाह सुनो तो कुछ दिन ब्याह की बात मुल-तबी रक्खो।"

योगेन्द्र—"नहीं बाबू जी, अब विलम्ब करने में कुशल नहीं। इस तरह बहुत दिन न चलेगा। अनेक विघ्न उपस्थित होंगे।"

योगेन्द्र की ज़िद के आगे किसी घर वाले का कुछ वश नहीं चलता। वह जिस काम पर अड़ जाता है, बिना उसे किये नहीं छोड़ता। इस कारण घनानन्द उससे डरते थे। उन्होंने बात टाल देने की इच्छा से कहा—"अच्छा, मैं कहूँगा।"

योगेन्द्र—"कहने का आज ही अच्छा मौक़ा है। वह आपकी आज्ञा के इन्तज़ार में बैठी है। जो हो, आज ही इस विषय का कुछ अस्ति नास्ति कर डालिए।"

घनानन्द सोचने लगे। योगेन्द्र ने कहा—"बाबू जी, सोचने से काम न चलेगा। एकबार नलिनी के पास चलिए।"

घनानन्द—"तुम यहीं रहो, मैं अकेले उसके पास जाता हूँ।"

योगेन्द्र—"बहुत अच्छा, मैं यहीं बैठता हूँ आप जाइए।"

घनानन्द बाबू ने नलिनी की बैठक को बाहर से झाँक कर देखा, घर में अँधेरा था। उनके पैर की आहट पाकर वह हड़बड़ा धड़फड़ा उठी और करुणा भरे स्वर में बोली—"बाबूजी, रोशनी बुझ गई है। आप बैठिए, मैं बेहरे को पुकार कर बत्ती जलाने कहती हूँ।"

उन्होंने कहा—"बत्ती जलाने की कोई ज़रूरत नहीं।"

नलिनी बरामदे में आकर एक कुरसी पर बैठ गई। घनानन्द भी उसके पास दूसरी कुरसी पर बैठ गये।"

नलिनी—"बाबूजी! आप अपने शरीर का कुछ यत्न नहीं करते?"

घनानन्द—"बेटी! न करने का विशेष कारण है। शरीर की अवस्था कुछ अच्छी है, यह समझ करके ही कुछ यत्न नहीं

करता। तुम अपने शरीर की ओर एकबार क्यों दृष्टि नहीं देती ?"

नलिनी क्षुब्ध होकर बोली—"आप सभी लोग एक स्वर से यही बात बोलते हैं, यह भारी अन्याय है। मैं तो बहुत अच्छी दशा में हूँ। मुझे शरीर की अवहेला करते आपने कभी कुछ देखा हो तो कहिए। अगर आपके मन में मेरे शारीरिक स्वास्थ्य के लिए कुछ करना आवश्यक जान पड़े तो वह आप मुझसे क्यों नहीं कहते ? जो आपकी आज्ञा होगी वह मैं अवश्य करूँगी। क्या मैंने कभी आपके आदेश के विरुद्ध कोई काम किया है ?"

घनानन्द—"नहीं, कभी नहीं। तुमको मुझपर पूरा विश्वास है, इसी से मेरी बात पर इतनी निष्ठा है। तुम मेरी सन्तान हो, मैं कदापि तुम्हारे अनिष्ट की कोई बात नहीं कह सकता। यह तुम भी भली भाँति जानती हो। तुमने मेरे मन का आशय समझ कर ही कोई काम किया है। यदि मेरा आशीर्वाद व्यर्थ न हो तो ईश्वर तुम्हें अवश्य चिर सुखी करेंगे। तुम्हारी कामना पूर्ण करेंगे।

नलिनी—"पिता जी ! क्या अब आप मुझे अपने पास न रक्खेंगे ?"

घनानन्द—"क्यों न रक्खूँगा ?"

नलिनी—"जब तक भाभी नहीं आवेगी तब तक तो मैं किसी तरह आपको नहीं छोड़ सकती। मैं न रहूँगी तो आपकी सेवा कौन करेगा ?"

घनानन्द—"मेरी सेवा की क्या पूछती हो? मेरा वैसा भाग्य कहाँ जो तुम मेरी सेवा के लिए मेरे पास बैठी रह सकोगी।"

नलिनी—"घर में बड़ा अँधेरा है, चिराग़ ले आता हूँ, यह "कहकर वह पास वाले घर से लालटेन ले आई। पिता से कहा—"इधर कई दिनों से कुछ न कुछ बाधा हो जाने के कारण सन्ध्या समय आपको समाचारपत्र न सुना सकी। आज का अख़बार आपको सुनाती हूँ।"

घनानन्द ने उठकर कहा—"अच्छा, तुम ज़रा बैठो, मैं अभी आकर सुनता हूँ।" यह कहकर वे योगेन्द्र के पास गये। मन में यह सोचकर आये थे कि "योगेन्द्र से कहेंगे, आज ठीक तरह से बात न हो सकी, दूसरे दिन होगी।" किन्तु ज्योंही वे घर में आये, योगेन्द्र ने पूछा—"कहिए, क्या हुआ? ब्याह की बात आपने उससे कही?" उन्होंने उत्तर दिया, "हाँ कही है।" उन्हें इस बात का डर था कि पीछे यह स्वयं जाकर फिर कहीं उस बेचारी को बात ही बात में सतावे नहीं।"

योगेन्द्र—"वह आपकी बात से ज़रूर राज़ी हुई होगी?"

घनानन्द—"हाँ, एक तरह से उसे राज़ी कर आया हूँ।"

योगेन्द्र—"तो मैं अक्षय बाबू से यह बात कह आता हूँ।"

घनानन्द व्यग्र हो बोले—"नहीं, नहीं, अभी अक्षय से कुछ न कहो। इतनी शीघ्रता करने से सब बात बिगड़ जायगी। घबराने से कोई काम नहीं होता। अभी किसी से कुछ कहने की ज़रूरत नहीं है। बल्कि इस बीच में हम सब एकबार पच्छिम घूम आते हैं। उस के बाद सब ठीक हो जायगा।"

योगेन्द्र इस बात का कुछ उत्तर न देकर चला गया वह एक चादर कन्धे पर रख सीधे अक्षय बाबू के घर उपस्थित हुआ। अक्षयकुमार उस समय एक महाजनी हिसाब की बही लेकर कुछ सीख रहा था। योगेन्द्र ने उसकी बही उसके हाथ से ले अलग रख दी और—"यह सब पीछे होगा। अभी तुम अपने ब्याह का दिन ठीक करो।"

अक्षय ने चकित होकर कहा—"क्या कहते हो?"

———

उनतालीसवाँ परिच्छेद

दूसरे दिन नलिनी सवेरे उठकर जब तैयार हो हवाखाने बाहर आई तब देखा, "घनानन्द बाबू अपने सोने की खिड़की के पास एक आराम कुरसी पर चुपचाप बैठे हैं। घर में बहुत असबाब न था। एक चारपाई और एक कोने में एक अलमारी थी। सामने की दीवाल में घनानन्द बाबू की स्वर्गीय धर्मपत्नी का चित्र टँगा था और उसके पास ही उनकी उसी स्त्री के हाथ के बनाये रेशमी गुलूबन्द आदि रक्खे थे। स्त्री की जीवित अवस्था में आलमारी में जो सब विलास की सामग्री जिस तरह रक्खी थी वह अब भी उसी तरह रक्खी है। नलिनी पिता के पीछे उनके पके हुए बाल चुनने के लिए माथे पर उँगली फेरती हुई बोली—"चलिए आज सवेरे चाय पी आवें, तब आपके घर में बैठकर कल की तरह बातें करूँगी। आपके मुंह से उन दिनों की बात सुनने में मुझे कितनी प्रिय मालूम होती है यह मैं नहीं कह सकती।"

नलिनी के विषय में घनानन्द बाबू की ज्ञान-शक्ति इन दिनों ऐसी प्रखर हो उठी है कि इस चाय पीने के हेतु इतनी जलदी करने का क्या कारण है, यह जानने में उन्हें कुछ भी विलम्ब न हुआ। अब कुछ ही देर में अक्षय भी चाय-टेबुल के पास आ पहुँचेगा। उसके आने के पहले ही नलिनी झटपट चाय पीकर वहाँ से निकल जाना चाहती थी। यही उसका

मतलब था, जो घनानन्द बाबू तुरंत समझ गये। व्याधा के भय से जैसे हरिणी डरा करती है वैसे ही उनकी लड़की भी सदा भयभीत रहती थी। यह जान कर घनानन्द बाबू के मन में बड़ा दुःख होता था।

उन्होंने नीचे जाकर देखा, नौकर ने अब तक चाय नहीं बनाई है। वे उस पर बहुत ख़फ़ा हो उठे। उसने यह समझाने की चेष्टा की कि आज नियत समय से पूर्व ही चायकी तलब हुई है" पर उसकी चेष्टा व्यर्थ हुई। वे उसकी बात पर कान न दे कहने लगे, मेरे नौकर सब नव्वाब हो गये हैं। उनको जगाने के लिए एक नौकर की ज़रूरत हो पड़ी है।"

इस तरह वे कितनी ही बातें बक गये ?

नौकर झट पट चाय तैयार कर उनके सामने ले आया।

घनानन्द बाबू और दिन जिस तरह गप्प करते करते बड़ी स्थिरता के साथ थोड़ा थोड़ा करके चाय पीते थे आज वैसा न करके एक ही दम में प्याला ख़ाली कर दिया। नलिनी कुछ आश्चर्य करके बोली—"बाबूजी, क्या आज आपको कहीं बाहर जाने की ज़रूरत है ?"

घनानन्द—"नहीं, ज़रूरत नहीं है। जाड़े के दिनों में गरम चाय एक ही बार पी लेने से तुरन्त पसीना निकल आता है, जिससे शरीर हलका हो जाता है।"

लेकिन घनानन्द बाबू के शरीर में पसीना आने के पहले ही योगेन्द्र अक्षय को लिए वहाँ आ पहुँचा। आज अक्षय का वेष

विन्यास और दिनों की अपेक्षा विलक्षण था। हाथ में चाँदी की मूठ वाली छड़ी, छाती पर घड़ी की सुनहरी चेन झूल रही थी। बाँये हाथ में एक बादामी काग़ज़ में लपेटी हुई किताब थी। और दिन अक्षय टेबुल के जिस भाग में बैठता था, वहाँ न बैठ कर आज नलिनी के पास ही एक कुरसी खींचकर बैठा और मुस्कुरा कर कहने लगा—"आज आप की घड़ी कुछ तेज़ चलती है।"

नलिनी ने अक्षय के मुँह की ओर न देखा, और न उसकी बात का कुछ जवाब ही दिया। घनानन्द ने नलिनी से कहा—"बेटी! ऊपर चलो। मेरी गरम पोशाकों को एकबार धूप दिखा देना आवश्यक है।" योगेन्द्र ने कहा—"बाबू जी! धूप तो कहीं भागी नहीं जा रही है। इतनी जल्दी क्या है?"

नलिनी से कहा—"अक्षय को एक प्याला चाय दो। मुझे भी चाहिए, पर पहले अतिथि का सत्कार होना उचित है।"

अक्षय ने हँस कर नलिनी से कहा—"कर्तव्य-पालन के लिए इतना बड़ा आत्मत्याग शायद ही किसी ने देखा हो? मानो ये दूसरे हरिश्चन्द्र ही हैं।"

नलिनी ने अक्षय की बात पर कुछ भी ध्यान न दे दो प्याले चाय तैयार करके एक योगेन्द्र को दिया और दूसरा प्याला अक्षय के आगे ज़रा बढ़कर घनानन्द बाबू के मुँह की ओर देखा। घनानन्द ने कहा—"धूप तेज़ हो जाने पर कष्ट होगा। चलो, अब देर मत करो।"

योगेन्द्र—"आज कपड़े को धूप में रखना छोड़ दीजिए। अक्षय बाबू आये हैं।"

घनानन्द बाबू कुछ तीव्र होकर बोले—"तुम सब बातों में दख़ल दिये फिरते हो। तुम अपनी ज़िद्द के आगे भला बुरा कुछ नहीं समझते, दूसरे को मर्मान्तिक कष्ट देकर भी अपने मत को जारी रखने में बहादुरी समझते हो। मैंने तुम्हारी हठधर्मिता बहुत दिनों तक चुपचाप सही, पर अब मुझसे बरदाश्त न हो सकेगी।" चलो बेटी! कल से हम तुम ऊपर वाले घर में ही चाय पियेंगे।"

यह कहकर घनानन्द बाबू नलिनी को साथ ले ऊपर जाने को उद्यत हुए। नलिनी ने गम्भीरतापूर्वक कहा—"बाबू जी, ज़रा और बैठिए, आज आपका अच्छी तरह चाय पीना न हुआ। अक्षय बाबू, कागज़ में मोड़ा हुआ क्या है, क्या यह मैं पूछ सकती हूँ ?"

अक्षय—"सिर्फ़ पूछने ही नहीं सकती, बल्कि आप उसे खोल भी सकती हैं।" यह कह कर उसने वह मोड़ा हुआ कागज़ नलिनी के आगे रख दिया।"

नलिनी ने खोल कर देखा, वह एक प्रेम-पत्र था। देखते ही वह भौंचक सी हो रही। उसका चेहरा ज़र्द हो गया। ठीक ऐसा ही एक प्रेम-पत्र वह रमेश से पहले उपहार में पा चुकी है। वह प्रेम पत्र आज भी उसके सोने के घर की आलमारी में बड़े आदर के साथ गुप्तरीति से रक्खा है।

योगेन्द्र ने कुछ हँस कर कहा—"इसमें क्या लिखा है। यह अब भी तुम पर प्रकट नहीं हुआ।" इतना कहकर उसने किताब का सादा पेज खोलकर उसके हाथ में दिया। उस पर लिखा था "श्रीमती नलिनी देवी के प्रति अक्षय का प्रेमोपहार।"

"प्रेमोपहार" शब्द पर दृष्टि पड़ते ही नलिनी के हाथ से किताब छुटकर नीचे गिर गई। इस पर वह कुछ लक्ष्य न करके पिता से बोली—"चलिए बाबूजी।"

दोनों घर से बाहर हो गये। योगेन्द्र की आँख मारे क्रोध के लाल होगई। सारा शरीर थरथर काँपने लगा। उसने कहा— "नहीं, मैं यहाँ नहीं रह सकता। यहाँ का रहना अब मेरे लिए कठिन हो गया। मुझे कहीं एक स्कूल की नौकरी मिल जाय तो फौरन यहाँ से चला जाऊँ। अब यहाँ पल भर भी ठहरने को जी नहीं चाहता।"

अक्षय—"भाई, तुम वृथा क्रोध कर रहे हो। मैंने तो तभी तुम से कह दिया कि तुम भूलते हो, तुमने ठीक नहीं समझा तुम्हारे बार बार आश्वासन देने और आग्रह करने पर मैं अपने सिद्धान्त से विचलित हुआ। परन्तु मैं तुमसे सच कहता हूँ नलिनी का मन कभी मुझसे मिल नहीं सकता। वह कभी मुझे अङ्गीकार न करेगी, यह तुम निश्चय जानो। जो कार्य असंभव है, उसके लिए यत्न करना व्यर्थ है। अतएव उससे हो सके तो ऐसा यत्न करो जिसमें नलिनी रमेश को भूल जाय।"

योगेन्द्र—"कर्तव्य की बात तो तुमने कह दी, पर इसका कुछ उपाय भी तो बताना चाहिए।"

अक्षय—"मुझे छोड़ क्या संसार में वर होने योग्य और युवा पुरुष नहीं है? जैसे हो सके, एक अच्छा वर खोज लाना चाहिए जिसे देखकर झट कपड़ा धूप में देने की इच्छा उनकी प्रबल न हो उठे।"

योगेन्द्र—"वर तो वह वस्तु नहीं है जो इच्छा करते ही मिल सके।"

अक्षय—"तुम थोड़े ही में घबरा कर क्यों इस तरह निरुद्यम हो बैठते हो? "उद्यमेन हि सिद्ध्यन्ति कार्य्याणि न मनोरथैः।"" यत्न करने से क्या नहीं हो सकता। मैं तुमको योग्यवर का पता बता सकता हूँ, परन्तु शीघ्रता करने से कोई काम न होगा। पहले ही विवाह का प्रस्ताव सुनाकर कन्यावर को सशङ्कित करने से काम न चलेगा। पहले धीरे धीरे दोनों में परिचय की घनिष्ठता होने देनी चाहिए। पीछे दोनों के मन का भाव समझ कर ब्याह का दिन स्थिर करना उचित है।"

योगेन्द्र--उपाय तो तुमने बहुत अच्छा बताया, वर का भी नाम बता दो।"

अक्षय—"तुम उन्हें अच्छी तरह नहीं जानते। सिर्फ़ देखा होगा। कमलनयन बाबू डाक्टर।"

योगेन्द्र—"कमलनयन बाबू!"

अक्षय—"चौंकते क्यों हैं? उनके कारण ब्रह्मसमाज में भारी हलचल मची है। मचने दो, क्या इससे ऐसे उपयुक्त वर को हाथ से जाने दोगे?"

योगेन्द्र—"अगर मेरे किये होता तो मैं कभी उन्हें हाथ से जाने नहीं देता। तथापि यत्न करूँगा। क्या कमलनयन बाबू ब्याह करने को राज़ी होंगे?"

अक्षय—"आज ही होंगे, यह मैं नहीं कह सकता, किन्तु समय पाकर क्या नहीं हो सकता? तुम मेरी बात सुनो, कल

कमलनयन बाबू की वक्तृता का दिन है। उस वक्तृता में नलिनी को ले चलो। उनकी वक्तृता बड़ी मनोहारिणी होती है। स्त्रियों का चित्त उनकी वक्तृता सुन तुरन्त द्रवीभूत हो जाता है, किन्तु मूर्ख स्त्रियाँ यह नहीं समझतीं कि वक्ता पति की अपेक्षा श्रोता पति कहीं अच्छा है।"

योगेन्द्र—"कमलनयन के कुल-शील का परिचय एकबार कह सुनाओ।"

अक्षय—"देखो योगेन्द्र, यदि उनके कुल-शील में कुछ दोष भी हो तो उसके लिए तुम विशेष चिन्तित न हो। एक छोटे से नुक्स के सबब बड़े बड़े मूल्यवान् पदार्थों की कीमत घट जाती है और वे सुलभ हो जाते हैं। मैं तो उसे एक प्रकार का लाभ ही समझता हूँ।"

अक्षय ने कमलनयन के कुलशील का जो वर्णन किया उसका संक्षिप्त वृत्तान्त इतना ही है कि कमलनयन के बाप राजवल्लभ फ़रीदपुर ज़िले के रहने वाले एक छोटे ज़मींदार थे। वे तीस वर्ष की उम्र में ब्राह्म धर्म के उपासक हुए। परन्तु उनकी स्त्री ने किसी तरह स्वामी का वह नूतन धर्म स्वीकार न किया, और आचार विचार के सम्बन्ध में वह बड़ी साव-धानी से पति के साथ स्वतन्त्रता की रक्षा कर के चलने लगी। उसका यह व्यवहार राजवल्लभ को अच्छा नहीं लगता था। उनके पुत्र कमलनयन ने धर्मप्रचार के उत्साह और वक्तृत्व शक्ति के द्वारा पूरी युवावस्था प्राप्त होते न होते ब्राह्म समाज में बड़ी प्रतिष्ठा लाभ की। पश्चात् वे सरकारी डाकृरी के पद पद पर नियुक्त हो वङ्ग देश के अनेक स्थानों में निवास कर

सच्चरित्रता और चिकित्सा की निपुणता तथा अच्छे कर्म के अनुष्ठान से सर्वत्र अपना सुयश फैलाने लगे।"

इसी अवसर में एक नई घटना घटी। वृद्धावस्था में राजवल्लभ एक विधवा के साथ ब्याह करने के लिए सहसा उन्मत्त हो उठे। कोई उन्हें रोक न सका। वे कहने लगे, मेरी वर्तमान स्त्री सच्ची सहधर्म्मिणी नहीं है। जिसके साथ धर्म में, मत में, व्यवहार में और मानसिक विचार में मिलान है, हृदय की एकता है, उसको स्त्री रूप में ग्रहण न करने से भारी अन्याय होगा?"

इतना कह कर राजवल्लभ ने सर्वसाधारण जनों से धिक्कारे जाने पर भी उस विधवा के साथ ब्याह कर ही लिया।

इसके अनन्तर कमलनयन की माता घर छोड़ कर काशी जाने को उद्यत हुई। कमलनयन को जब यह हाल मालूम हुआ तब उन्होंने रङ्गपुर से आकर कहा—"माँ, मैं भी तुम्हारे साथ जाऊँगा!"

माँने रोककर कहा—"बेटा, मेरे साथ तुम सबों का कुछ भी मेल नहीं खाता। मेरा आचार व्यवहार भिन्न और तुम्हारा भिन्न। ऐसी अवस्था में तुम मेरे साथ जाकर क्यों वृथा कष्ट सहोगे।"

कमलनयन ने अपनी इस पति-परित्यक्त माता को सुखी रखने का दृढ़ सङ्कल्प किया। वह माता के साथ काशी गया।"

माँने कहा—"क्या मुझे बहू का मुँह न दिखाओगे।"

कमलनयन बड़े सङ्कट में आ फँसा, बोला—"अभी उसकी क्या ज़रूरत है। समय आने पर देखा जायगा।"

माँ ने जाना, बेटा बहुत कुछ त्याग कर साथ देने आया है। किन्तु ब्रह्म समाज के बाहर ब्याह करना नहीं चाहता। उसने व्यथित होकर कहा—"वत्स! मेरे लिए तुम संन्यासी होकर रहोगे, यह कभी नहीं हो सकता। तुम्हारी जहाँ ब्याह करने की इच्छा हो, करो, मैं कभी उसमें बाधा न दूँगी।"

कमलनयन ने दो एक दिन सोच विचार कर कहा—"माँ तुम जैसी चाहो, वैसी ही एक बहू लाकर तुम्हारी सेवा में रख दूँ। मैं ऐसी बहू कभी घरमें न लाऊँगा जो तुम्हारी बात न सुनेगी, जो तुम्हारी इच्छा के विरुद्ध काम कर तुम्हें दुःख देगी।" यह कहकर कमलनयन अच्छी कन्या की खोज में अपने देश गया। इसके बाद उसके चरित्र में कुछ गड़बड़ है। कोई कहता है, उसने देश आकर चुपचाप एक अनाथ-बालिका के साथ ब्याह किया था, परन्तु ब्याह होने के कुछ ही दिन बाद स्त्री का वियोग हो गया। कोई कोई इसमें सन्देह करते हैं। कोई कहता है कि "वह ब्याह करने की इच्छा से देश गया था, पर लग्न टल जाने के कारण उसका ब्याह नहीं हुआ।"

जो कुछ हो, अक्षय के कहने के अनुसार, कमलनयन अब जिसे पसन्द करेगा उसी के साथ ब्याह करेगा, इसमें उसकी माता कुछ आपत्ति न करके प्रसन्न होगी। नलिनी से गुणवती बालिका कमलनयन कहाँ पावेगा! नलिनी का जैसा कोमल स्वभाव है, इससे वह अपनी सास की यथेष्ट सेवा शुश्रूषा करेगी; कभी

उसे कोई तकलीफ़ न देगी । उसका कहना मान सब काम करेगी । कमलनयन बाबू दो ही एक दिन में नलिनी के शील-स्वभाव से भली भाँति परिचित हो जायँगे । इसलिए मेरा विचार यही है कि जिसमें किसी तरह दोनों का परस्पर परिचय हो जाय ।”

चालीसवाँ परिच्छेद

अक्षय के चले जाने पर योगेन्द्र दो मंजिले पर गया। देखा, ऊपर के कमरे में घनानन्दबाबू बैठे नलिनी से बात कर रहे हैं। योगेन्द्र को देख घनानन्द कुछेक लज्जित हुए। आज चाय-घर में उनका स्वाभाविक शान्त भाव नष्ट होकर क्रोध प्रकट हुआ था, इसका भी उनके मन में खेद था। इसी से उन्होंने विशेष उत्कण्ठा और आदर के साथ कहा—"आओ योगेन्द्र, बैठो।"

योगेन्द्र—"आपने बाहर किसी सभा-सुसाइटी में जाना आना एक दम छोड़ दिया। दोनों जने दिन रात घर के भीतर बैठे हैं। यह ठीक नहीं। बाहर की हवा लगने से शरीर फुर्तीला होता है।"

घनानन्द—"सुनो, मैंने तो इसी तरह घर के कोने में बैठकर जीवन बिता दिया। संयोग ही से बाहर जाता हूँ। नलिनी को कहीं बाहर ले जाना भी कठिन हो गया है।"

नलिनी—"बाबूजी, आप मेरा दोष क्यों देते हैं। आप मुझे जहाँ ले जाना चाहते हों ले चलिए। मैं ख़ुशी के साथ जाऊँगी।"

नलिनी अपने स्वभाव के अनुकूल बर्ताव करके भी इस को साबित करना चाहती है कि वह किसी शोक के कारण

घर में बैठ रहना नहीं चाहती। वह जैसे पहले थी वैसे ही अब भी है।"

योगेन्द्र—"बाबूजी! कल एक मीटिंग है, वहाँ नलिनी को भी ले चलिएगा।"

घनानन्द बाबू जानते थे, नलिनी कुछ दिनों से लोगों की भीड़ में जाना नहीं चाहती। किसी सभा में प्रवेश करते हुए उसे अधिक संकोच होता है। इसी से वे योगेन्द्र की बात का कुछ जवाब न दे नलिनी का मुँह देखने लगे।

नलिनी सहसा एक अस्वाभाविक उत्साह दिखाकर बोली—"मीटिङ्ग! वहाँ कौन लेकचर देगा?"

योगेन्द्र—"कमलनयन बाबू?"

घनानन्द—"कमलनयन?"

योगेन्द्र—"वे क्या साधारण मनुष्य हैं? उनकी वक्तृता बड़ी चित्ताकर्षक होती है। ऐसा प्रभावशाली व्याख्यान देने वालों की संख्या भारत में अभी बहुत कम है। इनके जीवन का इतिहास सुनने से बड़ा आश्चर्य होता है। ऐसा त्याग! ऐसी दृढ़ता! ऐसी कर्तव्यपरायणता कहीं देखने में नहीं आती। इनके समान तेजस्वी मनुष्य का दर्शन होना दुर्लभ है।"

दो घण्टे पूर्व एक साधारण जनश्रुति के सिवा कमलनयन के सम्बन्ध में योगेन्द्र कुछ न जानता था। अक्षय के मुँह

से जो उसने संक्षिप्त वृत्तान्त सुना, उसी को ख़ूब बढ़ा चढ़ा कर अपने पिता से कहा।"

नलिनी ने कुछ आग्रह दिखाकर कहा—"क्या हर्ज है, बाबू जी चलिएगा। मैं भी आपके साथ वक्तता सुनने जाऊँगी। नलिनी के इस उत्साह-वाक्य पर घनानन्द ने पूरा विश्वास न किया, पर तो भी वे मन ही मन कुछ प्रसन्न हुए। उन्होंने सोचा, अगर नलिनी अनिच्छापूर्वक भी इस तरह सभ्य समाज में जाया आया करेगी तो शीघ्र उसका मन स्वस्थ हो जायगा। साधुजनों का सत्सङ्ग ही मनुष्य के मानसिक दुःख का महौषध है।" उन्होंने कहा—"अच्छा तो योगेन्द्र, कल हम सबों को ठीक समय पर मीटिङ्ग में ले चलना। परन्तु कमलनयन बाबू के सम्बन्ध में तुम क्या जानते हो? उनके विषय में अनेक लोगों के मुँह से अनेक प्रकार की बातें सुनता हूँ।"

जो लोग उनके विषय में तरह तरह की गप्पें उड़ाते हैं पहले योगेन्द्र ने उन लोगों को ख़ूब गालियाँ दीं, कहा—"जो लोग धर्म के विरोधी हैं वे समझते हैं, भगवान ने उन्हें बात बात में दूसरे के प्रति अत्याचार और दूसरे की निन्दा करने ही के लिए उत्पन्न किया है। इन पाखण्डी जनों से बढ़कर संकीर्णहृदय और नीच संसार में और कोई नहीं। यह कहते कहते योगेन्द्र अत्यन्त उत्तेजित हो उठा।

घनानन्द योगेन्द्र को शान्त करने के लिए बार बार कहने लगे—"तुम ठीक कहते हो, तुम्हारा कहना सही है। दूसरे के दोषों की आलोचना करते करते हृदय संकीर्ण हो जाता है;

बुद्धि संशयात्मक हो जाती है; मन से उदारता का भाव उठ जाता है।"

योगेन्द्र—"बाबूजी! क्या यह बात आप मुझपर लक्ष्य करके तो नहीं कहते? किन्तु मेरा स्वभाव पाखण्डी जनों का सा नहीं है। मैं भला बुरा दोनों कहना चाहता हूँ और जो कुछ मुझे कहना होता है, वह मुँह पर साफ़ साफ़ कह देता हूँ। इससे कोई ख़ुश हो चाहे नाराज़ हो, इसकी कुछ परवा मैं नहीं करता।"

घनानन्द ने बड़ी व्यग्रता के साथ कहा—"योगेन्द्र, क्या तुम पागल तो नहीं हुए? मैं तुमपर लक्ष्य करके क्यों कहूँगा? क्या मैं तुमको पहचानता नहीं?"

इसके उपरान्त योगेन्द्र ने कमलनयन की प्रशंसा शुरूकर दी। कहा, "कमलनयन माँ को सुखी करने के लिए बड़ी नियम-निष्ठा के साथ काशी सेवन कर रहे हैं। इसी लिए, आप जिन्हें अनेक लोगों में गिनते हैं वे उनकी निन्दा करते हैं। और उनके सम्बन्ध में जो जो मैं आता है बकते हैं। किन्तु मैं तो इसके लिए कमलनयन को सराहता ही हूँ। नलिनी तुम क्या कहती हो?"

नलिनी—"मैं भी तो यही कहती हूँ।"

योगेन्द्र—"नलिनी अच्छा ही कहेगी, यह मैं जानता था। आपको सुखी करने के लिए नलिनी अपना कुछ स्वार्थ त्याग करने का अवसर पाकर प्रसन्न होती है, यह मैं भली भाँति जानता हूँ।"

घनानन्द ने स्नेहभरी दृष्टि से नलिनी की ओर देखा। उसने लज्जा से सिर नीचा कर लिया।

इकतालीसवाँ परिच्छेद

सभा विसर्जन होने के बाद घनानन्द बाबू जब नलिनी को साथ ले घर लौटे तब भी कुछ दिन था। चाय पीने के लिए बैठकर घनानन्द बोले—"आज निःसन्देह मुझे बड़ा हर्ष हुआ है।" इससे अधिक वे कुछ न बोल सके। उनके मन में एक नये भाव का स्रोत बह रहा था।

आज चाय पीने के उपरान्त नलिनी तुरन्त ऊपर चली गई। घनानन्द बाबू ने इसपर कुछ लक्ष्य न किया। उनका ध्यान अन्यत्र लगा था।

आजकी सभा में जिस डाक्टर की वक्तृता हुई थी, वह एक अद्भुत युवा पुरुष है। युवावस्था में भी मानो शैशवकाल की निर्मल शोभा उसके मुखकमल पर छाई थी। उसकी सुकुमारता और प्रसन्नता देखते ही हृदय मुग्ध होता था। उसके मधुर भाषण में भी क्या ही एक अद्भुत चमत्कार भरा था। यही जी चाहता था कि हज़ार कान से उसकी वक्तृता सुनें। उसके हृदय का भाव भी कैसा पवित्र झलकता था जैसे गङ्गा की धार। गम्भीरता का भी अभाव न था।

उसकी वक्तृता का विषय था, "त्याग"। उसने कहा था, "संसार में जो लोग कुछ त्याग नहीं करते वे कुछ नहीं पाते। स्वार्थ त्याग करने ही का नाम पुरुषार्थ है। ऐसे जो हम लोग

कुछ पा जाते हैं वह कुछ पाना नहीं है। फिर त्याग करके जो कुछ हम पा सकें वही यथार्थ पाना है। वही हमारा वास्तविक धन है। जो हमारी सच्ची सम्पत्ति है, उसे हम हाथ से जानेदें, उसे हम खोदें तो हमारी अभाग्यता है। जो लोग परोपकार के हेतु जितना ही आत्मत्याग करते हैं उतना ही अतुल धन दिन पर दिनउनके आगे सञ्चित होता है। जिस मनुष्य में जितनी त्याग की क्षमता है वह उतना ही अधिक सम्पत्तिमान् हैं। स्वार्थत्याग-पूर्वक जो दान है। वही यथार्थ है। उस दान का माहात्म्य अवर्णनीय है। जिस दान में अभिमान का गन्ध है वह दान नहीं। जो लोग स्वार्थरहित हो, निरहंकार होकर दूसरे को कुछ देते हैं वही उनका सात्विक दान है। इस दान के प्रभाव से छोटी से छोटी वस्तु भी बड़े आकार की हो जाती है, अनित्य नित्यत्व को प्राप्त होता है और जो हम सबों के व्यवहार का एक उपकरण मात्र था, वह पूजा का उपकरण होकर अपने अन्तःकरण के जो प्रधान देवता हैं उनके अनुपम रत्न भण्डार में चिर संचित हो रहता है।"

यही सब बातें आज नलिनी के हृदय रूपी आकाश में बादल की तरह छा गई हैं। वह छत पर चुपचाप बैठकर इन्हीं बातों को मन ही मन सोच रही है। उसके मन में आज और बात सोचने की जगह नहीं। वह आज अपने को भी भूल बैठी है।

सभा से लौटते समय योगेन्द्र ने अक्षय से कहा—"सचमुच, तुमने बड़े योग्य वर का पता बताया है। यह तो संन्यासी जान पड़ता है। इसकी आधी बात भी मेरी समझ में न आई।"

अक्षय—"रोगी की अवस्था देखकर ही औषध की व्यवस्था की जाती है। नलिनी रमेश के ध्यान में डूबी रहती है। वह ध्यान संन्यासी के सिवा हम सबों के सदृश साधारण मनुष्य नहीं तोड़ सकेंगे। जब वक्तृता हो रही थी तब क्या तुमने नलिनी के चेहरे पर लक्ष्य न किया था?"

योगेन्द्र—"हाँ देखा था। उसे बहुत अच्छा मालूम होता था। यह उसका मुँह देखने से स्पष्ट विदित हुआ। परन्तु वक्तृता अच्छी लगने ही से वह वक्ता के गले में वरमाला डाल देगी—इस का कुछ निश्चय नहीं।"

अक्षय—"यही वक्तृता क्या हम सबों के मुँह से सुनने में किसी को अच्छी मालूम होती। योगेन्द्र! क्या तुम नहीं जानते? तपस्वी महात्माओं के ऊपर स्त्रियों का एक विशेष झुकाव होता है। संन्यासी के लिए पार्वती ने तपस्या की थी। कालिदास ने उसका एक काव्य ही बना डाला। मैं तुमसे सच कहता हूँ, तुम देवलोक से कोई वरला कर नलिनी के आगे खड़ा कर दो, वह रमेश के साथ मन ही मन उसको तौलेगी, रमेश की तुलना में कोई न ठहरेगा। सब उसकी आँखों में हलका जँचेगा। कमलनयन साधारण मनुष्यों में नहीं है। इसके साथ तुलना की बात उसके मन में आवेगी भी नहीं। और किसी युवक को नलिनी के सम्मुख करने से वह तुम्हारे उद्देश्य को तुरन्त समझ जायगी और उसका हृदय कभी उसे स्वीकार करने को राज़ी न होगा। अगर कमलनयन को किसी कौशल से यहाँ ला सको तो नलिनी के मन में किसी तरह का सन्देह न होगा। इसके बाद क्रमशः उस पर श्रद्धा उत्पन्न होने से, संभव है, किसी दिन उसके कण्ठ में वरमाला शोभा पावे।"

योगेन्द्र—"कौशल करना मैं नहीं जानता । सिर्फ़ कहना मेरे लिए सहज है । जो कहने की बात हो वह मुझसे कहो, कौशल की बात तुम जानो । किन्तु सच पूछो तो वर मुझे पसन्द नहीं ।"

अक्षय—"देखो योगेन्द्र ! तुम अपनी ज़िद्द के आगे सब बातों को मटियामेल मत करो । सब गुण एक साथ नहीं मिलते । जिस तरह हो, रमेश की चिन्ता नलिनी के मन से दूर कर देनी चाहिए । मेरे विचार के अनुसार चलोगे तो यह काम होना कुछ कठिन नहीं है ।"

योगेन्द्र—"तुम जो कहो, परन्तु कमलनयन को मैं एक प्रकार से मूर्ख ही समझता हूँ । ऐसे लोग से नाता जोड़ने में डर मालूम होता है । एक विपत्ति से छुटने जाकर दूसरी आफ़त में फँसना होगा ।

अक्षय—"भाई ! तुम अपने दोष से आप ही दुःख पा रहे हो । डाक्टर को देखकर तुम्हें डर होता है । रमेश के सम्बन्ध में तुम्हारा पहले कैसा ख़याल था । तुम्हारी समझ में वैसा लड़का और न था । तुम कहा करते थे, छल कपट किसे कहते हैं यह रमेश नहीं जानता है । दर्शन शास्त्र में तो वह दूसरा शङ्कराचार्य ही है । साहित्य में वह इस उन्नीसवीं शताब्दी के भीतर पुरुषरूप में सरस्वती का अवतार ही है । परन्तु मैं तो पहले ही उसे ताड़ गया था । मैंने इसी उम्र में ऐसे ढेर के ढेर आदर्श पुरुष देखे हैं । परन्तु मुझे उसमें बोलने की कोई सन्धि न थी । तुम सब जानते थे, मेरे सदृश अयोग्य, अपात्र व्यक्ति केवल महात्माओं से ईर्ष्या करना ही जानता है । हम सब में योग्यता ही क्या है । अस्तु, इतने दिन बाद अब तुम कुछ कुछ

समझने लगे हो। महापुरुषों की दूर से भक्ति करना अच्छा है, परन्तु उनके साथ बहन को ब्याह देना निरापद नहीं है। किन्तु "कण्टकेनैव कण्टकम्।" जब यही एक मात्र उपाय है तब इस बात को लेकर कहाँ तक गुण दोष की समालोचना करोगे।"

योगेन्द्र—"तुम जो हम सबों के पहले ही रमेश को पहचान गये, यह बात हज़ार बार कहोगे तो भी मैं विश्वास न करूँगा। तुम स्वभावतः रमेश को फूटी आँखों देखना नहीं चाहते थे। यह तुम्हारी असाधारण बुद्धि का ज्ञापक है। यह मैं नहीं मान सकता। जो कुछ हो। कला कौशल का प्रयोजन पड़े वह तुम कहोगे, मुझसे न होगा। सच पूछो तो कमलनयन को मैं पसन्द ही नहीं करता।"

योगेन्द्र और अक्षय दोनों जब घनानन्द बाबू के चायघर में आ पहुँचे तब उन्होंने देखा नलिनी घर के दूसरे द्वार से बाहर जा रही है। अक्षय समझ गया। नलिनी ने खिड़की से झाँक कर उसने रास्ते में आते देखा था। वह ज़रा हँस कर घनानन्द के पास आकर बैठा। चाय से भरा प्याला हाथ में लेकर बोला—"कमलनयन जो कुछ कहते हैं, हृदय से कहते हैं, इसलिए उनकी बात सहज ही सब के हृदय में गड़ जाती है। उनकी प्रभावशालिनी वक्तृता से किसका हृदय आकृष्ट नहीं होता?"

घनानन्द—"निःसन्देह वे एक योग्य पुरुष हैं।"

अक्षय—"केवल योग्यता ही नहीं, ऐसा सच्चरित्र कहीं देखने में नहीं आता।"

योगेन्द्र यद्यपि अक्षय के षड्यन्त्र में शामिल था, तथापि उससे न रहा गया। वह बोल उठा—"आफ़! सच्चरित्रता की बात क्या कहते हो, ऐसे साधु महात्माओं की सङ्गति से भगवान् हम सब की रक्षा करें।"

योगेन्द्र ने कल इसी कमलनयन की भूरि भूरि प्रशंसा की थी, और जो लोग इसके विरुद्ध भाषण करते थे, उन्हें निन्दक कह कर गालियाँ दी थीं।

घनानन्द—"योगेन्द्र! यह क्या कहते हो, राम राम! ऐसी बात मुँह से न निकालो। जो बाहर से देखने में अच्छे मालूम होते हैं वे भीतर के भी प्रायः अच्छे होते हैं। इस बात पर विश्वास कर मैं भले ही ठगा जाऊँ पर तो भी अपनी अल्प बुद्धि के गौरव रक्षार्थ साधुओं के ऊपर सहसा सन्देह नहीं कर सकता। कमलनयन बाबू ने जो सब बात अपनी स्पीच में कही है, वह सब कोई नहीं कह सकता। उन्हों ने अपनी आध्यात्मिक शक्ति के द्वारा जो सब बातें सोच निकाली थीं, वे मुझे बिलकुल नई जान पड़ीं। जो कपटाचारी होगा वह असली चीज़ कहाँ से देगा? जैसे सोना बनाया नहीं जाता, वैसे ये सब बातें भी बनाई नहीं जातीं। मैं चाहता हूँ, ख़ुद उनके पास जाकर उन्हें धन्यवाद दे आऊँ।"

अक्षय—"मुझे डर है, इनका पार्थिव शरीर शीघ्र नष्ट न हो जाय?"

घनानन्द घबरा कर बोले—"क्यों, इनका शरीर क्या अच्छा नहीं रहता?"

अक्षय—"अच्छा कैसे रहेगा, दिन रात अपने क्रियाकर्म में लगे रहते हैं, कुछ समय बचा भी तो वह शास्त्रचिन्ता ही में कट जाता है। शरीर के प्रति तो वे कभी दृष्टि नहीं देते।"

घनानन्द—"यह उनका भारी अन्याय है। शरीर रहने से सब कुछ हो सकता है—"धर्मार्थकाममोक्षाणां शरीरं साधनं परम्।"

ऐसे उपयोगी शरीर को नष्ट कर देने का अधिकार हम सबों का नहीं है। हम लोग आप ही अपने शरीर की रचना नहीं करते। जिन्होंने इस कलेवर को बनाया है, वे जब चाहें इसे तोड़ सकते हैं। यदि कमल बाबू कुछ दिन मेरे पास रहते तो ज़रूर ही मैं उनके स्वास्थ्य की व्यवस्था कर देता। ऐसे तो स्वास्थ्यरक्षा के कितने ही नियम हैं, जिनमें प्रधान—"

योगेन्द्र चुप न रह सका, वह उनकी बात काटकर बीच ही में बोल उठा—"बाबू जी, आप क्यों वृथा इतनी चिन्ता कर रहे हैं। कमलनयन बाबू का शरीर तो खूब हृष्ट पुष्ट है। उनका दिव्य शरीर देखकर आज मुझे इसका अच्छा ज्ञान हो गया कि साधुता से स्वास्थ्य का विशेष सम्बन्ध है। मैं भी चाहता हूँ, कुछ दिन साधुता के लिए यत्न करूँ।"

घनानन्द—"सुनो योगेन्द्र! अक्षय का कहना असङ्गत नहीं जान पड़ता। उसने जो कहा है, वह कुछ असम्भव नहीं। हमारे देश में बड़े बड़े नामी आदमी थोड़ी ही उम्र में मर जाते हैं, वे सब अपने शरीर की उपेक्षा करके देश की कितनी बड़ी हानि करते हैं यह मैं नहीं कह सकता। इस लिए जहाँ तक हो सके, इस बात को रोकना चाहिए। तुम कमलनयन को जैसा समझ रहे हो वह वैसा नहीं। वह सच्चा साधु है। उसके पास

आध्यात्मिक बल है। उसे अभी से सावधान कर देना चाहिए, जिसमें वह दैहिक बल की उपेक्षा न करे।"

अक्षय—"मैं उन्हें आपके पास बुला लाऊँगा। यदि आप उन्हें अच्छी तरह समझा दें तो कदाचित् वे समझ जायँ। मेरा अनुमान है, आप ने जो मृतासव परीक्षार्थ मुझको दिया था, वह आश्चर्य बलकारक है! जो लोग किसी तरह स्वास्थ्य खो बैठते हैं उनके लिए ऐसी अच्छी दवा और नहीं। यदि आप एकबार कमलनयन बाबू को—"

योगेन्द्र हठात् उठ खड़ा हुआ और बोला—"अक्षय, तुम मुझे बैठने न दोगे। लो मैं जाता हूँ।" यह कह कर योगेन्द्र चला गया।

बयालिसवाँ परिच्छेद

घनानन्द बाबू का शरीर जब पहले अच्छा था तब वे डाक्टरी और आयुर्वैदिक दवाओं का बराबर व्यवहार करते थे। अब उन्हें औषध सेवनका उतना उत्साह नहीं है। न वे अपनी अस्वस्थता का कभी किसी के आगे कुछ ज़िक्र करते हैं, बल्कि उसके छिपाने की चेष्टा करते हैं।

आज वे बेवक़्त जब आराम कुरसी पर लेटे ऊँघ रहे थे, तब सीढ़ी पर किसी के आने की आहट सुन नलिनी सिलाई के सब सामान को गोद से नीचे रख अपने भाई (योगेन्द्र) को सावधान कर देने के हेतु दरवाज़े तक गई। देखा, योगेन्द्र के साथ साथ कमलनयन बाबू आ रहे हैं। उसे सामने से भाग कर दूसरे घर में जाते देख योगेन्द्र ने पुकार कर कहा—"नलिनी डाक्टर बाबू आये हैं, आओ इनसे भेंट करो।"

नलिनी रुक गई। कमलनयन ने उसके मुँह की ओर न देख दृष्टि नीची किये ही नमस्कार किया। घनानन्द जाग उठे और नलिनी को पुकारा। वह उनके पास जा कर धीरे से बोली—"कमलनयन बाबू आये हैं।"

योगेन्द्र के साथ कमलनयन को घर में आते देख घनानन्द बाबू हड़बड़ा कर उठे और आदरपूर्वक उन्हें कुछ दूर आगे से ले आये और उमँग कर बोले—"आज मेरा बड़ा सौभाग्य है। आपने आज मेरे घर को पवित्र किया। नलिनी, तुम कहाँ

जाती हो, यहीं बैठो। कमलनयन बाबू! यह मेरी लड़की नलिनी है। हम दोनों उस दिन आपकी वक्तृता सुनने गये थे। सुन कर बहुत ख़ुश हुए। आपने त्याग के सम्बन्ध में जो सब चुनी चुनी बातें कहीं, वे मेरे हृदय-पट पर अङ्कित हो गईं। कहो नलिनी, जो बात इन्होंने आरम्भ में कही थी उसका भाव कैसा गम्भीर था? डाक्टर बाबू! आपसे मेरा एक अनुरोध है, आप कभी कभी यहाँ आकर मुझे दर्शन दें तो मेरा बड़ा उपकार हो। हम अब कहीं नहीं जाते, संयोग ही से कहीं आना जाना होता है। आप जब आवेंगे मुझे और लड़की को इसी घर में देखेंगे।

कमलनयन लज्जा से सिकुड़ी हुई नलिनी के मुँह की ओर एक बार देख कर बोले—"मैंने जो अपनी वक्तृता में वे सब सारगर्भित बातें कहीं उससे आप सब यह न समझें कि मैं एक महात्मा पुरुष हूँ। उस दिन स्कूल के विद्यार्थियों ने नहीं माना। वे मुझे धड़पकड़ कर ले गये। उसीसे मीटिङ्ग में कुछ बोल दिया। किसी का अनुरोध न मानने की मुझ में एक दम क्षमता नहीं है। किन्तु मैं सभा में इस ढङ्ग का लेक्चर दे आया हूँ कि वे अब दूसरी बार मुझसे अनुरोध न करेंगे। विद्यार्थी सब कहते हैं कि मेरी वक्तृता बारह आना उनकी समझ में न आई। योगेन्द्र बाबू! आप भी तो उस दिन सभा में उपस्थित थे। आप सतृष्ण नयनों से बार बार घड़ी की ओर देख रहे थे। मैं आपके मन का भाव समझ कर भी अपनी वक्तृता को शीघ्र समाप्त न कर सका, इसका आप रोष न मानें।"

योगेन्द्र—"वक्तृता का जो अंश मेरी समझ में न आया वह मेरी बुद्धि का दोष है, उसके लिए आप दोषी नहीं हो सकते।"

घनानन्द—"सब बात समझने की अभी तुह्मारी उम्र नहीं हुई है।"

कमलनयन "अभी सब बात समझने की ज़रूरत भी नहीं है।"

घनानन्द—"एक बात मुझे आपसे कहना है। ईश्वर ने आप को इस संसार में बहुत कुछ धर्मसम्बंधी काम करने के लिए भेजा है। आप अपने शरीर की स्वास्थ्यरक्षा पर ध्यान न दे उसका निरादर करें यह उचित नहीं। जो दाता हैं. उन्हें इस बात का सदा स्मरण रखना चाहिए कि मूल धन (पूँजी) को कभी नष्ट न करे, पूँजी खोने से दान करने की शक्ति व्यर्थ हो जाती है।"

कमलनयन—"यदि आपको मुझे अच्छी तरह जानने का अवसर मिलेगा तो आप देखेंगे, मैं संसार में कभी किसी वस्तु का अनादर नहीं करता। मैं इस संसार में न कुछ लेकर आया और न कुछ लेकर जाऊँगा। अपने ऊपर अनेक कष्ट उठाकर लोगों का कृपाभाजन बना हूँ। मैं इस तरह की नव्वाबी करना नहीं चाहता कि किसी को अनादर कर उसे नष्ट कर डालूँ। जो शख्स बना नहीं सकता वह बिगाड़ने का अधिकारी भी नहीं। कोई चीज़ आपही बिगड़ जाय पर जान कर उसको बिगाड़ना मैं अनुचित समझता हूँ?"

घनानन्द—"बहुत ठीक कहा है। आप ने इस तरह की कितनी बातें उस दिन अपनी वक्तृता में भी कही थीं।"

योगेन्द्र—"आप सब बैठिए, मैं जाता हूँ, एक ज़रूरी काम है?"

कमलनयन—"योगेन्द्र बाबू! मुझे क्षमा कीजिएगा।"

आप निश्चय जाने, किसी की प्रतिष्ठा भङ्ग करने का मेरा स्वभाव नहीं है। अच्छा तो मैं भी चलता हूँ। कुछ दूर तक आपके साथ साथ जाऊँगा।

योगेद्र—"नहीं नहीं आप बैठिए। आप मेरे व्यवहार पर कुछ लक्ष्य न कीजिए। मैं कहीं देर तक चुपचाप बैठा नहीं रह सकता। मेरा स्वभाव ही ऐसा है।

घनानन्द—"ठीक कहता है। कमलनयन बाबू! आप योगेन्द्र के लिए कुछ आशङ्का न कीजिए। उसका स्वभाव बड़ा विचित्र है। उसका कहीं जाना आना अपनी इच्छा पर निर्भर है। उसे बैठा रखना बड़ा कठिन है।"

योगेन्द्र के चले जाने पर घनानन्द ने पूछा—"कहिए, आप अभी कहाँ ठहरे हैं?"

कमलनयन ने हँसकर कहा—"मैं कहाँ का नाम बताऊँ, कहीं स्थिर होकर ठहरा होता तो बताता। मेरे जान-पहचान के बहुत लोग हैं। वे जिधर चाहते हैं मुझे खींच ले जाते हैं। मुझे भी यह बुरा नहीं लगता। किन्तु मनुष्य को शान्तभाव से रहने की भी बड़ी आवश्यकता है। इसी से योगेन्द्र बाबू ने मेरे लिए आप के मकान के पास ही एक घर का प्रबन्ध कर दिया है। स्थान बहुत निर्जन है।

इस संवाद से घनानन्द ने बड़ी ख़ुशी ज़ाहिर की। किन्तु यदि वे नलिनी की ओर लक्ष्य करके देखते तो,जानते, नलिनी का मुँह कुछ देर के लिए वेदना से विवर्ण हो गया। इसी पार्श्ववर्ती घर में रमेश रहता था। कमलनयन की बात से उसे यह बात स्मरण हो गई।

इतने में चाय तैयार होने की ख़बर पा कर सब कोई एक साथ चाय पीने के लिए नीचे आये। घनानन्द ने नलिनी से कहा—"बेटी! कमलनयन बाबू को एक प्याला चाय दो।"

कमलनयन—"नहीं, मैं चाय नहीं पीता।"

घनानन्द—"एक प्याला पीने में क्या हर्ज है। अगर चाय पीने की आदत न हो तो कुछ मेवा और मिठाई लेकर जल खायँ।"

कमलनयन—"मुझे क्षमा कीजिए।"

घनानन्द—"आप डाक्टर हैं। आप से अधिक मैं क्या कहूँगा। मध्याह्न भोजन के तीन चार घंटे बाद चाय नहीं तो थोड़ा गरम जल पीना हज़म के लिए विशेष उपकारी होता है, तो आपके लिए थोड़ी सी पतली चाय तैयार करा दूँ।"

कमलनयन बाबू ने नलिनी की ओर देखकर घनानन्द से कहा—"आप के मन में जो आशङ्का है वह ठीक नहीं। मैं आप के यहाँ की चाय पीने से नफ़रत करता हूँ यह आप न समझें। मैं पहले ख़ूब चाय पीता था। चाय की गन्ध से अब भी मेरा

चित्त उत्सुक होता है। आप सबों को चाय पीते देख मैं विशेष आनन्दित हो रहा हूँ। परन्तु यह बात शायद आप न जानतेहों कि मेरी माँ अत्यन्त आचारपरायणा हैं। मुझे छोड़ उनके सच्चा आत्मीय कोई नहीं है। आचारविरुद्ध कोई काम करके मैं उनके पास कैसे रह सकता हूँ। इसीलिए मैंने चाय पीना छोड़ दिया है। किन्तु आप सब जो चाय पीकर सुख पा रहे हैं, उसका अंश मैं भी ले रहा हूँ। आप के आतिथ्य से मैं आप्यायित हुआ।"

इसके पूर्व कमलनयन की बातचीत से नलिनी मनही मन चिढ़ रही थी। वह समझती थी, कमलनयन अपना ठीक ठीक परिचय उन सबों के निकट प्रकट नहीं करता। वह केवल बात बनाकर अपने को छिपाने की चेष्टा कर रहा है। किन्तु कमलनयन ने जब अपनी माता की बात कही तब नलिनी ने श्रद्धापूर्वक उनके मुँह की ओर देखा और माता का नाम लेते ही कमलनयन के मुँह पर जो एक निश्छल भक्ति का भाव उदित हुआ, यह देखकर नलिनी का हृदय दया से द्रवित हो उठा। उसकी इच्छा हुई कि कमलनयन की माता के सम्बन्ध में वह उनसे कुछ पूछे, किन्तु लज्जा से वह कुछ न पूछ सकी।

घनानन्द बाबू झट बोल उठे—"अहा! अगर यह बात मैं पहले से जानता होता तो मैं कभी आपसे चाय पीने का अनुरोध न करता। माफ़ कीजिएगा।"

कमलनयन ने ज़रा हँसकर कहा—"मैं चाय न पी सका इससे आप के स्नेह में क्या कभी अन्तर आ सकता है?"

कमलनयन के चले जाने पर नलिनी अपने पिता को लेकर ऊपर गई। वहाँ दोनों जने कमरे में बैठे। नलिनी मासिक पत्रिका से अच्छे लेख चुनकर पिता को पढ़कर सुनाने लगी। सुनते ही सुनते घनानन्द बाबू को नींद आगई। कुछ दिन से उनके शरीर में ऐसी सुस्ती आगई है जिससे वे देर तक कोई काम नहीं कर सकते।

तेतालीसवाँ परिच्छेद

कुछ ही दिनों में कमलनयन के साथ घनानन्दबाबू का परिचय घनिष्ठ हो गया। नलिनी ने पहले समझा था, कमलनयन के सदृश वेदान्ती लोगों से केवल आत्मज्ञान सम्बन्धी विषय का ही उपदेश मिल सकता है। ऐसे ज्ञानी मनुष्य के साथ सामान्य विषय में साधारण मनुष्य की भाँति बातें की जा सकती हैं यह उसे असम्भव सा प्रतीत होता था। उसकी यह भावना असङ्गत न थी, क्योंकि कमलनयन की बातचीत का ढङ्ग निराला था। वे हास्य-विनोद की बातों में सहसा मौन भाव का अवलम्बन करते थे।

एक दिन घनानन्द और नलिनी के साथ कमलनयन बाबू बातें कर रहे थे। ऐसे समय में योगेन्द्र आकर कुछ उत्तेजित हो बोला—"बाबूजी! क्या आपको मालूम नहीं, आजकल हमारे समाज के कितने ही लोग अपने को कमलनयन बाबू के शिष्य बताकर ब्रह्मज्ञानी बन बैठे हैं। इस बात को लेकर प्रदीप के साथ आज मेरा ख़ूब झगड़ा हुआ है।

घनानन्द ने मुसकुराकर कहा—"इसमें लज्जा की बात तो मैं कुछ नहीं देखता। जहाँ सभी गुरु हैं, चेला कोई नहीं, उस दल में सम्मिलित होते मुझे अवश्य संकोच होता है। वहाँ उपदेश देने के सिवा उपदेश पाने की आशा नहीं रहती।"

कमलनयन—"मैं भी आप ही के दल में हूँ। हम सबों को आप अपना चेला समझें। जहाँ हम लोगों को कुछ सीने की संभावना रहती है, हम लोग वहीं दौड़ करते हैं।"

योगेन्द्र ने अधीर होकर कहा—"नहीं, नहीं, बात अच्छी नहीं। कमलनयन बाबू! कोई आपका मित्र या आत्मीय न हो सकेगा। जो आपके पास जायगा वही आपका चेला बन कर अपने को ब्रह्मज्ञानी बनाने लगेगा। यह बात हँसी में उड़ा देने की नहीं है। आप क्या सब काण्ड कर रहे हैं। यह सब करना छोड़ दीजिए।"

कमलनयन—"कहिए मैं क्या कर रहा हूँ?"

योगेन्द्र—"यही जो सुना है, प्राणायाम करते हैं, सवेरे सूर्य की ओर घंटों तक देखा करते हैं। खाने पीने की वस्तुओं पर नाना प्रकार के आचार विचार करते हैं। इससे आपका दस लोगों में मेल नहीं खाता।"

योगेन्द्र की इस कठोर वाणी से नलिनी ने व्यथित होकर सिर नीचा कर लिया। कमलनयन ने हँस कर कहा—"योगेन्द्र बाबू, दस लोगों में मिलकर न रहना अवश्य दोष है। मैं नहीं चाहता कि यह दोष मुझ में रहे। परन्तु यह जानकर आश्चर्य होता है कि मैं सब की दृष्टि बचाकर चुपचाप जो कर्म घर के भीतर करता हूँ वह कैसे लोगों को मालूम हो जाता है, और लोग उसपर आलोचना क्यों करते हैं?"

योगेन्द्र—"जान पड़ता है, कदाचित् यह बात आपको मालूम नहीं। जिन लोगों ने उन्नति का सम्पूर्ण भार अपने ऊपर लिया

है, वे दूसरों के घर में कहाँ क्या होता है, इसका पता लगाना भी अपने कर्तव्य में गिनते हैं। और एक बात यह है कि, दस लोग जो काम नहीं करते, वह छिपकर करने से भी प्रकट हो जाता है। जो सब करता है, उस पर कोई दृक्पात नहीं करता। आप यही क्यों नहीं देखते, छत के ऊपर बैठकर जो आप जप, तप, न्यास, ध्यान करते हैं वह नलिनी की नज़र से भी छिपा नहीं रहा। वह बाबूजी से सब बात कह रही थी। उसने तो आपके सुधार का भार अपने ऊपर नहीं लिया है, तो भी वह आपके गुप्त रहस्य का पता लिये बिना नहीं रहती।"

नलिनी का मुँह लाल हो गया। वह मर्माहत होकर कुछ बोलना चाहती है, यह देखकर कमलनयन ने कहा—"आप कुछ भी संकोच न करें; अगर आप छत पर घूमने जाकर साँझ सवेरे मेरा नित्य कृत्य देखती हैं तो इसके लिए क्या आपको कोई दोषी बनावेगा? आँख का धर्म है, देखने से यदि आप दोषभागी हों तो हम सब भी इस दोष से नहीं बच सकते।"

घनानन्द—"नलिनी आपके नित्य कर्म के विषय में कुछ आपत्ति प्रकाश न करके श्रद्धापूर्वक आपकी साधन-प्रणाली के सम्बन्ध में मुझसे कुछ पूँछ रही थी।"

योगेन्द्र—मैं यह सब नहीं जानता। हम लोग इस संसार में जिस सीधी साधी चाल से जा रहे हैं, इसमें किसी तरह की विशेष असुविधा नहीं देखते। गुप्तरीति से अद्भुत साधन करके कुछ विशेष लाभ होगा, यह मेरे मन में नहीं आता, बल्कि इससे मन का सामञ्जस्यभाव नष्ट होता है और लोग झक्की हो जाते हैं। आप मेरी बात से क्रोध न करें। मैं एक अत्यन्त साधा-

रण मनुष्य हूँ। संसार में हम सबों का आसन सब से नीचा है। जो किसी तरह ऊंचे आसन पर जा बैठते हैं, वहाँ तक हम लोगों की हाज़िरी पहुँचने का एक मात्र उपाय उन्हें ढेला फेंक कर मारना है। मेरे जैसे असंख्य लोक हैं। इस· लिए यदि आप हम सबों को छोड़कर ऊँचे आसन पर जा विराजेंगे तो आपको असंख्य ढेलों की चोट सहनी पड़ेगी।

कमलनयन—"ढेले भी अनेक प्रकार के होते हैं। कोई अलग गिरता है और कोई शरीर का स्पर्श करता है। परन्तु उनसे बचने के भी अनेक उपाय हैं।"

अगर कोई कहे कि यह आदमी पागल है, जो काम न करने का वही करता है, लड़कपन करता है, तो कोई हानि की बात नहीं। किन्तु जब कहे कि यह गोसाईं गिरी करता है, योग-साधन करता है, गुरु बनकर चेलों का संग्रह करता फिरता है तब मुझे बड़ी हँसी आती है।"

योगेन्द्र—"मैं फिर आपसे विनय करता हूँ। आप मेरे कहने का बुरा न मानें। आप छत पर जाकर जो जी में आवे कीजिए। मैं उसमें बाधा देने वाला कौन? मेरा कहना इतना ही है कि साधारण सीमा के भीतर रहने से कोई बात नहीं खुलती। सब लोग जैसे चलते हैं वैसे ही चलना उचित है। नई चाल चलने हो से लोगों की भीड़ उमड़ पड़ती है। चाहे वह गाली दे या भक्ति करे, इससे कुछ आता जाता नहीं—किन्तु इस तरह भीड़ में रहकर जीवन बिताने में क्या सुख है?"

कमलनयन—"योगेन्द्र बाबू, आप चले कहाँ?"

मुझको मेरे घर की छत पर से नीचे उतार, सर्वसाधारण के सामने खड़ा कर भागने से न बनेगा?"

योगेन्द्र—"आज आपके साथ यथेष्ट वार्तालाप हुआ। अब ज़रा घूम आता हूँ।"

योगेन्द्र के चले जाने पर नलिनी सिर झुकाकर टेबुल के ढकने की झालर पर अकारण अत्याचार करने लगी। उस समय यदि उसके मुँह की ओर ध्यान से देखता तो उसके मुँह की आँखों में अवश्य आँसू भरा पाता।

नलिनी ने रोज़ रोज़ कमलनयन के साथ बातचीत करते करते अपने हृदय की मलिनता देख पाई और कमलनयन के मार्ग का अनुसरण करने के लिए व्यग्र हो उठी। विपद् की मारी बेचारी जब बाहर कोई अवलम्बन ढूँढे भी न पाती थी, तब कमलनयन ने उसके सामने एक नया संसार खड़ा कर दिया। उसका मन कुछ दिनों से ब्रह्मचारिणी की भाँति एक कठोर नियम पालन के लिए उत्सुक था क्योंकि नियम मन के लिए एक दृढ़ अवलम्बन होता है। नलिनी अब तक यह सब कुछ कर न सकी थी। लोग देख कर क्या कहेंगे, इस संकोच से उद्वेग को मन के भीतर किसी तरह दबाये चली जाती थी जब आज उसने कमलनयन के बताये योगसाधन के मार्ग का अनुसरण कर बड़ी नियम-निष्ठा के साथ निरामिष भोजन किया, तब उसके मन में तृप्ति हुई। एक तरह का शान्त भाव उसके चित्त पर छा गया। उसने अपने शयन-

गृह से विलास-सामग्री को दूर फेंक कर सिर्फ़ एक कुश की चटाई रहने दी। घर के मध्यभाग में जो एक मिट्टी का चबूतरा सा बना था उसे नलिनी अपने हाथ से लीप पोत कर साफ़ करती थी एक फूल डाली में कुछ फूल रक्खा रहता था। वह स्नान करके स्वेत वस्त्र पहन, बीच घर में चटाई बिछा कर बैठती थी। घर के सब जङ्गले और दरवाज़े खुले रहते थे, जिनसे वे रोक घर में हवा जाती आती थी, और प्रकाश भी आता था। वह उस प्रकाश और विशुद्ध वायु के द्वारा अपने अन्तःकरण को अभिषिक्त करके ईश्वर का स्मरण करती थी और उन पर फूल चढ़ाती थी। घनानन्द पूर्णरूप से नलिनी के साथ सहानुभूति प्रकट नहीं कर सकते थे, किन्तु नियम के पालन के द्वारा जो उसके मुँह पर एक प्रकार की प्रसन्नता का चिह्न देख पड़ता था, वह देख कर वृद्ध का मन स्नेह से विह्वल हो जाता था। कमलनयन के आने पर नलिनी और घनानन्द इसी मृत्तिका-निर्मित चबूतरे पर बैठ कर परस्पर धर्म कर्म की आलोचना करते थे।"

योगेन्द्र एक दम विद्रोही हो उठा। वह कहने लगा—"यह सब क्या हो रहा है। तुम लोगों ने मिल कर उपासना के द्वारा घर को पवित्र कर के भयङ्कर बना दिया। मेरे सदृश संसारी जीव को कहीं पैर रखने की जगह न रही।"

पहले योगेन्द्र की आक्षेप भरी बातों से नलिनी का हृदय क्रोध से भर जाता था। अब घनानन्द बाबू उसकी बात से बीच बीच में बिगड़ बैठते हैं किन्तु नलिनी कमलनयन के साथ योग देकर केवल शान्त भाव से हँसती है। अब नलिनी ने अपने मनसे राग द्वेष के झमेलों को किनारे कर एक अद्वैत-

भाव का अवलम्बन किया है। इस सम्बन्ध में लज्जा करना भी वह हृदय की दुर्बलता समझती थी। लोग उसके इस नये आचरण को आश्चर्य मान हँसी करते थे, उसकी नक़ल उतारते थे, यह जान कर भी वह कमलनयन के बताये मार्ग से विचलित नहीं होती और न उनके ऊपर से उसकी भक्ति का ह्रास ही होता था। वह अटल भाव से अपने कर्तव्य का पालन कर रही थी। किसी के उपहास की कुछ परवा न करके वह मन को सदा शान्त रखने की चेष्टा में लगी रहती थी।

एक दिन नलिनी प्रातःस्नान के अनन्तर उपासना करके अपने एकान्त गृह में खिड़की के सामने चुपचाप बैठी थी। इसी समय घनानन्द बाबू कमलनयन को लिए एकाएक वहाँ आये। नलिनी के हृदय में पूर्ण रूप से शान्ति छाई थी। उसने खड़ी हो पहले कमलनयन को साष्टाङ्ग प्रणाम कर के पीछे पिता को प्रणाम किया और उन दोनों के चरण की धूल अपने मस्तक में लगाई। कमलनयन सकुच गये। घनानन्द ने कहा—"आप घबराते क्यों हैं? नलिनी ने अपना कर्तव्य किया है।"

और दिन कमलनयन इतने सबेरे यहाँ नहीं आते थे। इसीसे नलिनी ने बड़ी उत्कण्ठा के साथ उनके मुँह की ओर देखा।

कमलनयन ने कहा—"काशी से ख़बर आई है, मेरी माता का शरीर कुछ अधिक अस्वस्थ हो गया है, इस लिए आज साँझ की ट्रेन से काशी जाना चाहता हूँ। दिन ही में यहाँ के सब कामकाजों को पूरा कर डालना चाहिए, यही सोच कर आज सबेरे ही आप सबसे मिलने आया हूँ।"

घनानन्द—मैं अभी आप से और क्या कहूँ, आपकी माता बीमार हैं। ईश्वर उन्हें शीघ्र अच्छी कर दें। इतने दिन जो आप के सत्सङ्ग से हम सब सुखी हुए हैं, आपने जो अपने उपदेश द्वारा हमारा उपकार किया है, इस ऋण का परिशोध हमसे किसी काल में न हो सकेगा। हम आपके पास सदा ऋणी बने रहेंगे।"

कमलनयन—"यह आपकी उदारता है। पर सच पूछिए तो आप लोगों ने जो मेरा उपकार किया है वह मैं कभी न भूलूँगा। पड़ौसियों को अपने आश्रयवर्ती का जैसा कुछ यत्न साहाय्य करना चाहिए वह तो आपने किया ही है, इसके सिवा जिस गम्भीर विषय को लेकर मैं इतने दिन मन ही मन चिन्तित रहा करता था आप सबों ने अपनी श्रद्धा के द्वारा उसे उत्तेजित कर दिया। मेरी भावना और साधना तभी सफल होगी जब उसके द्वारा आप लोगों का कुछ विशेष उपकार हो सकेगा।"

घनानन्द—"आपका आगमन ऐसे अवसर पर, जब कि हम सब एक अगाध चिन्ता में डूबे थे, बड़ा लाभकारी हुआ। आप न आते, आप से भेंट न होती तो हमारी क्या दशा होती। आपको पाकर हम सचमुच कृतार्थ हुए। हम बड़े एकान्त प्रिय हैं। इसीसे हम जनसमाज में अधिक नहीं जाते आते। किसी सभा में जाकर वक्तृता सुनने के भी हम विशेष उत्साही नहीं हैं। हम जायँ तो जा भी सकते हैं किन्तु नलिनी को कहीं ले जाना बड़ा ही कठिन है। वह संकोच वश कहीं जाना नहीं चाहती। पर उस दिन का आश्चर्य आपसे क्या कहूँ। जैसे ही योगेन्द्र के मुँह से सुना कि आप वक्तृता देंगे, हम दोनों

बड़े उत्साह के साथ ठीक समय पर वहाँ जा उपस्थित हुए। ऐसी घटना कभी न घटी थी। आप इन बातों को मन में रखिएगा। आप इसीसे समझ लेंगे कि हम लोगों के साथ यह भाव सदा बना रहे, यह ईश्वर को भी मन्ज़ूर है, नहीं तो ऐसी घटना कदापि नहीं घटती।"

कमलनयन—"आप भी इस बात का स्मरण रखिएगा कि आपको छोड़ मैंने अपने जीवन का रहस्य किसीसे नहीं कहा है। आपका निश्छल भाव देख कर ही मैंने अपने हृदय का कपाट आपके लिए खोल दिया। आप से मेरे मन की कोई बात छिपी नहीं रह सकती?

नलिनी इन दोनों का सानुनय वार्तालाप चुपचाप सुन रही थी और जँगले की राह से जो धूप मेज़ पर आकर पड़ रही थी, उसी की ओर देख रही थी। कमलनयन जब जाने को उद्यत हुए, तब नलिनी ने बड़ी नम्रता से कहा—"आपकी माता के आरोग्य होने का समाचार जिसमें हम सबों को भी मालूम हो, ऐसा यत्न कीजिएगा। यह कह कर उसने फिर उन्हें साष्टाङ्ग प्रणाम किया।

———

चवालीसवाँ परिच्छेद

इधर कई दिनों से अक्षय ग़ायब था। कमलनयन के काशी चले जाने पर आज वह योगेन्द्र के साथ घनानन्द बाबू के चायघर में दिखाई देता है। उसने निश्चय किया था कि नलिनी का जितना मुझ पर विराग का भाव है उतना ही रमेश पर उसका अनुराग है। रमेश का स्मरण होते ही नलिनी अक्षय को घृणा की दृष्टि से देखती थी। आज अक्षय ने देखा— "नलिनी के मुखमण्डल पर शान्ति छाई है, अक्षय को देख कर उसके मुँह का भाव कुछ भी न बदला। वह ज्यों का त्यों बना रहा नलिनी ने स्वाभाविक प्रसन्नता दरसाती हुई अक्षय से पूछा—"आज आपको बहुत दिन में देखा। क्या आप घर पर न थे?"

अक्षय—"था तो घर ही पर, परन्तु क्या मैं प्रतिदिन देखने का पात्र हूँ?"

नलिनी ने हँस कर कहा—"वह पात्रता न रहने से यदि आप कहीं जाना आना नहीं चाहते तो हम सब कितनी ही ऐसी हैं जिन्हें घर के भीतर छिपकर रहना ही उचित है।"

योगेन्द्र—"अक्षय ने सोचा था, वह अकेला विनय करके आपही सम्पूर्ण यश का भाग लेगा। परन्तु नलिनी ने सारी मनुष्य जाति की ओर से विनय करके अक्षय को अखण्ड यश

का भागी होने न दिया। किन्तु इस सम्बन्ध में मुझे कुछ कहना है। हमारे जैसे साधारण मनुष्य ही प्रतिदिन देखे सुने जाते हैं। और जो असाधारण व्यक्ति हैं उनका तो संयोग हो से कभी दर्शन होता है। वे किसी से विशेष सम्पर्क रखना नहीं चाहते, इसी से वे जङ्गल, पहाड़ और गुफाओं में घूमते फिरते हैं।"

योगेन्द्र की यह व्यङ्ग भरी बात नलिनी के हृदय में जा खटकी उसने इस बात का कुछ जवाब न देकर तीन प्याला चाय तैयार करके घनानन्द बाबू, अक्षय और योगेन्द्र के आगे रख दो। योगेन्द्र ने कहा—"मालूम होता है, तुम चाय न पिओगी।" वह योगेन्द्र से कठोर उत्तर पाने की बात जानकर भी बड़े शान्त-भाव से बोली—"नहीं, मैंने चाय पीना छोड़ दिया।"

योगेन्द्र—"जान पड़ता है इस दफ़े विधिपूर्वक तपस्या आरम्भ हुई है। चायकी पत्ती में शायद आध्यात्मिक गुण विशेष नहीं है, जो कुछ है, सो सब हरीतकी में। क्या आफ़त है! मेरी बात मनो तो यह सब आडम्बर करना छोड़ दो। अगर एक प्याला चा पीने से तुम्हारा तप नष्ट हो जाय तो तुम्हारा घर में रहना ठीक नहीं। किसी पहाड़ की गुफा में जाकर योग साधो जो शीघ्र सिद्धि प्राप्त हो। ऐसा कठिन व्रत ठानकर तुम समाज में कैसे रह सकोगी?"

यह कहकर योगेन्द्र ने झट उठ कर अपने हाथ से एक प्यालाचाय तैयार करके नलिनी के आगे रख दिया। उसने चायके प्याले में हाथ न लगाकर घनानन्द बाबू से कहा—"आज आप केवल चाय पी कर रह गये, कुछ खाया नहीं?"

घनानन्द बाबू ने टूटे स्वर में कहा—"बेटा, मैं तुमसे सच कहता हूँ मुझे इस टेबुल पर कुछ खाना पीना अच्छा नहीं लगता। योगन्द्र का कठोर भाषण मैं बड़ी देर से चुप चुप सुन रहा हूँ। कुछ बोलने का साहस नहीं होता। क्या जानें, इस बुढ़ापे में क्या मुँह से निकल जाय। पीछे पछताना पड़ेगा।" नलिनी ने पिता की कुरसी के पास खड़ी होकर कहा—"बाबू जी आप क्रोध न कीजिए! भैया, मुझसे चाय पीने कहते हैं, इसमें क्या हर्ज है। मैं तो इसके लिए ज़रा भी रञ्ज नहीं मानती। आप कुछ खाइए। ख़ाली पेट चाय पीने से आप का स्वास्थ्य बिगड़ जाता है। यह मैं जानती हूँ।"

नलिनी ने एक तश्तरी में मेवा मिठाई लाकर पिता के सामने रख दी। घनानन्द धीरे धीरे खाने लगे। नलिनी फिर अपनी कुरसी पर आकर और योगेन्द्र की दी हुई चाय पीने को उद्यत हुई। अक्षय ने झट उसके पास आकर कहा—"माफ़ कीजिए, यह प्याला मुझे दे डालिए। मेरा प्याला ख़ाली हो गया।

योगेन्द्र ने बड़ी फुर्ती से उठकर नलिनी के हाथ से चाय का प्याला लेकर घनानन्द से कहा—"मुझसे भारी अपराध हुआ, क्षमा करें।"

घनानन्द कुछ उत्तर न दे सके। उनकी आँखों में आँसू भर आये और देखते ही देखते वे टपक पड़े।

योगेन्द्र अक्षय को लेकर धीरे धीरे घर से बाहर हो गया। घनानन्द बाबू जल पान कर उठे, और नलिनी का हाथ पकड़ कर थरथराते पैरों से ऊपर के कमरे में गये। उसी दिन कुछ रात बीते घनानन्द के पेट में दर्द होने लगा। वृद्ध बेचारे दर्द के

मारे छट पटाने लगे। डाक्टर बुलाया गया। डाक्टर ने परीक्षा करके देखा, और कहा, इनका पित्ताशय बिगड़ गया है। अभी रोग प्रबल नहीं हुआ है इसी समय ये पश्चिम किसी स्वास्थ्य कर जगह में जाकर बरस छः महीने रहें तो इनका स्वास्थ्य ठीक हो जायगा। शरीर सबल हो जाने पर फिर यहीं लौट आवेंगे।"

दर्द निवृत्त होने और डाक्टर के चले जाने पर घनानन्द ने नलिनी से कहा—"चलो बेटी, कुछ दिन हम सब काशी सेवन कर आवें।"

"जो रोगी को भावे, सो वैद बतावे।" नलिनी ने उनके कहने के पहले ही इस बात को सोच रक्खा था। कमलनयन के चले जाने से नलिनी अपने साधनसम्बन्ध में दुर्बलता का अनुभव करने लगी। कमलनयन के रहने से उसको आह्निक क्रिया में बड़ा सहारा मिलता था। उसके मुँह पर जो एक स्थिर निष्ठा और शान्तिसहित प्रसन्नता का भाव झलकता था वह नलिनी के विश्वास को सदा बिकसित किये रहता था। कमलनयन की अनुपस्थिति में उसका उत्साह कुछ मलिन सा हो गया था। इसी से जब उसने काशी जाने की बात सुनी तब बड़ी उत्कण्ठा के साथ कहा—"हाँ बाबू जी, वहीं चलिए।"

दूसरे दिन जाने की कुछ तैयारी करते देख योगेन्द्र ने पूछा—"यह क्या हो रहा है?"

घनानन्द—"हम पश्चिम जाना चाहते हैं।"

योगेन्द्र—"पश्चिम में कहाँ?"

घनानन्द—"घूमते फिरते किसी जगह कुछ दिन टिक रहेंगे। विशेष कर जो स्थान मेरे लिए स्वास्थ्य कर होगा वहाँ रहने की सम्मति डाक्टर ने दी है।"

वे जो काशी जा रहे थे, यह बात एकबार ही उन्होंने योगेन्द्र से छिपा डाली।

योगेन्द्र—"मैं इस बार आपके साथ न जा सकूँगा। मैंने जो हेडमास्टरी के लिए दरख़ास्त भेजी है, उसके उत्तर की प्रतीक्षा कर रहा हूँ।"

पैंतालीसवाँ परिच्छेद

रमेश दूसरे दिन सवेरे ही इलाहाबाद से गाज़ीपुर लौट आया। तब सड़क पर अधिक लोग न थे। कुहरा छाये रहने के कारण मार्ग का अगला हिस्सा दिखाई न देता था। रमेश मोटे कपड़े का ओवरकोट पहन गाड़ी में बैठा अपने घर की ओर चला। न मालूम उसकी छाती क्यों धड़कने लगी।"

सदर फाटक पर जाकर रमेश गाड़ी से उतर पड़ा। सोचा, गाड़ी का शब्द सुनकर कमला ज़रूर ही बरामदे में खड़ी होगी। रमेश अपने हाथ से कमला के गले में एक बहुमूल्य चन्द्रहार पहराने के लिए इलाहाबाद से मोल लिए आया है। रमेश ने उसको कोट के पाकेट से निकाल कर अपने हाथ में ले लिया।

द्वार के सामने आकर रमेश ने देखा, मोहन बरामदे में बेख़बर सोया हुआ है। घर के द्वार सब बन्द हैं। रमेश ठिठक कर खड़ा हो रहा। उच्चस्वर से पुकारा, "मोहन!" सोचा, इस पुकार से घर के भीतर रहने वाली की भी नींद टूटेगी। किन्तु इस तरह नींद तोड़ना रमेश के मन में बड़ा ही दुःखद हुआ। क्योंकि वह तो आधी रात से ही जगा है।

दो तीन बार पुकारने से भी मोहन की नींद न टूटी। आख़िर उसे हाथ से गाना पड़ा। मोहन आँख मलता हुआ उठा और कुछ देर भौंचक सा हो रहा।

रमेश ने पूछा—"बहू जी घर में हैं?"

मोहन ने पहले रमेश की बात को जैसे सुना ही नहीं, सुना भी तो समझा या नहीं, इसमें सन्देह था। अनन्तर उसने चौंक कर कहा—"हाँ, वे घर ही में हैं।" यह कह कर वह फिर लेट गया और सोने की तैयारी करने लगा।

रमेश ने बाहर से किवाड़ को ढकेला। ढकेलते ही किवाड़ खुल गई। भीतर जाकर उसने घर घर में घूम कर देखा, कोई कहीं नहीं। तो भी एक बार ज़ोर से पुकारा—"कमला!" कहीं से कुछ उत्तर न मिला। बाहर के बगीचे में अशोक के पेड़ तक जाकर घूम आया। रसोई घर में, नौकरों के रहने के घर में, अस्तबल में खोज आया, कहीं कमला न मिली। तब कुछ कुछ धूप निकल आई, कौवे काँय काँय कर चारों ओर घूमने लगे। हाते के भीतर वाले कुवे से पानी लेने के लिए सिर पर घड़ा लिए महल्ले की दो स्त्रियाँ आती हुई दिखाई देने लगीं। सड़क के दूसरे किनारे एक छोटे से घर के भीतर एक अधेड़ स्त्री ने विचित्र स्वर से गीत गाकर चक्की पीसना आरम्भ किया।

रमेश ने फिर कोठी के भीतर आकर देखा, मोहन गाढ़ी निद्रा में निमग्न है। तब यह झुक कर दोनों हाथों से मोहन को ख़ूब ज़ोर से झँझोरने लगा। देखा, उसके मुँह से ताड़ी की वास आती थी।

अधिक ज़ोर से हिलाये जाने पर मोहन का होश ठिकाने आया। वह हड़बड़ा कर उठ खड़ा हुआ। रमेश ने फिर पूछा—"कहो मोहन, बहू जी कहाँ हैं?"

मोहन—"बहूजी हवेली में हैं।"

रमेश—"हवेली में तो नहीं हैं।"

मोहन—"कल तो यहीं आईं थीं।"

रमेश—"यहाँ आने पर फिर कहाँ गईं थीं?"

मोहन—जी हाँ, कहकर रमेश के मुँह की ओर देखने लगा।

इसी समय ख़ूब चौड़े पाढ़ की लम्बी धोती पहने चादर ओढ़े आँखें लाल किये उमेश आ पहुँचा। रमेश ने पूछा—"उमेश, तुम्हारी माँ जी कहाँ हैं?"

उमेश—"माँ जी तो कल से यहीं हैं?"

रमेश—"तुम कहाँ थे?"

उमेश—"माँ जी ने कल साँझ को मुझे श्रीपति बाबू के घर थियेटर देखने को भेजा था।

गाड़ीवान ने आकर कहा—"बाबू, मेरा भाड़ा?"

रमेश झटपट उसी गाड़ी में चढ़कर चक्रवर्ती के घर पर गया। वहाँ जाकर देखा, उस घर के सभी लोग चञ्चल हैं। रमेश ने समझा, शायद कमला बीमार हो गई है।' परन्तु यह बात न थी। कल साँझ होने के कुछ ही देर बाद से उमा एका-एक चिल्ला कर रोने लगी, उसका चेहरा स्याह हो गया, और उसको हाथ पैर फेंकते देख सब लोग डर गये। उसकी दवाई के पीछे घर के सब लोग हैरान थे। रात भर सब जगे रहे। रमेश ने सोचा, उमाकी बीमार होने की बात सुनकर कल ज़रूर

कमला यहाँ आई होगी। उसने विपिन से कहा—"ज्ञान पड़ता है, इसी से कमला उमा के कारण बड़ी बेचैन हो पड़ी है।"

कमला कल की रात में यहाँ आई या नहीं, यह विपिन को ठीक ठीक मालूम न था। इसी से उन्होंने रमेश की बात में बात मिलाकर कहा—"हाँ, वे उमा को बहुत प्यार करती हैं इसी से उनके मनमें बड़ी चिन्ता लगी थी किन्तु डाकृर ने कहा है, चिन्ता करने को कोई बात नहीं। लड़की जल्द अच्छी हो जायगी।"

जो कुछ हो, विपिन की बात से रमेश का मुँह प्रफुल्लित हो गया, परन्तु कल्पना की घटा ने थोड़ी ही देर में फिर उसे ढक लिया। वह सोचने लगा—"उन दोनों की भेंट में अवश्य कोई दैवी दुर्घटना घटेगी।

ऐसे अवसर में उमेश भी रमेश की नई कोठी से यहाँ आ पहुँचा। वह बे रोक भीतर जाता आता था। इस लड़के पर अन्नपूर्णा का कुछ स्नेह भाव भी था। अन्नपूर्णा उसे अपने घर की ओर आता देख उमा की नींद टूट न जाय इस भय से आप ही झट घर के बहार आई।

उमेश ने पूछा—"माँ जी कहाँ हैं?"

अन्नपूर्णा चकित हो बोली—"क्यों, कल तुम्हीं तो उसे यहाँ से ले गये हो। सन्ध्या होने के उपरान्त शिवरनिया को उसके पास भेजने की बात थी। बच्ची को एकाएक क्या होगया, इसी से उसको न भेज सकी।"

उमेश ने मुँह उदास कर के कहा—"उस मकान में तो वे नहीं हैं।"

अन्नपूर्णा ने व्यग्र होकर—"यह क्या कहते हो ? कल की रात में तुम कहाँ थे ?"

उमेश—"माँ ने मुझे रात को वहाँ रहने न दिया। उस मकान में जाते ही उन्होंने मुझको श्रीपति बाबू के यहाँ थिएटर देखने को भेजा दिया।"

अन्न०—"तुम्हारी अक्ल तो देखी गई। मोहन कहाँ था ?"

उमेश—"मोहन तो कुछ कहता ही नहीं। कल वह खूब ताड़ी पीकर बदहोश हो पड़ा था।"

अन्नपूर्णा—"जाओ, जाओ शीघ्र बाबू को बुला लाओ।"

विपिन को आते ही अन्नपूर्णा ने कहा—"हाय ! क्या हो गया !"

विपिन का मुँह सूख गया। उसने घबराहट के साथ पूछा—"क्या हुआ ?"

"कमला कल अपनी कोठी में गई थी। आज खोजने से भी वह कहीं नहीं मिलती।"

विपिन—"क्या कल रात में वे यहाँ नहीं आई थीं ?"

अन्न०—"नहीं, बच्ची को बीमार देख उसे बुलाना चाहा था, पर यहाँ था कौन जिसे भेजता ? क्या रमेश बाबू आये ?"

विपिन—"रमेश बाबू उन्हें उस मकान में न पाकर यही समझे बैठे हैं कि कमला यहीं है। वे तो यहीं आये हैं।"

अन्नपूर्णा—"जाइए, जाइए, शीघ्र रमेश बाबू को साथ ले कर कमला की खोज कीजिए। उमिया अभी सोई है। वह अच्छी है।"

विपिन और रमेश फिर उसी गाड़ी में बैठ कर नई कोठी को लौट आये। कमला के विषय में मोहन से जिरह पर जिरह करने लगे। बहुत शङ्का समाधान के अनन्तर जो ख़बर मिली वह यही कि—"कल कुछ दिन रहते कमला अकेली गङ्गा की ओर गई थी। मोहन ने उसके साथ जाना चाहा था। कमला ने बतौर इनाम के एक रुपया उसके हाथ में दे कर उसे लौटा दिया। वह पहरा देने के लिए सदर फाटक पर आ बैठा। उसी समय तुरन्त का उतारा ताड़ी का घड़ा लिये एक पासी उसके सामने से जा रहा था। इसके बाद कहाँ क्या हुआ वह मोहन कुछ न बता सका। जिस रास्ते से कमला को गङ्गा तट जाते देखा था वह मोहन ने दिखा दिया।

रमेश, विपिन और उमेश तीनों उसी रास्ते से कमला की खोज में चले। उमेश मातृ-हीन मृग-शावक की भाँति व्याकुल हो चकित दृष्टि से चारों ओर देखने लगा। गङ्गा के किनारे पहुँचकर तीनों खड़े हुए। वहाँ चारों ओर मैदान था। सफ़ेद बालू प्रभातकालिक धूप में चाँदी की तरह चमक रही थी। कहीं कोई देख न पड़ा। उमेश ख़ूब ज़ोर से चिल्ला चिल्ला कर पुकारने लगा—"माँ, कहाँ हो, दर्शन दो।" प्रतिध्वनि मात्र दूर से लौट कर उसके कान में आ पड़ी। कहीं से कुछ उत्तर न मिला।"

खोजते खोजते उमेश की दृष्टि हठात् कुछ दूर आगे एक उजली सी चीज़ पर जा पड़ी। उसने दौड़कर नज़दीक से

जाकर देखा, "पानी के एकबार ही निकट एक सफ़ेद रूमाल में बँधा हुआ कुञ्जियों का गुच्छा था।" "कहो, कहो, वह क्या है?" कहते कहते रमेश भी वहाँ आया और देखते ही पहँचान लिया वह कमला की कुञ्जियों का गुच्छा था।"

जिस जगह वह कुञ्जी पड़ी थी, उसके कुछ ही दूर आगे गीली मिट्टी के ऊपर गङ्गा के जल पर्यन्त छोटे दो पैरों का गहरा चिह्न भी देख पड़ा। कुछेक पानी के भीतर कोई एक वस्तु झलक रही थी। रमेश की दृष्टि उस पर जा पड़ी। उसने पानी में से निकाल कर देखा, सोने की चेन थी। यह रमेश का दिया उपहार था।

इस प्रकार जब कमला के गङ्गा की धार में प्रवेश करने के अनेक चिह्न पाये तब उमेश से न रहा गया। वह "माँ, माँ" पुकार कर गङ्गाजी की धार में धस पड़ा। वहाँ जल अधिक न था, उमेश पागल की तरह बार बार पानी में डुबकी मार तलप्रदेश में हाथ से चारों ओर कममा को ढूंढ़ने लगा। मिट्टी और पानी को रौंद कर एक कर डाला।

रमेश हतबुद्धि की तरह किनारे खड़ा था। विपिन बाबू ने उमेश से कहा—"तुम यह क्या करते हो? निकल आओ।"

उमेश मुँह से पानी फेंकते फेंकते बोला—"नहीं रे दादा! मैं पानी से बाहर न रहूँगा. मैं भी इसी में डूब मरूँगा।" अरी माँ, तुम कहाँ गईं। मुझे भी अपने साथ क्यों न लेती गईं। इस प्रकार विलाप कर के वह रोने लगा।"

विपिन डर गया। परन्तु उमेश तो मछली की तरह पानी में तैरना जानता था। उसके लिए पानी में डूब कर आत्महत्या करना कठिन था। जब वह डुबकी लगाते थक गया तब अछता पछता कर पानी से निकल कर किनारे की बालू पर लोटने और रोने लगा।

विपिन ने मूर्ति की तरह खड़े रमेश को छूकर कहा—"रमेश बाबू! चलिए, यहाँ खड़े रहने ही से क्या होगा। एकबार पुलिस में इसकी ख़बर देनी चाहिए। वे लोग भी खोज देखें। शायद कहीं कुछ पता लग जाय।"

अन्नपूर्णा के घर में उस दिन चूल्हा न जला, दिन भर सब लोग कमला के वियोग से कातर हो सोचसागर में डूबे रहे। नाविकगणों ने नाव लेकर गङ्गा की धार में बहुत दूर तक जाल गिरा कर देखा। पुलिस के कर्मचारी चारों ओर कमला का अनुसन्धान करने लगे। स्टेशन में जाकर विशेष रूप से खोज की गई। कमला के सदृश रंग रूप, अवयव, अवस्था वाली कोई बङ्गरमणी रात की गाड़ी से कहीं नहीं गई।

उसी दिन अपराह्ण में चक्रवर्ती जी आये। कई दिनों से कमला का व्यवहार और आद्योपान्त सब वृत्तान्त सुनकर उन्होंने निश्चय किया कि कमला ने गङ्गा जी में डूबकर अवश्य आत्महत्या कर डाली।

शिवरनिया ने कहा—"इसी से बच्ची कल रात में इस तरह रोने लगी जैसे उसे किसी तरह की हवा लग गई हो। उसकी अच्छी तरह झाड़ फूक करा दीजिए।"

रमेश बेचारा मारे सोच के अधमरा सा हो गया। वह क्या सोच कर इलाहाबाद से चला था और यहाँ आकर क्या होगया! इसके मन का सब मनोरथ मन ही में रह गया। मानो उसके जीवन का एक भारी अवलम्ब खो गया। वह सिर पर हाथ रखकर कमला के सम्बन्ध की सब बातें मन ही मन सोचकर व्याकुल होने लगा—"एक दिन यह कमला इसी गङ्गा की धार से बाहर होकर मेरे पास आई और फिर इसी गङ्गा की धार में पूजा से पवित्र फूल की भाँति अन्तर्हित हो गई।"

जब सूर्यास्त हुआ तब रमेश फिर उसी ओर गङ्गा के किनारे आया। जहाँ कुञ्जियों का गुच्छा पड़ा था, वहाँ खड़ा होकर उसी पैर के चिह्न को टकटकी बाँध कर देखने लगा। इसके बाद पैर से जूता निकाल, धोती को घुटने से ऊपर चढ़ा कुछ पानी के भीतर पैठा और डब्बे से सोने का चन्द्रहार निकाल कर गङ्गा की धार में फेंक दिया।

रमेश गाज़ीपुर से अब किधर को गया यह ख़बर चक्रवर्ती के घर वालों को न लगी।

छियालीसवाँ परिच्छेद

अब रमेश के पास कोई काम न रहा। उसके मन में बारबार यह तरङ्ग उठने लगी कि इस जीवन में अब वह कोई काम न करेगा। कहीं स्थिर होकर न रहेगा। योंही घूमता फिरेगा। नलिनी की चिन्ता उसके मन में न होती थी, यह नहीं। होती थी ज़रूर, परन्तु वह उसे व्यर्थ जान अपने मन को दूसरी ओर खींच ले जाता था और यही सोच कर धीरज धरता था कि वज्राहत वृक्ष फूले फले उपवन के बीच बीच स्थान पाने की आशा क्यों करे।

रमेश अब एक जगह स्थिर होकर न रह सका। वह देश भ्रमण की इच्छा से निकल पड़ा। किसी स्थान में अधिक दिन न रहा। उसने नाव पर चढ़कर काशी के घाट की और दिल्ली के कुतुबमीनार के ऊपर चढ़कर शहर की शोभा देखी। आगरा जाकर चाँदनी रात में ताज़ महल देखा। अमृतसर में गुरुदरबार देखकर राजपूताने की ओर गया। वहाँ आबू पहाड़ की चोटी पर जो एक प्राचीन मन्दिर है, देखा। इसी तरह उसने घूम घूम कर कई देश देखे। पर उसके मन में कहीं शान्ति न मिली।

आख़िर जब उसका जी देशाटन से उचट गया तब वह एक लम्बी साँस ले कलकत्ते का टिकट लेकर रेलगाड़ी में सवार हुआ।

कलकत्ते पहुँच कर रमेश कोलूटोला स्ट्रीट के भीतर प्रवेश न कर सका। वहाँ जाकर वह क्या देखेगा, क्या सुनेगा, इसका क्या निश्चय। इस चिन्ता ने उधर जाने से उसे रोक रक्खा। उसके मन में केवल यही एक आशङ्का होने लगी कि वहाँ एक भारी परिवर्तन हो गया है। एक दिन वह उस गली के मोड़ तक जाकर लौट आया। दूसरे दिन साँझ को रमेश ज़बर्दस्ती अपने को खींचकर नलिनी के मकान के सामने ले गया, देखा घरके सभी दरवाज़े बन्द हैं। भीतर कोई है, ऐसा लक्षण न देख पड़ा। मकान की निगरानी के लिए रामधन दरवान ज़रूर होगा, यह सोचकर उसने रामधन को पुकारा और बार बार फाटक पर धक्का दिया। पर कहीं से कुछ उत्तर न मिला। चन्द्रमोहन नाम का एक पड़ोसी अपने घर के बाहर बैठकर तम्बाकू पी रहा था—उसने स्वर पहचान कर कहा—"कौन! रमेश बाबू! हैं तो अच्छी तरह? इस मकान में अभी कोई नहीं है।

रमेश—"वे सब कहाँ गये हैं, आप को मालूम है?"

चन्द्रमोहन—"यह तो मैं ठीक ठीक नहीं कह सकता, पर इतना जानता हूँ कि वे पश्चिम गये हैं।"

रमेश—"कौन गया है?"

चन्द्रमोहन—"घनानन्द बाबू और उनकी लड़की।"

रमेश—"आप ठीक जानते हैं, उनके साथ और तो कोई नहीं गया है?"

चन्द्रमोहन—"हाँ, यह ठीक जानता हूँ। जाने के समय उन्होंने मुझसे भेट की थी।"

तब रमेश ने अधीर होकर कहा—"मैंने एक आदमी से सुना है, कमलनयन नाम के कोई एक बाबू उनके साथ गये हैं।"

चन्द्रमोहन—"यह बात आप से किसी ने झूँठ कही है। कमलनयन बाबू आपके इसी मकान में कई दिनों तक थे। इन सबों के जाने के दो चार दिन पूर्व ही वे काशी चले गये।

रमेश ने चन्द्रमोहन से प्रश्न करके कमलनयन बाबू के सम्बन्ध में सिर्फ़ इतनी ही बातें जानीं—"उनका नाम कमलनयन उपाध्याय है। वे पहले रङ्गपुर में डाक्टरी करते थे। अब माँ के साथ कुछ दिन से काशी में रहते हैं।"

रमेश ने कुछ देर चुप रह कर पूछा, आप कह सकते हैं, योगेन्द्र कहाँ हैं?"

चन्द्रमोहन—"योगेन्द्र नवद्वीप के एक जमींदार के द्वारा स्थापित हाई स्कूल के हेडमाष्टर के पद पर नियुक्त होकर विष्णुपुर गये हैं?"

चन्द्रमोहन ने पूछा—"रमेश बाबू! आप को बहुत दिनों से नहीं देखता था—आप इतने दिन कहाँ थे?"

रमेश ने परिचय छिपाने का कोई कारण न देखा, कहा—"वकालत करने की इच्छा से गाज़ीपुर गया था।"

चन्द्रमोहन—"क्या अब वहीं रहना होगा?"

रमेश—"नहीं, वहाँ का रहना मुझे पसन्द नहीं। अब कहाँ स्थिर होकर रहूँगा, यह अभी नहीं कह सकता।"

रमेश के चले जाने के कुछ ही देर बाद अक्षय वहाँ आया। योगेन्द्र जाते समय कभी कभी अपना मकान देखने का भार अक्षय को दे गया था। अक्षय जो भार अपने ऊपर लेता है, उस की रक्षा करने में वह कभी आलस्य नहीं करता। इसीसे वह और काम रहते भी जब तब योगेन्द्र का मकान देखने आता है। मकान के दो पहरेदारों में एक भी हाज़िर रह कर पहरा देता है या नहीं, इसकी जाँच पड़ताल कर के चला जाता है।"

चन्द्रमोहन ने अक्षय से कहा—"रमेश बाबू अभी कुछ देर होती है यहाँ से गये हैं।"

अक्षय—"सच कहिए, क्या करने आये थे?"

चन्द्र—"यह तो मैं नहीं जानता। घनानन्द बाबू का हाल पूछते थे। वे ऐसे दुबले पतले हो गये हैं कि सहसा उनको पहचानना कठिन है। यदि वे दरबान को न पुकारते तो मैं उन्हें नहीं पहचान सकता।"

अक्षय—"अब वे कहाँ रहते हैं, इसकी कुछ ख़बर मिली?"

चन्द्र—इतने दिन गाज़ीपुर में थे। अब वहाँ नहीं रहेंगे। कहाँ रहेंगे, इसका अभी कुछ निश्चय नहीं किया गया है।"

अक्षय—"ओफ़!" कह कर अपना काम करने लगा।

रमेश अपने घर आकर सोचने लगा—"क्या ही आश्चर्य-घटना है। उधर मेरे साथ कमला का और इधर कमलनयन के के साथ नलिनी का मिलन, यह तो एक बार ही उपन्यास की

तरह—सो भी कुलिखित उपन्यास! इस प्रकार उलट फेर कर देना विधाता की भाँति निरङ्कुश रचयिता के लिए असम्भव नहीं, जो भीरु लेखक काल्पनिक उपन्यास लिखने का साहस नहीं करते, वही ऐसे अद्भुत काण्ड को सङ्घटित कर अपने उद्दण्ड लेख का परिचय देते हैं।" रमेश ने सोचा, इस बार जब वह अपने जीवन के कठिन समस्या-जाल से निकल गया है तब अधिकतर सम्भव है कि अदृष्ट अपने इस जटिल उपन्यास के शेष अध्याय में रमेश के लिए शोकजनक उपसंहार न लिखेगा।

विष्णुपुर के ज़मींदार ने योगेन्द्र के रहने के लिए अपने दो मंज़ले के पास ही एक मामूली घर दिया था। वह घर में सबेरे के पहर एक अख़बार पढ़ रहा था। उस दिन रविवार था, इस लिए स्कूल जाने की चिन्ता न थी। इसी समय बाज़ार के एक आदमी ने उसके हाथ में एक चिट्ठी दी। लिफ़ाफ़े पर का अक्षर देख कर वह बड़े आश्चर्य में पड़ गया। लिफ़ाफ़ा खोल कर देखा, रमेश ने लिखा है—"मैं विष्णुपुर की एक दूकान में भेट करने की इच्छा से बैठा हूँ। मुझे तुमसे कई एक बातें कहनी हैं।"

योगेन्द्र एकाएक कुरसी से उठ खड़ा हुआ। यद्यपि वह एक दिन रमेश को अपमानित करने के लिए बाध्य हुआ था, तो भी उस बाल्यबन्धु को इस दूर देश में भेट करने के लिए उपस्थित देख वह स्थिर न रह सका। उसके मन में रमेश के प्रति जो कुभाव था वह एक दम जाता रहा। बल्कि उसका हृदय आनन्द से उमग उठा। कौतूहल भी कुछ कम न हुआ। विशेष कर जब नलिनी वहाँ न थी, तब रमेश के द्वारा किसी तरह का अनिष्ट होने की आशङ्का क्या की जाती है?

योगेन्द्र पत्र लाने वाले को साथ ले स्वयं रमेश से भेंट करने को चला। देखा, वह एक बनिये की दूकान में एक ख़ाली कनस्टर को लौट कर उसी पर चुपचाप बैठा है। दूकानदार ने ब्राह्मण के हुक्के में तम्बाकू भर कर उन्हें देना चाहा, किन्तु चश्माधारी बाबू हुक्का नहीं पीते, यह सुन कर वणिक ने उन्हें शहर के सभ्य मनुष्यों में गिना इसी से उन दोनों में कुछ विशेष बार्तालाप न हुआ।"

योगेन्द्र ने लपक कर रमेश का हाथ पकड़ कर कहा—"तुम इतने दिन कहाँ थे? बिना भेंट मुलाकात किये ही चुपचाप ग़ायब हो गये। कहाँ गये सो कुछ पता नहीं? हम लोगों को दुविधा में डाल कर क्या उस तरह जाना मुनासिब था? ख़ैर, आज तुमने स्वयं आकर दर्शन दिये। बड़ा अच्छा किया। यहाँ दूकान में क्यों बैठे? चलो मेरे घर पर चलो।"

रमेश कुछ उत्तर न देकर मुस्कुराया। रास्ते में योगेन्द्र, जो उसके जी में आया, बकता हुआ जाने लगा और कहा, "सुनो, रमेश बाबू! तुम चाहे जो कहो, जो होनहार है वह होता ही है। हम लोग विधि के कर्तव्य को नहीं जान सकते। उसकी गति विचित्र है। वह कब क्या करेगा, यह कोई नहीं जान सकता। उसने जो मुझको शहर में जन्म देकर मनुष्य बनाया, सो क्या इसी लिए कि मैं एक दिन ऐसे निठल्ले गाँव में मारा मारा फिरूँ? रमेश ने चारों ओर देख कर धीरे से कहा, क्यों, जगह तो कुछ बुरी नहीं है।"

योगेन्द्र—"बुरी नहीं है, परन्तु—"

रमेश—"परन्तु का अर्थ यही कि यहाँ लोगों की भीड़ नहीं।"

योगेन्द्र—"सच कहते हो। मैं ऐसे निर्जन देश को पसन्द नहीं करता। एक भी ऐसा व्यक्ति नहीं मिलता, जिससे कुछ गप करूँ।"

रमेश—"गप की बात जो कहो। परन्तु मन की शान्ति के लिए तो—"

योगेन्द्र—"यह बात मुझसे मत कहो। कई दिनों से ऐसी निरन्तर शान्ति लेकर कण्ठगत प्राण हो रहा है। मैं अपने साध्यभर इस शान्तिभङ्ग के लिए त्रुटि नहीं करता। सेक्रेटरी के साथ हाथा पाई होने का उपक्रम हो रहा है। ज़मींदार महाशय को मेरे स्वभाव का परिचय मिल गया है। वे सहसा मेरे कामों में दख़ल देने न आवेंगे। वे मुझसे रोज़ रोज़ अँगरेज़ी अख़बार पढ़ाकर अपनी ख़िदमत कराना चाहते थे। किन्तु मैं स्वतन्त्र चित्त का मनुष्य हूँ। मुझ पर कोई दबाव डालकर काम नहीं ले सकता। यह बात मैंने अच्छी तरह उन्हें झलका दी है। यह जगह मेरे रहने लायक़ नहीं। तो भी जो यहाँ हूँ, यह अपने मन से नहीं। यहाँ के ज्वायन्ट साहब मुझे बहुत चाहते हैं। इसी भय से ज़मींदार महाशय मुझे हटा नहीं सकते, नहीं तो वे कभी मुझे यहाँ से भगा देते। मैं जिस दिन गज़ेट में देखूँगा, ज्वायन्ट की बदली होती है। उसी दिन समझूँगा, मेरी हेडमास्टरी की इति श्री हुई। सच पूछो तो यहाँ विरला ही कोई मेरा हितचिन्तक होगा। ऐसे लोगों की ही संख्या अधिक होगी जो मेरी ओर अच्छी निगाह से देखते तक नहीं।"

योगेन्द्र के वासस्थान में आकर रमेश एक कुरसी पर बैठा। योगेन्द्र ने कहा—"नहीं, अभी बैठने न दूँगा। मैं जानता हूँ, प्रातःस्नान का तुम्हें भारी रोग है, उसे निबटा आओ।" तब तक मैं पानी गरम होने का बर्तन आग पर चढ़ा देता हूँ। आज अतिथि की कृपा से दूसरीबार भी चाय पीने का सौभाग्य प्राप्त होगा।

इस प्रकार आलाप, आहार और विश्राम में सारा दिन बीत गया। रमेश जो बात कहने के लिए यहाँ आया था, योगेन्द्र ने दिन भर में एकबार भी वह कहने का अवकाश न दिया। सन्ध्या के अनन्तर भोजन करके दोनों दो आराम कुरसी पर बैठे। कुछ दूर पर गीदड़ों के बोलने का शब्द सुनाई दिया। झिल्लियों के शब्द से अँधेरी रात की निस्तब्धता भङ्ग हो रही थी।

रमेश ने कहा—"योगेन्द्र, तुम जानते हो, मैं तुमसे क्या कहने यहाँ आया हूँ? एक दिन तुमने जो मुझसे प्रश्न किया था उस प्रश्न के उत्तर देने का तब उपयुक्त समय न था। आज उत्तर देने में अब कोई बाधा नहीं।"

यह कहकर रमेश कुछ देर चुप हो रहा। तिसके बाद उसने शुरू से आख़िर तक जो सब घटनायें घटी थीं सब कह सुनाईं। योगेन्द्र ने चुपचाप ध्यानपूर्वक रमेश की सब बातें सुनीं।

जब रमेश का कहना समाप्त हुआ तब योगेन्द्र ने एक लम्बी साँस लेकर कहा—"यह सब बात यदि तुम उस दिन कहते तो मैं विश्वास न करता।"

रमेश—"विश्वास करने का जो कारण तब था, वह अब भी है। उसके लिए तुमसे मेरी यही प्रार्थना है कि, मैंने जिस गाँव में विवाह किया था, एकबार तुमको वहाँ जाना होगा। उसके बाद वहाँ से मैं तुमको कमला के मामा के घर भी ले जाऊँगा।"

योगेन्द्र—"मैं कहीं न जाऊँगा। मैं इसी आरामकुरसी पर अटलभाव से बैठकर तुम्हारी सब बातों का अक्षरशः विश्वास करूँगा। मैंने कभी तुम्हारे कथन पर अविश्वास न किया। केवल दैवयोग से तुम पर एकबार अवश्य सन्देह उत्पन्न हुआ। उसके लिए मैं तुम से क्षमाप्रार्थी हूँ।"

यह कह कर योगेन्द्र आरामकुरसी से उठकर रमेश के पास आया। रमेश भी झट खड़ा हो गया। दोनों बाल्यबन्धु बड़े स्नेह से परस्पर प्रेमपूर्वक मिले। रमेश कुछ कहा चाहता था, परन्तु उसका गला भर आया। कुछ देर के बाद उसने अपने स्वर को परिष्कृत करके कहा—"मैं न मालूम कहाँ से दैवी कुचक्र में पड़कर एक ऐसे मिथ्या जाल में जा फँसा, जिससे बाहर होने का कोई उपाय नहीं सूझता था। अब मैं उससे निकल गया। अब किसी से कोई बात छिपाने की न रही। इससे मेरे प्राण पलट आये, मैं जिस दौर्भाग्य दोष से म्रियमाण था, वह दूर हुआ। किन्तु कमला ने क्या जानकर, क्या समझ कर, आत्महत्या कर डाली। यह आज तक मैंने न जाना और अब जानने की कोई संभावना भी नहीं है। सच तो यह है, यदि मृत्यु हम दोनों के बीच इस तरह का फैसला न कर देती तो अन्त में हम दोनों किस दुर्गति में जा पड़ते, यह अनुभव कर अब भी हृदय काँप उठता

है। एक दिन मृत्यु के मुख से जो समस्या अकस्मात् बाहर हो पड़ी थी वह फिर उसी मृत्यु के मुँह में एक दिन विलीन भी हो गई।

योगेन्द्र—"कमला ने निश्चय ही आत्महत्या कर डाली, इसे सत्य समझ एकदम निश्चिन्त होकर न बैठो। ख़ैर, जो हो, तुम्हारा एक ओर का झंझट तो साफ़ हो गया। मैं अब कमलनयन की बात सोचता हूँ।"

इसके बाद योगेन्द्र कमलनयन की बात लेकर उलझ पड़ा उसने कहा—"देखो रमेश, मैं वैसे मनुष्य को अच्छा नहीं समझता। जिसे अच्छा नहीं समझता, उसे पसन्द भी नहीं करता। किन्तु बहुत लोगों को समझ में अपनी समझ के खिलाफ़ देखता हूँ। कितने ही लोग बेसमझे किसी की तारीफ़ करने लग जाते हैं। जो बात उनकी समझ में नहीं आती, उसी को वे पसन्द करते हैं। जो लोग योगाभ्यास का ढकोसला दिखा कर अपने को ब्रह्मज्ञानी ख्यात करते फिरते हैं, उन्हीं का चेला बनने में लोग अपना गौरव समझते हैं। इसी से नलिनी का मुझे ज्यादा डर है। जब मैंने देखा, उसने चाय पीना छोड़ दिया है, मछली मांस भी नहीं खाती, आक्षेप की कोई बात सुनकर उसकी आँखों में पहले की तरह आँसू नहीं छल छलाते। बल्कि वह मुस्कुरा कर चुप हो रहती है तब मैंने समझा, यह लक्षण अच्छा नहीं। अब तुम्हारी सहायता से उसके उद्धार में कुछ भी विलम्ब न होगा। यह मैं बख़ूबी जानता हूँ। इसलिए तैयार हो, हम तुम दोनों उस संन्यासी के विरुद्ध यात्रा करेंगे।"

रमेश ने हँस कर कहा—"यद्यपि मैं वीर पुरुष नहीं हूँ तथापि तुम्हारे साथ चलने को प्रस्तुत हूँ।"

योगेन्द्र—"अच्छा, मेरे बड़े दिन की छुट्टी आ ले।"

रमेश—"उसमें तो अभी देरी है। तब तक मैं अकेला अग्रसर होऊँ तो क्या हर्ज है?"

योगेन्द्र—"नहीं, नहीं, यह बात न होगी। तुम दोनों का विवाहसम्बन्ध मैंने ही तोड़ा था। इसलिए मैं अपने हाथ से उसका प्रतीकार करूँगा तुम जो आगे जाकर मेरे इस शुभ कार्य का भाग हरण करोगे, यह मैं न होने दूँगा छुट्टी के तो अब दस ही दिन बाक़ी हैं।"

रमेश—"तो इस अरसे में मैं एकबार—"

योगेन्द्र—"नहीं, नहीं, वह सब बात मैं कुछ सुना नहीं चाहता। दस दिन तुमको मेरे ही यहाँ रहना होगा। यहाँ कलह मचाने वाले जो लोग थे, उन सबों को मैंने एक एक कर हटा दिया। अब गप शप करके मन बहलाने के लिए एक मित्र की आवश्यकता हो पड़ी है। ऐसे अवसर में तुमको छोड़ने को जी नहीं चाहता। यहाँ इतने दिनों से सन्ध्या समय केवल गीदड़ों का शब्द सुनने ही का सौभाग्य प्राप्त था। इसी से अब तुम्हारा कोमलकण्ठ-स्वर मुझे वीणा से भी बढ़कर प्रिय मालूम होता है। हा! मेरी दशा ऐसी शोचनीय हो गई!"

सैंतालीसवाँ परिच्छेद

चन्द्रमोहन से रमेश की ख़बर पाकर अक्षय के मन में अनेक चिन्ताओं का उदय हुआ। वह सोचने लगा—"क्या मामला है, कुछ मालूम नहीं होता। रमेश गाज़ीपुर में वकालत करता था—इतने दिन अपने को एकदम छिपाये था। अब ऐसी कौन घटना घटी जिससे वहाँ की प्रेक्टिस करना छोड़ फिर साहस पूर्वक कोलूटोला स्ट्रीट में आकर अपने को ज़ाहिर करने के लिए उपस्थित हुआ। घनानन्द बाबू जो काशी में हैं, यह ख़बर किसी दिन कहीं से इसे मिल ही जायगी और ज़रूर यह वहाँ कुछ दिन में उनसे जा मिलेगा।" अक्षय ने निश्चय किया कि यही दो एक दिन में वह गाज़ीपुर जाकर रमेश का सब हाल बूझ आवेगा और इसके बाद वह एकवार काशी जाकर घनानन्द बाबू से भी भेंट करेगा।

एक दिन अक्षय चुपचाप कलकत्ते से चल दिया। अगहन की पूरनमासी के दिन दोपहर के बाद हाथ में एक बैग लिये गाज़ीपुर आ पहुँचा। पहले उसने बाज़ार में तलाश किया, "रमेश बाबू नाम के एक नये बँगाली वकील का मकान किधर है?" कितने ही लोगों से पूछा पर किसी ने रमेश बाबू के मकान का कुछ पता न बताया। रमेश बाबू का नाम बाज़ार में किसी को मालूम तक न था। जब बाज़ार में उसके मकान का पता न लगा, तब वह कचहरी की तरफ़ रवाना हुआ। कच-

हरी बरख़ास्त होने पर वहाँ पहुँचा। एक बँगाली वकील गाड़ी पर चढ़े चले जा रहे थे। अक्षय ने उनसे पूछा—"महाशय! रमेशचन्द्र चौधरी नाम के एक नये वकील गाज़ीपुर में आये हैं। उनका मकान किस महल्ले में है, आप जानते हों तो कृपा कर बता दीजिए।"

अक्षय को उनसे ज्ञात हुआ, "रमेश इतने दिन चक्रवर्ती जी के घर में ही ठहरा था। अब वहाँ है या नहीं, यह उन्हें मालूम नहीं। उसकी स्त्री कुछ दिन से ला पता है, शायद वह गङ्गाजी में डूब कर मर गई।"

अक्षय वहाँ से सीधे चक्रवर्तीजी के घर की ओर चला। वह मन ही मन सोचता जाता था, इसबार रमेश की सब गुप्त बात प्रकट हो जायगी। स्त्री बेचारी तो मर ही गई है। अब वह निःसंकोच हो नलिनी के पास अपनी सत्यता प्रमाणित करने की चेष्टा करेगा कि किसी समय भी उसके पत्नी न थी। नलिनी की जो अवस्था बीत रही है, उससे अधिक तर सम्भव है कि वह रमेश की बात पर कभी अविश्वास न करेगी। "जो लोग बाहर से धर्म्मनीति का डंका लेकर घूमते फिरते हैं वे भीतर से बड़े भयानक होते हैं," इसकी आलोचना करके अक्षय मन ही मन अपने प्रति विशेष श्रद्धा का अनुभव करने लगा।

चक्रवर्तीजी के पास जाकर अक्षय ने जब रमेश और कमला की खोज की तब चक्रवर्तीजी का शोक उछल पड़ा। वे अपने शोकाश्रु को न रोक सके। उनकी आँखों से झर झर आँसू गिरने लगे। उन्होंने कहा, "जब आप रमेश बाबू के विशेष

मित्र हैं, तब आप मेरी धर्मस्वरूपा कमला को भी अवश्य ही अपनी बहन के बराबर समझते रहे होंगे। कुछ ही दिनों की भेंट मुलाक़ात से मैं नहीं जानता था कि वह मेरी बेटी नहीं है। पर क्या कहूँ! दो दिन के लिए वह अपनी माया फैला कर मेरे हृदय में सदा के हेतु तीव्र वेदना देकर इस दुनिया से चल बसेगी यह मैं न जानता था।"

अक्षय ने मुँह उदास करके कहा—"ऐसी घटना क्योंकर घटी, यह कुछ भी मेरी समझ में नहीं आता। जान पड़ता है, रमेश कमला के साथ अच्छा व्यवहार न करता था।"

चक्रवर्ती—"आप बुरा न मानिएगा—आपके रमेश को मैं आज तक न पहचान सका। यों तो बाहर से वह बड़ा ही सज्जन देख पड़ता है, किन्तु उसके मन में क्या सब बातें भरी हैं? वह क्या सोचता है, क्या करता है—यह कुछ भी समझ में नहीं आता। कमला सी सुशीला स्त्री का वह क्या समझ कर अनादर करता था, यह मैं आज तक न जान सका। कमला जैसी सती लक्ष्मी! अहा! मेरी लड़की के साथ उसका सगी बहन से भी बढ़कर स्नेह हो गया था, तब भी उसने अपने स्वामी के विरुद्ध कभी कुछ न कहा। मेरी लड़की बीच बीच में समझ जाती थी कि कमला के मन में बड़ा कष्ट हो रहा है, किन्तु आख़िरी दिन तक भी वह अन्नपूर्णा से अपने कष्ट की बात न बोली। असह्य कष्ट पाने पर ऐसी स्त्री आत्महत्या के सिवा और कर ही क्या सकती है? वह बात याद आने से कलेजा फटता है। फिर मैं ऐसा भाग्य का छोटा! ऐसा मेरा दौर्भाग्य कि मैं तब इलाहाबाद चला गया था, नहीं तो बहू जी क्या कभी वैसा काम कर सकतीं?"

दूसरे दिन सबेरे अक्षय चक्रवर्ती को साथ ले रमेश का घर देखता हुआ गङ्गातट घूमने गया। घर लौटकर उसने चक्रवर्ती से कहा—"देखिए, महाशय! कमला ने जो गङ्गा में डूबकर आत्महत्या की," इस बात को आप लोग जितना सच समझते हैं, मैं उतना नहीं समझता।

चक्रवर्ती—"आप क्या समझते हैं?"

अक्षय—"मैं जहाँ तक समझता हूँ। वे घर छोड़कर कहीं चली गई हैं। हम लोगों को चाहिए कि उनकी अच्छी तरह खोज करें।"

चक्रवर्ती हठात् उत्तेजित होकर बोल उठे—"आप ठीक कहते हैं। यह कुछ असम्भव नहीं।"

अक्षय—"यहाँ से क़रीब ही काशी तीर्थ है। वहाँ एक मेरे बड़े स्नेही मित्र हैं। हो सकता है, कमला ने उनके पास जाकर आश्रय लिया हो।"

चक्रवर्ती ने आशान्वित होकर कहा—"रमेश बाबू ने तो मेरे आगे उनका कभी ज़िक्र न किया था। यदि मैं जानता होता तो क्या अभी तक यों चुपचाप बैठा रहता, कब न खोज किये रहता?"

अक्षय—"तो एकबार चलिए, हम आप दोनों काशी चलें। पश्चिम की सब जगह आपकी देखी सुनी है। आप अच्छी तरह कमला का पता लगा सकेंगे।"

चक्रवर्ती ने बड़े उत्साह से इस प्रस्ताव को स्वीकार किया। अक्षय जानता था, नलिनी उसकी बात का सहज ही विश्वास न करेगी। इसलिए सबूत में साक्षी स्वरूप चक्रवर्ती को साथ लेता गया।

अड़तालीसवाँ परिच्छेद

शहर के बाहर कैन्टोनमेन्ट के हाते के भीतर एक मकान भाड़े पर लेकर घनानन्द बाबू काशी-वास कर रहे हैं।

काशी पहुँचते ही इन्हें ख़बर मिली कि कमलनयन की माता कल्याणी को पहले केवल ज्वर और खाँसी थी, अब न्यूमोनिया हो गया है। बुख़ार की हालत में भी वे इस जाड़े के समय नित्य प्रातःस्नान का नियम निबाहे जातीं थीं, इसी से उनकी बीमारी बहुत बढ़ गई है।

नलिनी दिन रात कल्याणी की सेवा शुश्रूषा में हाज़िर रहती थी, उसके कई दिनों के अविश्रान्त प्रयत्न करने के बाद कल्याणी की हालत कुछ अच्छी हुई। किन्तु तब भी वह निहायत कमज़ोर थी। स्वयं उठ बैठ नहीं सकती थी। अत्यन्त आचार विचार के कारण पथ्यपानी के सम्बन्ध में नलिनी से कुछ सहायता न ली गई। इसके पूर्व कल्याणी किसी के हाथ का छुआ भोजन न खाती थी, अपने हाथ से रसोई बनाती थी। अब कमलनयन उनका पथ्यपानी बनाकर देने लगे। भोजन के सम्बन्ध में माता की सब सेवा-टहल कमलनयन को अपने हाथ से करनी पड़ती थी। इससे उद्विग्न होकर कल्याणी जब तब बोलने लगी—हाय! मैं क्यों जी गई? मेरी मिट्टी उठ जाती तो अच्छा होता। जान पड़ता है, विश्वेश्वर ने तुम सबों को कष्ट देने ही के लिए मुझे रोक रक्खा है।"

कल्याणी ने अपने लिए कठोर आचरण ठाना था। परन्तु वह दूसरे को आचारी के रूप में देखना नहीं चाहती थी, और न वह यह चाहती थी कि कोई उसके पास अभव्य वेश में आवे या कोई वस्तु उसके समीप बेतरतीब रक्खो जाय। यह बात नलिनी ने कमलनयन बाबू के मुँह से सुनी थी, इस कारण वह बड़े यत्न से कल्याणी के चारों ओर साफ़ सुथरा किये रहती थी और घरद्वार की सजावट पर भी विशेष ध्यान रखती थी। वह आप भी कल्याणी के पास कभी अभव्य वेश में न आती थी। अपनी फुलवारी से प्रतिदिन फूल तोड़ कर लाती थी और कल्याणी की रोगशय्या के पास उन फूलों को भाँति भाँति से सजाती थी।

कमलनयन ने माता की सेवा के लिए एक दासी रखने की कई बार चेष्टा की, परन्तु इनकी माँ ने इसे अस्वीकार किया। इनका जी नहीं चाहता था कि वे अन्तकाल में शूद्री के हाथ से अपनी सेवा करावें। चौका-वर्तन करने और बाज़ार से सौदा वगैरा ख़रीद कर लाने के लिए टहलू और टहलुनी अवश्य थी; किन्तु वे खास कर अपनी सेवा के लिए एक अलग नौकर रखना फ़जूल समझती थीं, जिस गोपाल की माँ ने बचपन में उन्हें पाला पोसा था, जबसे वह मर गई, तबसे वे कठिन रोग के समय भी किसी दासी को पङ्खा झलने या हाथ पाँव छूने नहीं देतीं।

उनका स्वभाव बड़ा ही कोमल था। वे छोटे छोटे सुन्दर बच्चों को बहुत प्यार करती थीं। जब वे दशाश्वमेध घाट में प्रातःस्नान कर के शिवलिङ्ग पर जल फूल चढ़ाती हुई घर को लौटती थी तब रास्ते में जो छोटा बालक मिल

जाता उसे खिलौना, मिठाई और पैसा देती थीं। इससे वे सब बालक उनके वशीभूत हो उनके पीछे पीछे उनके घर तक आते थे और जब तब वे उनके घर के आस पास खेलते फिरते थे। यह देख कर कल्याणी बहुत प्रसन्न होती थीं। दूसरे जब वे बाज़ार में थोड़े दाम की कोई अच्छी चीज़ देखती थीं तब वह अपने काम की न होने पर भी ख़रीद लेती थीं। किस वस्तु को पाकर कौन ख़ुश होगा, इसे सोच कर वे उन वस्तुओं को उपहार स्वरूप जहाँ तहाँ भेज देतीं थीं, इससे उनको बड़ी ख़ुशी होती थी। कभी कभी उनके दूर के नातेदार भी इस तरह का कोई उपहार डाकद्वारा पाकर चकित होते थे। उनके पास एक आबनूस की लकड़ी का सन्दूक़ था। वे उसी में अपने पसन्द की सब चीजें रखती थीं। उन्होंने मन में ठीक कर रक्खा था, जब नई बहू घर आवेगी तब यह सब वस्तु उसे दूँगी। उन्होंने अपनी पतोहू के स्वरूप की मन ही मन कल्पना कर रक्खी थी। जब वे आँख मूँदती थी, तब उन्हें मालूम होता था, जैसे उनकी परम सुन्दरी नई पतोहू उनके घर को अपनी रूपराशि से उज्वल कर रही है, वे उसे अपने हाथ से सिङ्गारतीं और भूषणवसन पहिराती हैं। इस भावना में कभी कभी उनका शरीर आनन्द से पुलकित हो जाता था।

वे तपस्विनी की भाँति रह कर समय बिताती थीं। सारा दिन उनका पूजा पाठ में बीत जाता था। एक समय थोड़ा सा दूध और फलमूलादि खा कर रहती थीं। किन्तु आचार विचार के सम्बन्ध में कमलनयन की इतनी बड़ी निष्ठा वे जी से पसन्द न करती थीं, उन्हें बेटे का नियम संयम देख कष्ट होता था। वे कहती थीं, "पुरुषों को इतना आचार-विचार

करने की क्या ज़रूरत ? पुरुषों को वे एक बड़े लड़के की तरह समझती थीं। खाने पीने और घूमने फिरने में लड़के को नित्य नियम का पालन कैसा। पुरुष के आचार विचार पर वे जब तब दयार्द्र होकर कहती थीं—"पुरुषों से ऐसे कठोर नियम का पालन कैसे हो सकेगा ?" अवश्य ही धर्म की रक्षा सब को करनी चाहिए किन्तु त्रिकाल स्नान और हविष्य भोजनादि का नित्य नियम आदि आचार पुरुषों के लिए नहीं है।" उन्होंने अपने मन में यही सिद्धान्त कर रक्खा था। कमलनयन यदि अन्यान्य पुरुषों की तरह धर्मभीरु होकर सामान्य आचार विचार के साथ चलता और उनके पवित्राचरण से ही अपने को कृतकृत्य मानता तो वे प्रसन्न ही होतीं।"

कल्याणी जब रोगमुक्त हुईं तब उन्होंने देखा, नलिनी कमलनयन के उपदेशानुसार नाना प्रकार के नियमों का पालन कर रही है। यहाँ तक कि बूढ़े घनानन्द बाबू भी कमलनयन की सब बातें गुरुवाक्य के समान बड़ी श्रद्धा और भक्ति के साथ ध्यानपूर्वक सुनते हैं।

इससे कल्याणी को बड़ा कौतूहल हुआ। उन्होंने एक दिन नलिनी को पुकारा और हँस कर कहा—"बेटी ! देखती हूँ, तुम सब कमलनयन को और भी पागल बना छोड़ोगी। उसकी वे सब पागलपने की बात तुम क्यों सुनती हो ? तुम सबों की उम्र अभी हँसने खेलने और सांसारिक सुख भोगने की है, न कि साधना करने की। यदि कहो कि "तुम क्यों यह सब कर रही हो ? उसका एक कारण है। मेरे माता पिता बड़े नैष्ठिक थे। बचपन से हमसब भाई-बहन उसी नियम निष्ठा के भीतर पलीं, इससे हम सबों का शरीर सहन-

शील हो गया। बचपन का अभ्यास बड़ा प्रबल होता है। उस समय का संस्कार अभी तक बना है। यही कारण है कि इस बुढ़ापे में भी किसी तरह नियम निबाहे जाती हूँ। यदि मैं यह सब छोड़ दूँ तो मेरे लिए दूसरा कर्तव्य ही क्या रहेगा। किन्तु तुम सबों के लिए तो यह बात नहीं है। तुम्हारी शिक्षादीक्षा किस तरह की है, यह मैं सब जानती हूँ। तुम जो कुछ साधन कर रही हो, यह केवल ज़ोर करके कर रही हो। इससे क्या लाभ! ईश्वर ने जिसके लिए जो सामर्थ्य दिया है, वह उसी की रक्षा करके चले इसीमें कल्याण है, मैं तो यही कहती हूँ। बेटी! वह सब कुछ नहीं है, यह सब छोड़ दो। संसारी रीति नीति के अनुसार चलो। तुम सबों का अभी हविष्य भोजन क्या! योग तप का इतना आडम्बर ही किस लिए? मेरा कमल-नयन ही इतना बड़ा योगिराज कब हुआ? वह इन बातों को क्या जाने? वह तो उस दिन तक भी मनमाना काम करके इधर उधर घूमता था। शास्त्र की बात सुन कर तो वह कोसों भागता था। मुझी को प्रसन्न करने के लिए उसने यह सब आरम्भ किया है। पर अब जो कुछ लक्षण देखती हूँ उससे यही जान पडता है, वह किसी दिन पूरा संन्यासी हो कर घर से निकल जायगा। मैं उसे बार बार समझा कर कहती हूँ, "बचपन से तुम्हारा जो विश्वास है, उसी पर स्थिर रहो। तुम्हारी पहले की समझ भी बुरी नहीं है, तुम उस समझ के अनुसार चलो, मैं उससे अप्रसन्न न हूँगी।" सुन कर बेटा हँसता है—उसका स्वभाव ही ऐसा है। सब बात चुपचाप सुन लेता है। कुछ उत्तर नहीं देता।

पिछले पहर दिन को नलिनी के बाल बाँधते बाँधते इन बातों की चर्चा चलती थी। बाल बाँधने और चोटी गूँधने में

कल्याणी बड़ी प्रवीणा थी। एक दिन ज़िक्र लच जाने पर उन्होंने कहा—"मैं जितने प्रकार की वेणी बाँधना जानती हूँ, उतना तुम सब भी न जानती होंगी। मुझे संयोग से एक मेम मिल गई थी। मैंने उससे सिलाई का काम सीखा था, उसी ने कई क़िस्म के बाल बाँधने भी सिखा दिये थे। जब वह सिखला कर चली जाती थी, तब मुझे स्नान कर के कपड़ा बदलना पड़ता था। ऐसा क्यों करती थीं यह मैं नहीं कह सकती। सच पूछो तो आचार-धर्म बड़ा कठिन है। पर बिना किये मुझसे रहा नहीं जाता। तुम सबों को जो मैं अपने खाने पीने की कोई वस्तु छूने नहीं देती, उसका कुछ बुरा मत मानो। यह मत समझो कि मैं तुमसे घृणा करती हूँ। वह केवल एक अभ्यास है। कमलनयन का जब पहले दूसरा विचार था, आर्यधर्म से उसे नफ़रत थी, तब मैंने बहुत कुछ उसके अनाचार को सह्य किया था, मैं उससे कुछ न कहती थी, सिर्फ़ यही कि, "जो अच्छा समझो करो, मैं मूर्ख स्त्री धर्मकर्म्म का मर्म क्या समझूँ। तब जो इतने दिन से करती आती हूँ उसे छोड़ नहीं सकती।" यह कहते कहते कल्याणी ने आँचल से अपनी आँखों के आँसू पोंछ डाले।"

नलिनी पर कल्याणी का स्नेह दिनों दिन बढ़ने लगा। वे अपने आबनूस के सन्दूक से रंगीन साड़ी निकाल कर नलिनी के पहिरने के लिए देतीं और अपने हाथ से उसका शृङ्गार कर के बहुत प्रसन्न होती थीं। नलिनी प्रायः रोज़ ही कल्याणी को अपनी सिलाई दिखला जाती थी। उन्होंने नलिनी को नित्य नये नये क़िस्म की सिलाई की शिक्षा देना आरम्भ किया। यह सब उनके सन्ध्यासमय का काम था। उन्हें हिन्दी मासिक पत्र, और शिक्षाप्रद उपन्यास पढ़ने का बड़ा शौक था। नलिनी के

पास जो कुछ हिन्दी की सुपाठ्य पुस्तकें थीं सब कल्याणी के पास लाकर रखदीं।

किसी किसी लेख और पुस्तकों के सम्बन्ध में कल्याणी की आलोचना सुनकर नलिनी चकित हो जाती थी। बिना अङ्गरेज़ी पढ़े भी ऐसी प्रखर बुद्धि हो जाती है, यह नलिनी न जानती थी। कमलनयन की माता की कथावार्ता, संसार, और पवित्राचरण देख नलिनी उन्हें एक अद्भुत स्त्री समझने लगी। वह जो सोचकर यहाँ आई थी, वह न हुआ। सब बातें उस की आशा के बाहर हो गईं।"

उनचासवाँ परिच्छेद

कल्याणी को फिर बुख़ार हुआ। इस वार का बुख़ार बहुत दिन न रहा। कमलनयन ने सवेरे माता को प्रणाम करके उनके पैर की धूल लेते समय कहा—"माँ, अब कुछ दिन तुम्हें रोगी की तरह संयम करके रहना होगा। तुम्हारा शरीर अत्यन्त दुर्बल हो गया है! ऐसे खिन्न शरीर लेकर तुम वैसे कठोर नियम का पालन कैसे करोगी।"

कल्याणी—"मैं रोगी के नियम से रहूँ और तुम योगी के नियम से। तुम्हारी ये सब बातें अब बहुत दिन न चलेंगी। मैं तुम्हें आज्ञा देती हूँ, इसवार तुमको ब्याह करना ही होगा।"

कमलनयन चुप हो रहा। कल्याणी ने कहा—"देखो बाबू! मेरा यह शरीर अब अधिक दिन न ठहरेगा। तुमको संसारी देखकर मैं सुखपूर्वक मर सकूँगी। पहले मेरे मन में यह उत्कण्ठा लगी रहती थी कि कब मेरे घर में एक छोटी सी नई बहू आवेगी, कब मैं उसे अपने हाथ से सिखा पढ़ा कर होशियार बनाऊँगी, कब उसे अच्छे अच्छे भूषणवसन पहना ओढ़ा कर अपने नयन जुड़ाऊँगी। किन्तु इस वार की बीमारी में भगवान् ने मुझे चैतन्य कर दिया है। अब मेरी ज़िन्दगी का क्या ठिकाना। कब इस देहपिञ्जर से प्राणपक्षी उड़ जायगा इसका निश्चय नहीं। आज हूँ, कल न रहूँगी। ऐसी अवस्था में एक छोटी बहू को तुम्हारे गले में बाँध जाने से तुम बड़ी

मुश्किल में पड़ जाओगे। इसलिए मैं चाहती हूँ कि तुम किसी सयानी लड़की से ब्याह करो। ज्वर के वेग में जब मैं इन बातों को सोचती थी तब इसी सोच विचार में रात भर जगी रहती थी। मेरे मन की सब साध पूरी हुई। यही एक लालसा लगी है कि तुम्हारी नई दुलहिन कब मेरे घर आवेगी। जब तक मेरा यह मनोरथ पूरा न होगा तब तक मेरे चित्त को शान्ति न मिलेगी।"

कमलनयन—"जो हम सबों की इच्छा के अनुसार चल सके, ऐसी लड़की कहाँ मिलेगी?"

कल्याणी—"यह मैं ठीक करके तुमसे कहूँगी। उसके लिए तुम चिन्ता न करो।"

अब तक कल्याणी कभी घनानन्द बाबू के सामने न हुई थी। साँझ होने के कुछ पूर्व नित्य नियमानुसार घनानन्द बाबू घूमते घूमते जब कमलनयन बाबू के घर आये तब कल्याणी ने घनानन्द बाबू को बुला भेजा। उनसे कहा—"आपकी लड़की बड़ी सुशीला है। उसपर मेरा अनुराग बहुत बढ़ गया है। मेरे कमल-नयन को तो आप जानते ही हैं। उसमें किसी तरह का कोई दोष नहीं है। डाक्टरी में भी उसने अच्छा नाम हासिल किया है। आपको अपनी लड़की के लिए ढूँढ़ने से भी क्या ऐसा उत्तम वर जल्दी मिलेगा?"

घनानन्द ने अत्यन्त उल्लसित होकर कहा—"इस बात की आशा करने का भी मेरे मन में साहस नहीं होता। यदि कमल-नयन बाबू के साथ मेरी लड़की का ब्याह हो तो इससे बढ़कर मेरा सौभाग्य और क्या हो सकता है! लेकिन क्या वे—"

कल्याणी—"उसे कोई उज़्र न होगा। वह आज कल के लड़कों की तरह ख़ुद मुख़्तार नहीं है। वह मेरी बात मानता है। वह कभी मेरी बात न टालेगा। टालने का कोई कारण भी नहीं है। कौन ऐसा होगा जो आपकी लड़की को पसन्द न करेगा? मैं इस काम को अति शीघ्र कर लेना चाहती हूँ। क्योंकि मेरे शरीर की अवस्था अच्छी नहीं। किस घड़ी इस संसार से उठ विदा हूँगी इसका निश्चय नहीं। इसलिए यह काम मेरी आँखों के सामने हो जाय।"

घनानन्द उस रात बड़े ही प्रसन्न होकर घर गये। घर जाकर उन्होंने नलिनी को बुलाकर कहा—"बेटी, मैं अब वृद्ध हुआ। मेरा शरीर भी बराबर रुग्ण रहता है। तुम्हारा विवाह बिना किये चल देने से मेरी आत्मा को सुख न मिलेगा। तुम मुझसे संकोच न करो, "आहारे व्यवहारे चत्यक्तलज्जः सुखी भवेत्" जो मैं पूछता हूँ, उसका उचित उत्तर दो। तुम्हारे माँ या बाप जो समझो मैं ही हूँ। मेरे ही ऊपर तुम्हारा सारा बोझ है।"

नलिनी उत्कण्ठाभरी दृष्टि से पिता का मुँह देखने लगी। घनानन्द ने कहा—"तुम्हारे ब्याह की एक ऐसी घटना लगी है, जो सुनकर मेरे हृदय में आनन्द रखने की जगह नहीं। मुझे डर है कि इसमें पीछे कोई विघ्न न आ पड़े। आज कमलनयन बाबू की माँ ने स्वयं मुझे बुलाकर अपने पुत्र के साथ तुम्हारे ब्याह का प्रस्ताव किया है।"

नलिनी अत्यन्त संकुचित हो नज़र नीची करके बोली—"नहीं, नहीं, यह कभी नहीं हो सकता।"

कमलनयन के ब्याह की बात उसे एकदम असम्भव जान पड़ी। कमलनयन के सदृश महात्मा क्या कभी ब्याह कर सकता है? एकाएक पिता के मुँह से यह प्रस्ताव सुनकर वह मारे लज्जा के सिकुड़ गई।

घनानन्द ने पूछा—"क्यों नहीं हो सकता?"

नलिनी—"यह असम्भव है। आप स्वयं सोचकर देखें। कमलनयन बाबू कैसे हैं, क्या यह आप नहीं जानते?"

घनानन्द—"जानते क्यों नहीं हैं। वे अविवाहित हैं।"

नलिनी अब वहाँ न रह सकी। उठकर बरामदे में चली गई। घनानन्द बाबू बड़े सोच में पड़ गये। उन्हें इस तरह की बाधा होने की कुछ भी आशङ्का न थी। बल्कि उनकी धारणा थी, कमलनयन के साथ विवाह होने का प्रस्ताव सुनकर नलिनी मन ही मन प्रसन्न होगी। वे उदास होकर शमादान की ओर देखने और स्त्री का अचिन्त्य भाव तथा नलिनी की माँ के न रहने की बात सोचने लगे।

नलिनी बहुत देर तक बरामदे में बैठी रही। इसके बाद उसने एकबार घर की ओर झाँक कर देखा, पिता को उदास मुँह किये चिन्ता में डूबे देखकर वह दुखी हुई। झट पिता के पास जाकर कोमल स्वर में कहा—"बाबूजी, चलिए, बहुत देर से भोजन की सामग्री रक्खी है, ठंढी हो गई होगी।"

घनानन्द बाबू भोजन करने गये। पर आज वे अच्छी तरह भोजन न कर सके। नलिनी के ब्याह का ऐसा अच्छा प्रस्ताव

सुनकर वे बड़े आशान्वित हुए थे, परन्तु नलिनी की ओर से इतना बड़ा व्याघात पाकर उनके मनका उत्साह भङ्ग हो गया। वे एकदम हताश हो गये। नलिनी की बात सोचते सोचते उन्हें रमेश की सुध आई। एकाएक उनके मन में यह प्रश्न उदित हुआ कि "तो क्या वह रमेश को अब तक न भूली है?"

और दिन वे भोजन करके शीघ्र ही सोने जाते थे। आज वे बरामदे में आराम-कुरसी पर बैठकर बाग़ के सामने वाली सड़क की ओर देखने और मन ही मन कुछ सोचने लगे। नलिनी उन्हें चिन्तित देख धीरे धीरे उनके पास आ खड़ी हुई और मुस्कुरा कर बोली—"बाबूजी, यहाँ बड़ी ठंढी हवा आती है, अब सोने चलिए।"

घनानन्द—"तुम सोने जाओ, मैं ज़रा ठहर कर सोऊँगा।

नलिनी चुपचाप उनके पास खड़ी रही। कुछ ही देर बाद उसने फिर कहा—"बाबूजी! आपको जाड़ा लगता है, न सोवें तो कमरे के भीतर चलकर बैठिए।"

घनानन्द उठे, और चुपचाप सोने के घर में जाकर चार-पाई पर लेट रहे।"

नलिनी ने जो कुछ अपना कर्तव्य सोच रक्खा था उसके खिलाफ़ कोई काम करना न चाहती थी, जिसे वह एकवार अपना मन दे चुकी उससे मन लौटाकर फिर दूसरे के हाथ में देना न चाहती थी, परन्तु जब उसने योगेन्द्र को अक्षय का पक्ष लेते देखा तब कर्तव्य की हानि होने के भय से वह रमेश की चिन्ता को भूल सी गई और मन को सदा प्रसन्न रखने की चेष्टा करने लगी। परन्तु जब बाहर से उसपर किसी तरह का

दबाव डाला जाता था, तब उसके हृदय के फफोले फूटने लगते थे और उसे मर्मान्तिक कष्ट होता था। वह अपने भविष्य जीवन को किस तरह बितावेगी, इसका कोई उपाय उसे न सूझता था। आखिर उसने यही एक अवलम्ब खोज निकाला, कमलनयन बाबू को गुरु बनाकर उनके उपदेशानुसार चलने लगी। किन्तु जब कोई उसे विवाह का अन्य प्रस्ताव सुनाकर उसके गम्भीरतम हृदय का प्रेमबन्धन तोड़ना चाहता था, तब वह समझती थी, वह बन्धन कैसा कठिन है। उसे तोड़ने के हेतु किसी को उद्यत देख नलिनी व्याकुल हो अपना समस्त मानसिक बल लगाकर उस बन्धन को पकड़ती थी। मानो वही बन्धन उसके जीवन का सहारा था।

पचासवाँ परिच्छेद

इधर कल्याणी ने कमलनयन से कहा—"मैंने तुम्हारे ब्याह की बातचीत ठीक की है।"

कमलनयन ने मुस्कुरा कर कहा—"क्या एकबार ही ठीक कर चुकीं ?"

कल्याणी—"एकबार ही नहीं तो क्या ? क्या मैं अब बहुत दिनों तक जीती रहूँगी ? मैं जो कहती हूँ सो सुनो, मैंने नलिनी ही को पसन्द किया है। ऐसी अच्छी लड़की खोजे भी न मिलेगी। रंग वैसा गोरा नहीं है परन्तु—"

कमलनयन—"दुहाई माँजी ! मैं गोराई की बात नहीं सोचता, किन्तु उसके साथ ब्याह कैसे होगा ? यह क्या कभी हो सकता है ?"

कल्याणी—"यह तुम क्या कहते हो ! न होने का तो कोई कारण नहीं देख पड़ता।"

कमलनयन को इसका उत्तर देना कठिन हो गया। वह केवल "नलिनी !" कहकर चुप हो रहा। जिस नलिनी को वह इतने दिन से गुरु की भाँति उपदेश देता आया है, उसके साथ एकाएक विवाह का प्रस्ताव सुन कर वह क्षुब्ध हो गया।

कमलनयन को चुप देख कल्याणी ने कहा—"इसबार मैं तुम्हारा कोई उज्र न सुनूँगी। मेरे लिए जो तुम इस तरुण

अवस्था में सब छोड़छाड़ काशीवासी होकर तपस्या करोगे, यह मैं किसी तरह न देख सकूँगी। अब जो तुम्हारे ब्याह का शुभ दिन स्थिर होगा, वह व्यर्थ न जायगा, यह मैं अभी कह रखती हूँ।"

कमलनयन कुछ देर तक मन की बात सोचकर बोला—"अच्छा, सुनो, मैं तुमसे एक बात कहता हूँ। पर यह भी पहले ही कह देता हूँ कि सुनकर घबराओ मत। जिस घटना की बात कहता हूँ, उसे आज नौ दस महीने हो गये। अब उस बात को लेकर चिन्तित होने की कोई आवश्यकता नहीं। किन्तु तुम्हारा जैसा कोमल स्वभाव है, किसी अमङ्गल की बात बीत जाने पर भी उसकी चिन्ता तुम्हारे मन से सहसा नहीं जाती, इसीलिए कितने दिनों से कहने की इच्छा रख कर भी मैं आज तक तुमसे कुछ कह न सका। मेरी ग्रहशान्ति के लिए जहाँ तक हो सके पूजा पाठ कराओ, यह तुम्हारी ख़ुशी परन्तु व्यर्थ अपने मन को कोई बात सोचकर तकलीफ़ न दो।"

कल्याणी ने उद्विग्न होकर कहा—"क्या जानूँ, तुम क्या कहोगे। किन्तु तुम्हारी भूमिका सुनकर अभी से मेरा हृदय काँपता है। जब तक इस दुनिया में हूँ अपने को दुःख से कहाँ तक बचाकर रख सकती हूँ। मैं तो अमङ्गल की बात से दूर रहना चाहती हूँ, परन्तु उसे क्या कहीं से खोजकर लाना पड़ता है। वह आप ही आकर सिर पर सवार हो जाती है। अच्छा, बात भली हो चाहे बुरी, तुम एकबार कह सुनाओ।"

कमलनयन—"मैं इसी माघ महीने में अपनी सब चीज़ों को बेंच खोज कर अपने बाग़ वाले मकान को भाड़े पर उठा कर

रंगपुर से विदा हुआ। कुछ दूर आगे आकर न मालूम मेरे मन में क्या आया, मैंने रेलगाड़ी पर न चढ़ कलकत्ते तक नाव की सवारी से ही जाने का निश्चय किया। इसलिए सीधे घाट पर जाकर एक देशी जहाज़ के द्वारा यात्रा की। दो दिन का रास्ता पार कर एक बालू के टीले के पास नाव बाँधकर मैं स्नान कर रहा था। उसी समय एकाएक देखता हूँ, भूपेन्द्र एक बन्दूक़ हाथ में लिये सामने खड़ा है। मुझको देखते ही उसने आनन्द से उछल कर कहा—"शिकार खोजने आकर मैंने आज ख़ूब भारी शिकार पाया। वह उसी तरफ़ कहीं डिपुटी मैजिस्ट्री करता था। ख़ेमे से निकल कर उधर घूमने आया था। बहुत दिनों पर भेट हुई, वह मुझे कब छोड़ सकता था, वह मुझे साथ लेकर देहात की सैर करने लगा। कए दिन धर्मपुष्कर नाम की एक जगह में उसका ख़ेमा पड़ा। दिन के तीसरे पहर हम दोनों घूमने के लिए ख़ेमे से बाहर हुए। बस्ती बिलकुल पुरानी थी। अधिक तर असभ्य लोगों का ही वास था। एक खेत के पास एक फूँस के घर में हम दोनों ने प्रवेश किया। घर के अधिपति हम दोनों के बैठने के लिए दो मूढ़े भीतर से उठा लाये। उसारे के नीचे ज़मीन में बैठे हुए लड़के सब हाथ में स्लेट लिये ख़ूब कोलाहल के साथ विद्या का अभ्यास कर रहे थे। प्राइमरी स्कूल के शिक्षक काठ की चौकी पर बैठे कड़ी निगाह से लड़कों की ओर देख रहे थे। घर के अधिष्ठाता का नाम तारिणीचरण था। भूपेन्द्रबाबू से उन्होंने मेरा परिचय पूछा। ख़ेमे में लौट आने पर भूपेन्द्र ने मुझ से कहा—"तुम्हारा नसीब अच्छा है। तुम्हारे ब्याह की बातचीत हो रही है।"

मैंने कहा—"कैसी बात चीत?"

भूपेन्द्र—"यह तारिणीचरण महाजनी करता है। इसके बराबर सूम संसार में न होगा। भारी कंजूस है। यह जो अपने यहाँ इसने स्कूल की जगह दी है, इस कारण जो कोई नया मजिष्ट्रेट आता है, उसके पास यह अपनी लोकहितैषिता का बात लेकर विशेष आडम्बर करता है। स्कूल के पण्डित को केवल अपने घर भोजन दे कर दस बजे रात तक उस से सूद का हिसाब कराता है। उसकी एक बहन पति-वियुक्ता होने पर कहीं आश्रय न पा इसके पास आई। वह गर्भिणी थी। यहाँ आकर उसने एक कन्या प्रसव की परन्तु उसका उचित पथ्य पानी न होने से वह बेचारी मर गई। उसके एक और विधवा बहन थी। उसे वह अपने यहाँ रख उससे घर का सारा काम करवा कर दासी रखने का ख़र्च बचाता था। उसी ने इस लड़की को माँ की तरह पाला पोसा। लड़की के कुछ बड़ी होते ही उसकी भी मृत्यु हो गई। तब से वह मातृपितृहीना बालिका बराबर मामा और मामी की सेवा टहल में हाज़िर रह दिन रात उनकी झिड़की सहती हुई बड़े दुःख से समय बिताने लगी। अब वह ब्याहने योग्य हो गई है, परन्तु ऐसी अनाथ बालिका से कौन ब्याह करेगा? यहाँ उसके माँ बाप का कोई परिचय तक नहीं जानता। पितृ-हीन अवस्था में उस लड़की का जन्म हुआ, इस बात को लेकर महल्ले के कितने ही लोग सन्देह भी करते हैं। तारिणी के पास बेहिसाब रुपया है। यह भी सब जानते हैं। सब लोगों की इच्छा है। कि इस लड़की की शादी में तारिणी का ख़ूब रुपया ख़र्च हो। कन्या के सम्बन्ध में दोषदेरक सब लोग अपना मतलब गाँठना चाहते हैं। इसी से अब तक लड़की के ब्याह की बात कहीं स्थिर नहीं हुई है। चार

वर्ष से वह बराबर इस लड़की की उम्र दस वर्ष बताता है । अतएव हिसाब से उसकी अवस्था अब चौदह वर्ष से कम न होगी । जो कुछ हो, लड़की का नाम भी कमला है, और रूप गुण में भी वह कमला की मूर्ति ही है । ऐसी सुन्दरी लड़की मैंने तो नहीं देखी है । इस गाँव में किसी विदेशी युवक ब्राह्मण को उपस्थित देख तारिणी उस लड़की के साथ ब्याह करने के लिए उसका हाथ पैर पकड़ता है । यदि कोई राज़ी होता भी है तो गाँव के लोग उसे लड़की के निसबत कुछ खोटी बात कह सुन कर भगा देते हैं । इसलिए अबकी बार निश्चय तुम्हारी पारी है ।" इस पर मैंने बिना कुछ सोचे विचारे कहा—"उस लड़की के साथ मैं ब्याह करूँगा ।" इसके पूर्व ही मैंने स्थिर किया था, एक सनातन धर्मी के घर की लड़की से ब्याह कर उसे ले आऊँगा और तुम्हें विस्मित कर दूँगा । मैं जानता था, बड़ी उम्र की ब्राह्म लड़की को घर लाऊँगा तो उसके आचरण से तुम कदापि सन्तुष्ट न होगी । मेरी बात सुन कर भूपेन्द्र को बड़ा आश्चर्य हुआ । उसने कहा—"सच कहो ।" मैंने कहा—"सच नहीं तो क्या मैं तुमसे झूँट कहता हूँ । मैंने अपने सिद्धान्त को पहले से स्थिर कर लिया है ।"

भूपेन्द्र—"पक्का !"

मैं—"हाँ, पक्का ।"

उसी दिन साँझ को स्वयं तारिणी चट्टोपाध्याय हम लोगों के मेखे में आये । उन्होंने हाथ जोड़ कर मुझसे कहा—"आप को मेरा उद्धार करना होगा । आप लड़की को पहले अपनी आँख से देख लीजिए, पसन्द न हो तो दूसरी बात है, परन्तु आप मेरे दुश्मनों की बात न सुनिए ।" मैंने कहा, "देखने की

ज़रूरत नहीं आप दिन स्थिर कीजिए। तारिणी ने कहा—"परसों का दिन बड़ा अच्छा है। परसों ही यह काम हो जाय।" शीघ्रता की दुहाई देकर ब्याह में यथासाध्य ख़र्च बचाने की उसकी इच्छा थी। उक्त दिन में ब्याह हो गया।"

कल्याणी चौंक उठी। बोली—"अयँ! ब्याह हो गया! सच कहो बेटा!"

कमलनयन—"हाँ, हो गया। बहू को लेकर मैं नाव पर सवार हुआ। जिस दिन पिछले पहर दिन को मैं जहाज़ पर चढ़ा, उसी दिन सूर्यास्त होने के एक दण्ड उपरान्त न मालूम कहाँ से एक आँधी आकर बात की बात में नाव को उलटा कर किधर गई क्या हुई! फागुन महीने में इस तरह की आँधी आते मैंने कभी न देखी थी।"

कल्याणी—"नारायण!" उसका सम्पूर्ण शरीर भय से काँप उठा।"

कमलनयन—"कुछ देर के बाद जब मेरा होश ठिकाने आया तब मैंने देखा कि मैं नदी में तैर रहा हूँ। परन्तु पास में नाव या नौकारोही का कुछ चिह्न मात्र भी न था। मैं तैर कर किसी तरह किनारे लगा। पुलिस में ख़बर देकर मैंने उसकी बहुत खोज कराई, परन्तु कोई फल न हुआ।"

कल्याणी का चेहरा पीला होगया। उसने कहा—"जो होगई सो होगई, अब इस बातकी चर्चा फिर मेरे आगे कभी मत करो। इस दुर्घटना का स्मरण होतेही मेरा हृदय काँप उठता है। ऐसी अनिष्ट घटना की बात ईश्वर कभी न सुनावे।"

कमलनयन—"यह बात मैं आपसे कभी न कहता, परन्तु विवाह की बात लेकर आप वारंवार ज़िद्द करती हैं, इसीसे कहना पड़ा।"

कल्याणी—"एक बार दैवयोग से दुर्घटना हो गई, इससे क्या तुम इस जीवन में फिर कभी विवाह न करोगे?"

कमलनयन—"करूँगा क्यों नहीं, परन्तु यदि वह बच गई हो?"

कल्याणी—"तुम पागल तो नहीं हो गये? अगर वह डूबने से बचती तो क्या वह तुम्हें ख़बर न देती?"

कमलनयन—"मेरा पता उसे क्या मालूम था! वह जानती तक न थी, कि मैं कहाँ का रहनेवाला हूँ, क्या मेरा नाम है। मैं सर्वथा उसके बेजान पहचान का आदमी था। उसे प्रायः मेरा मुँह देखने का भी अवसर न मिला।

काशी आकर मैंने तारिणी चटरजी को एक पत्र लिखा। उत्तर में जो उनकी चिट्ठी आई उस से ज्ञात हुआ कि उन्हें भी कमला की कुछ ख़बर मालूम नहीं।"

कल्याणी—"तो फिर क्या करोगे?"

कमलनयन—"मैंने तो मन में यही निश्चय किया है, पूरा एक वर्ष उसकी राह देख कर तब उसकी मृत्यु स्थिर करूँगा।"

कल्याणी—"तुम सभी बातों में योंही अरसा कर देते हो, एक वर्ष रास्ता देखने की क्या ज़रूरत है?"

कमलनयन—"एक वर्ष पूरा होने में अब विलम्ब क्या है ! अगहन बीत रहा है, पूस में ब्याह हो ही गा नहीं, तिसके बाद माघ बिता कर फागुन में देखा जायगा ।"

कल्याणी—"बहुत अच्छा, लड़की यही ठीक रही । मैंने नलिनी के पिता को वचन दे दिया है ।"

कमलनयन—"मनुष्य केवल वचन दे सकता है, परन्तु उसको पूरा करने का भार ईश्वर के हाथ में है । उनकी जो इच्छा होगी वही होगा । "हानि लाभ जीवन मरण यश अपयश विधि हाथ ।"

कल्याणी—"बेटा, तुम जो कहो, तुम्हारा वह वृत्तान्त सुनकर अब भी मेरा शरीर काँपता है ।"

कमलनयन—"यह मैं जानता हूँ, तुम्हारा मन क्या अब शीघ्र स्थिर होगा । दिन रात तुम्हारे मन में इस बात की चिन्ता लगी रहेगी । इसी से मैं तुम्हारे पास ऐसी बातों का ज़िक्र करना नहीं चाहता ।"

कल्याणी—"अच्छा ही करते हो । आज कल न मालूम मेरा कैसा स्वभाव हो गया है ! कोई अनिष्ट संवाद सुनने से मेरे मन में उसकी बड़ी चिन्ता होती है, जो किसी तरह दूर नहीं होती । डाक का कोई पत्र खोलते मुझे भय होता है, शायद उसमें कुछ बुरी ख़बर न हो, इसीलिए तो मैंने तुम सबों से भी कह रक्खा है, मुझे ऐसी ख़बर न दो जिससे मेरे मन की शान्ति भङ्ग हो । मैं तो अब एक तरह से अपने को मरी हुई समझती हूँ । मुझसे कुछ कहने की ज़रूरत ही क्या ! अब मैं अपने ऊपर संसार का बोझ क्यों लूँ ?"

इक्कावनवाँ परिच्छेद

कमला जब गङ्गा के किनारे जा पहुँची, तब सूर्यास्त होने में विलम्ब न था। शीतकाल का सूर्य अपना तेज अग्नि में डाल अस्ताचल की ओर में आश्रय लेने को पहुँच गया था। कमला ने हाथ जोड़ उस शान्त स्वरूप सायंकालिक सूर्यदेव को प्रणाम किया। इसके बाद उसने गङ्गा जी का जल सिर पर डाल धार में पैर रक्खा। घुटने तक पानी में जाकर गङ्गाजी के लिए जो कुछ फलफूल लाई थी चढ़ा दिया। गङ्गा को प्रणाम कर किनारे आई। तिस पीछे समस्त गुरुजनों का स्मरण कर सिर नवाया। उन सबों को प्रणाम करके सिर उठाते ही उसे एक और प्रणम्य व्यक्ति की सुध आई। यद्यपि किसी दिन सिर उठाकर उसने उनके मुँह की ओर न देखा था। एक दिन रात को जब वह उनके पास बैठी थी, तब उनके पैरों पर भी उसकी नज़र न पड़ी। कोहवर में अन्य स्त्रियों के साथ जो उन्हें दो चार बातें कही थीं, वह भी लज्जा में डूबी रहने के कारण उसने घूँघट के भीतर से स्पष्ट न सुना। उनका वह कण्ठस्वर स्मरण में लाने के लिए आज इस गङ्गा के किनारे निर्जनस्थान में खड़ी होकर उसने एकान्त मन से बड़ी चेष्टा की, परन्तु किसी तरह वह उसके हृदय में न आया।

आधी रात से ऊपर उसके ब्याह का लग्न था। बहुत रात तक जगी रहने के कारण कब वह कहाँ सो गई, इसका भी

उसे कुछ स्मरण नहीं है। सवेरे जाग कर देखा, उसकी एक सखी उसे ठेल कर, जगा कर खिलखिला रही है—शय्या पर और कोई न था। जीवन के इस शेष काल में प्राणेश्वर के स्मरण ध्यान करने का कुछ साधन उसके पास न था। उस ओर एक बार ही अँधेरा था, न कोई मूर्ति, न कोई वाक्य, न कोई चिह्न! जिस लाल वस्त्र के साथ उनकी चादर का ग्रन्थि-बन्धन हुआ था, तारिणीचरण की दी हुई उस थोड़े दाम की चूँदरी का मूल्य कितना अधिक है, वह न जानती थी, इसी से उसने उस चूँदरी को भी यत्नपूर्वक न रक्खा!

रमेश ने नलिनी को जो चिट्ठी लिखी थी वह कमला के आँचल में बँधी थी। वह उस चिट्ठी को खोलकर बालू पर बैठ उसका कुछ अंश सायंकाल के प्रकाश में पढ़ने लगी। उस अंश में उसके स्वामी का परिचय था। बात अधिक न थी, केवल उसके स्वामी का नाम कमलनयन चट्टोपाध्याय, और वे जो रंगपुर में पहले डाक्टरी करते थे, अब वहाँ नहीं हैं, कहाँ हैं यह भी कुछ मालूम नहीं है। इतनी ही बात लिखी थी। इससे अधिक उसके पति के सम्बन्ध में कुछ न था। "कमल-नयन" यह नाम उसके मन में अमृत बरसाने लगा। मानो उस नाम ने एक कल्पित मूर्ति धारण कर उसे अपने छाती से लगा रक्खा। कुछ देर वह प्रेम के आवेश में आकर बेसुध हो रही। उसकी आँखों से आँसू की धार बह चली। उस अविरल धारा ने उसके हृदय को आर्द्र कर दिया। जिससे उसके हृदय का असह्य दुःखदाह मानो एकबार ही शान्त होगया। उसका अन्तःकरण कहने लगा—"घबराने की कोई बात नहीं, मैं उन्हें देख रहा हूँ। वे कुशलपूर्वक हैं। वे मेरे जीवननाथ मेरे ही हैं!"

तब वह ढाढ़स कर बोली—"यदि मैं सती हूँ तो इसी जीवन में एक न एक दिन उनके पैरों की धूल मेरे सिर में लगेहीगी। विधाता कभी मेरे मनोरथ को विफल न करेंगे। मेरा दौर्भाग्य भी इसमें कदापि कोई बाधा न दे सकेगा। जब मैं हूँ, तब वे भी इस संसार में अवश्य ही होंगे। उन्हीं की सेवा करने के लिए भगवान् ने मुझे बचा रक्खा है।"

उसने अपने रूमाल में बँधी हुई कुञ्जियों को वहीं फेंक दिया। रमेश की दी हुई सोने की चेन भी झट उसने गले से निकाल कर पानी में फेंक दी। इसके बाद वह सीधी पच्छिम ओर रवाना हुई। कहाँ जायगी, क्या करेगी, इसका कुछ निश्चय उसके मन में न था। वह केवल इतना ही जानती थी कि उसे चलना होगा, घड़ी भर भी ठहरने के लिए अब उसे यहाँ जगह नहीं।

शीतकाल के सायंकालिक प्रकाश को जाते देर न हुई। चारों ओर अन्धकार छा गया। बालू की सफ़ेदी छोड़ और कुछ नज़र न आता था। कमला राह पकड़े बराबर चली जा रही थी, न उसे कुछ भय है, न कुछ चिन्ता। कहीं रहने का उसे कोई स्थान मिलेगा या नहीं, यह सोचने का भी उसमें सामर्थ्य नहीं। नदी के किनारे ही किनारे जाने की बात उसने स्थिर की, इससे किसीसे मार्ग पूछना न होगा, यदि मार्ग में उसके ऊपर कोई विपद् आवेगी, कोई उस पर आक्रमण करना चाहेगा तो वह तुरन्त गङ्गा की धार में कूद कर अपना प्राण दे देगी।

आकाश में कुहरे का कहीं नाम न था। कृष्णपक्ष की रात ने इसके चारों ओर ख़ासे अन्धकार की क़नात घेर दी। किन्तु उसकी दृष्टि में बाधा न दी।

क्रमशः रात गहरी होने लगी। रबी की फ़सिल खेतों में लहरा रही थी, जिसके पास से गीदड़ एकबार बोल गये। मनुष्य का कण्ठस्वर कहीं सुनाई न देता था। बालू पर बहुत दूर तक चलने के बाद कमला मिट्टी की सड़क पर चढ़ आई। नदी के पास ही एक गाँव दिखाई दिया। कमला ने कम्पित हृदय से गाँव के पास आकर देखा, सर्वत्र सन्नाटा छाया है, बस्ती के सब लोग सोये हैं। वह दबे पैर गाँव के बाहर निकल गई। कुछ दूर आगे जाकर उसे फिर गङ्गा का किनारा देख पड़ा, परन्तु वह ऐसी जगह में जा पहुँची जहाँ से आगे बढ़ने का कोई रास्ता ठीक ठीक मालूम न हुआ। इससे लाचार हो वह वहीं कुछ देर तक ठिठक कर खड़ी हो रही। आगे बढ़ने का उसे साहस न हुआ। थकी तो थी ही, पास ही एक बड़ के पेड़ के नीचे सो रही। सोते ही वह गाढ़ निद्रा में निमग्न हो गई।"

खूब तड़के जाग कर उसने देखा कि कृष्णपक्ष के चन्द्रमा के धुँधले प्रकाश से अन्धकार क्षीण हो गया है। एक अधेड़ स्त्री इसके सामने खड़ी हो इससे पूछ रही है—"यह कौन है, जाड़े की रात में इस पेड़ के नीचे कौन पड़ा है?"

कमला चकित हो उठ बैठी। देखा समीप ही घाट पर दो डोंगी बँधी है। वह और लोगों के जागने के पूर्व ही स्नान कर लेने के हेतु आई है।

औरत ने कहा—"तुम तो बङ्गालिन जान पड़ती हो?"

कमला—"हाँ, मैं बङ्गालिन हूँ।"

औरत—"तुम यहाँ क्यों पड़ी हो?"

कमला—"मैं काशी जाने के लिए घर से बाहर हुई हूँ। चलते चलते थक गई थी। रात भी कुछ अधिक होगई। नींद आने से यहीं सो रही।"

औरत—"क्या तुम काशी पैदल ही जा रही हो? अच्छा, घाट तक मेरे साथ चलो, मैं स्नान करने जाती हूँ।"

स्नान करने के उपरान्त इस स्त्री के साथ कमला का परिचय हुआ।

ग़ाज़ीपुर में जिस श्रीपति बाबू के यहाँ बड़े समारोह के साथ ब्याह का उत्सव हुआ था, वे इसके नातेदार हैं। इस औरत का नाम महामाया है। इसके स्वामी का नाम मुकुन्द-दत्त है। वह कुछ दिन से काशीवास कर रहा है।

महामाया ने पूछा—"तुम्हारा नाम क्या है?"

कमला—"मेरा नाम कमला है।"

महामाया—"तुम्हारे सिर में सिन्दूर देखती हूं, तुम सधवा हो?"

कमला—"ब्याह होने के दूसरे ही दिन मेरे स्वामी ग़ायब हो गये। वे कहाँ गये, यह मुझे मालूम नहीं।"

महामाया—"हा राम! यह क्या कहा! तुम्हारी उमर तो अभी अधिक नहीं जान पड़ती।" उसे सिर से पैर तक निहार कर कहा—"पन्द्रह वर्ष से अधिक न होगी।"

कमला—"मेरी उमर क्या है यह मैं ठीक ठीक नहीं जानती, शायद पन्द्रह वर्ष की ही होगी ?"

महामाया—"तुम ब्राह्मण की लड़की हो ?"

कमला—"हाँ ।"

महामाया—"तुम्हारा घर कहाँ है ?"

कमला—"ससुराल कहाँ है यह मैं नहीं जानती। मेरे बाप का घर जगदीशपुर में है ।"

कमला के बाप का घर जगदीशपुर में ही था, यह उसे मालूम था।

महामाया—"तुम्हारे माँ बाप—"

कमला—"मेरे माँ बाप नहीं हैं ।"

महामाया—"तो अब तुम्हारी क्या इच्छा है। अपने जीवन-निर्वाह का क्या उपाय सोचा है ?"

कमला—"यदि काशी में कोई सज्जन मुझे अपने घर में रख भोजन-वस्त्र देना स्वीकार करेंगे तो मैं उनके घरका काम करूँगी। मैं रसोई बनाना जानती हूँ ।"

महामाया बिना वेतन की रसोइया ब्राह्मणी पाकर मनही मन बहुत ख़ुश हुई। कहा—"मुझे तो रसोइये की ज़रूरत नहीं है, नौकर, चाकर, रसोइया, सब मेरे घर पर हैं। परन्तु मैं जैसा रसोइया चाहती हूँ नहीं मिलता। जब घर के मालिक के लिए समय पर रसोई तैयार न हुई, उनके भोजन

में गड़बड़ होती ही रही तो रसोइया रखने का फल क्या? ब्राह्मण को चौदह रुपया महीना देना होता है, इसके अलावा खाना कपड़ा! ख़ैर जो हो, तुम ब्राह्मण की कन्या हो, दैव-दोष से संकट में पड़ गई हो, अन्यत्र कहाँ जाओगी, चलो, मेरे ही यहाँ चलो। कितने ही लोग खाते पीते हैं, कितना ही व्यर्थ कामों में ख़र्च हो जाता है। एक आदमी के बढ़ने से मेरा कहाँ तक ख़र्च बढ़ेगा। कोई जानेगा भी नहीं। मेरे घर का काम भी कुछ अधिक नहीं है। यहाँ मैं और मेरे स्वामी दो ही जन रहते हैं। लड़कियों की शादी हो गई है। वे सब बड़े धनाढ्य के घर ब्याही गई हैं। मेरे एक ही लड़का है। वह हाकिम है, सिराजगंज में रह कर सरकारी काम करता है। लाट साहब के यहाँ से हर महीने उसके नाम चिट्ठी आती है। मैं मालिक से कहती हूँ, मेरे लाल को किस बात की कमी है जो वह दूसरे की तावेदारी करेगा। इतना बड़ा ओहदा सबको नहीं मिलता, यह मैं जानती हूँ परन्तु तो भी उसे विदेश में रहकर कष्ट सहना पड़ता है। बेटा क्यों कष्ट सहेगा, सहने का प्रयोजन क्या।" सरकार कहते हैं, "तुम औरत हो, यह नहीं समझोगी। क्या मैंने रुपया पाने की इच्छा से लड़के को नौकरी करने की सलाह दी है? नहीं, मुझे क्या कमी है! ईश्वर ने सब कुछ पूरा दे रक्खा है। तो बात यह है, हाथ में एक काम अवश्य रहना चाहिए। अभी उसकी कच्ची उम्र है। क्या जाने कब उसकी कैसी मति गति हो।"

आख़िर महामाया और कमला दोनों एक डोंगी पर सवार हो काशी रवाना हुईं। वायु अनुकूल थी, काशी पहुँचने में अधिक समय न लगा। शहर के बाहर, एक छोटे से बाग़ के भीतर जो एक दोमंज़िला मकान था, दोनों उसके भीतर हुईं।

वहाँ चौदह रुपया मासिक वेतन पानेवाले ब्राह्मण का पता नहीं। एक साधारण ब्राह्मण कुछ दिन से उसके यहाँ था, थोड़े ही दिनों के बाद महामाया ने एक दिन उसपर मारे क्रोध के आगबबूला हो बिना कुछ वेतन दिये ही उसे निकाल दिया।

जब तक उतने अधिक वेतन का दुर्लभ पाककर्ता न मिलेगा तब तक कमला को ही रसोई बनाने का भार अपने ऊपर लेना पड़ा।

महामाया ने बार बार कमला को सावधान करके कहा—"देखो बेटी! काशी शहर कुछ अच्छी जगह नहीं है, यहाँ चोर बदमाश, लुच्चे लबार, सब रहते हैं। अभी तुम्हारी उम्र बहुत थोड़ी है। घर के बाहर कहीं जाना नहीं। जब मैं गङ्गास्नान और श्रीविश्वनाथजी के दर्शन करने जाऊँगी तब तुम्हें भी साथ ले चलूँगी।"

कमला पीछे हाथ से निकल न जाय, इस ख़याल से महामाया ने बड़ी सावधानी के साथ उसे अपने यहाँ रक्खा। वह उसे घर से कहीं बाहर जाने न देती थी। बङ्गालिन स्त्रियों के साथ भी उसे बहुत वार्तालाप करने का अवसर न देती थी। दिन भर उससे घर का काम करवाती थी। काम करते करते कमला को दम लेने की भी फ़ुरसत न मिलती थी। साँझ को कुछ देर तक महामाया अपने अतुल ऐश्वर्य की गाथा गाकर उसे सुनाती थी। वह जो अपने जवाहरात का डिब्बा, रत्नजटित भूषण, सोने चाँदी के बर्तन और मख़मल कीमख़ाब आदि वस्त्र की बनी गद्दी तकिया तथा और भी अनेक बहुमूल्य वस्तु चोर डाकुओं के भय से काशी न ला सकी। कमला को अपने पास बिठा इन्हीं बातों की आलोचना करती थी। "काँसे की थाली में

खाने का मालिक को कभी का अभ्यास नहीं, काँसे पीतल के बर्तन को सरकार कभी हाथ से छूते तक न थे। यहाँ आकर उन्हें पहले पहल ये सब कष्ट सहने पड़े हैं, इससे वे कभी कभी नाराज़ होकर बोलते हैं—"दो चार चीज़ चोरी हो जायगी तो जायगी, उसके लिए इतनी तकलीफ़ कोई कैसे सह सकता है। खो जाने पर फिर दूसरी बनने में क्या देर लगेगी?"

लेकिन रुपया अधिक है, तो क्या उसे बरबाद ही कर देना चाहिए? मैं इस बात को कभी पसन्द नहीं करती। मैं नहीं चाहती कि जो चीज़ अपने पास मौजूद है उस के लिए फिर दुबारा रुपया ख़र्च हो। भोगविलास में रुपया उड़ाने की अपेक्षा कुछ काल कष्ट सहकर रहना अच्छा है। यही देखो न, देश में हमारा उतना बड़ा मकान है, वहाँ कितने ही नौकर चाकर हैं। कितने ही अतिथि अभ्यागतों की नित्य सेवा होती है। इससे क्या यहाँ भी सात गण्डा नौकर रखना मुनासिब है? परदेश का मामला ठहरा। सरकार कहते हैं, "एक मकान में सब का समावेश न हो सके तो एक और मकान किराये पर ले लिया जाय।" मैं कहती हूँ, "जितने लोग हैं, सब इसी मकान में रहेंगे।" किसी को कुछ कष्ट न होगा। हम सब ऊपर रहेंगी और लोग नीचे के खण्ड में रहेंगे। अब ज़्यादा नौकर रखने की ज़रूरत नहीं है। इतने ही नौकरों से मज़े में काम चल रहा है।"

बावनवाँ परिच्छेद

महामाया के आश्रय में रहकर कमला का जी गन्दे हौज़ की मछली की भाँति व्याकुल होने लगा। यहाँ से किसी तरह वह बाहर हो तो उसके प्राण बचें। परन्तु बाहर वह किसके पास जा खड़ी होगी, कहाँ रहेगी ?"

महामाया कमला को न चाहती थी, यह नहीं, किन्तु उसकी चाह में रस न था, केवल स्वार्थना भरी थी। जब तब कमला के अनमनी होने पर महामाया उसकी खोज ख़बर लेती थी, परन्तु उसे कृतज्ञतापूर्वक स्वीकार करना कमला के लिए बड़ा ही कठिन था। कमला कामों में लगी रहना अच्छा समझती थी परन्तु जो समय उसका महामाया के सखित्व में कटता था, सब से बढ़कर वही उसको दुःसमय जान पड़ता था।

एक दिन महामाया ने कमला को बुलाकर कहा—"सरकार की तबीयत आज अच्छी नहीं है, भात मत बनाओ, आज वे रोटी खायँगे। घी अन्दाज़ से ख़र्च करना। तुम तेल घी ज़्यादा ख़र्च करती हो, तो भी तुम्हारे हाथ की रसोई में कुछ स्वाद नहीं मिलता। तुमसे वह बाभन अच्छा था, वह थोड़े ही घी से काम चला लेता था। तो भी उसके हाथ की बनाई दालरोटी में घी की बास आती थी। बहुत तेल घी ख़र्च करने ही से रसोई अच्छी नहीं बनती। तुम ग़रीब घरकी लड़की, हम सबों

के घर की रसोई का हाल क्या जानोगी। तुम समझती हो, ज़्यादा घी डाल देने ही से उमदा हो जायगा।"

कमला इन सब बातों का कुछ जवाब न देती थी, जैसे वह सुनती ही न हो, चुपचाप वह घर का काम किये जाती थी।

आज अपने अपमान की बात को मन ही मन सोचती हुई कमला चुपचाप तरकारी बना रही थी। सारा संसार उसे विष-मय और अपना जीवन भार सा जान पड़ता था। ऐसे समय में महामाया के घर से एक बात ने उसके कान में आकर उसे चौंका दिया। महामाया अपने नौकर को पुकार कर कह रही थी—"अरे तुलसी! तू जा, शहर से कमलनयन बाबू डाकृर को जल्द बुला ला। उनसे जाके कह, सरकार की तबीयत बहुत ख़राब है।"

कमलनयन बाबू का नाम कमला के हृदय में वीणानिनादित शब्द की भाँति गूँजने लगा। वह तरकारी बनाना छोड़ कर द्वार के पास आ खड़ी हुई! तुलसी को नीचे आते ही कमला ने पूछा—"तुलसी, तुम कहाँ जा रहे हो?"

उसने कहा—"कमलनयन बाबू को बुलाने जाता हूँ।"

कमला—"वे कैसे डाकृर हैं?"

तुलसी—"वे यहाँ के एक नामी डाकृर हैं।"

कमला—"वे कहाँ रहते हैं?"

तुलसी—"शहर ही में रहते हैं। उनका घर यहाँ से क़रीब ही है। एक मील होगा।"

लोगों को खिला पिला कर भोजन की जो कुछ थोड़ी घनी सामग्री बच जाती थी, कमला उसे नौकरों में बाँट देती थी। इसलिए कमला को कई दिन महामाया के दुर्वचन सहने पड़े हैं, पर तो भी उसकी यह आदत नहीं छुटती। विशेष कर (मालकिनी के) कठोर नियम के अनुसार इस घर के लोगों को खाने का बड़ा कष्ट था। इसके अतिरिक्त मालिक और मालकिनी के खाने पीने में देर हो जाती थी। जब वे खा पीकर निश्चिन्त होते थे, तब नौकर भोजन पाते थे। वे जब कमला के पास आकर कहते थे, "बड़ी भूख लगी है, तब उन्हें बिना कुछ खिलाये उससे रहा नहीं जाता था। किसी किसी दिन तो वह अपना हिस्सा उन सबों को खिला कर आप भूखी रह जाती थी। इससे घर के सब नौकर चाकर कमला की आज्ञा के वशवर्ती हो रहे थे।"

ऊपर से आवाज़ आई, "तुलसी, रसोई घर के दरवाज़े पर खड़ा होकर किसके साथ बात कर रहा है, तू समझता है, मुझे कुछ सूझता ही नहीं। शहर जाते समय एकबार रसोई घर का बिना दर्शन किये, जान पड़ता है, आगे को पैर ही नहीं उठता। तेरी यह चाल मुझे अच्छी नहीं लगती। मेरे घर की कितनी ही चीज़ें बाज़ार में बिकने जाती हैं, तेरे हो परामर्श से यह सब होता है। इस ब्राह्मणी को तो देखो, रास्ते पर अनाथिनी की तरह पड़ी थी, दया करके मैं इसे अपने घर ले आई। उसी का यह बदला दे रही है।"

सब लोग उसके घरकी वस्तु चुराते हैं, यह सन्देह महामाया के मनमें सदा बना रहता है। जब चुराने का कोई प्रमाण नहीं मिलता तब भी वह नौकरों को दो चार खरी खोटी सुनाने में नहीं चूकती।

आज महामाया के कठोर भाषण की चोट कमला के हृदय में न लगी। वह आजकल यन्त्र की तरह काम कर रही है। उसका मन कहीं और ही जगह जा लगा है। केवल शरीर मात्र यहाँ है।"

नीचे रसोई घर के दरवाज़े पर खड़ी होकर कमला किसी के आने की प्रतीक्षा कर रही थी। इसी समय तुलसी शहर से लौट आया। परन्तु अकेला आया। कमला ने धीरे से पूछा—"तुलसी क्या डाकूर बाबू नहीं आये?"

तुलसी—"नहीं, वे नहीं आये!"

कमला—"क्यों नहीं आये?"

तुलसी—"उनकी माँ बीमार हैं।"

कमला—"माँ बीमार हैं? क्या उनके घर में और कोई नहीं है?"

तुलसी—"नहीं, उन्होंने अब तक ब्याह नहीं किया है।"

कमला—"ब्याह नहीं किया है, यह तुम ने कैसे जाना?"

तुलसी—"उनके नौकरों के मुँह से सुना है कि उनके स्त्री नहीं है।"

कमला—"शायद उनकी स्त्री मर गई हो।"

तुलसी—"यह हो सकता है। लेकिन उनके नौकर सब तो कहते हैं कि जब वे रंगपुर में डाकूरी करते थे, तब भी उनके जोरू न थी।"

ऊपर से पुकार हुई—"तुलसी।" कमला झटपट रसोई घर में चली गई और तुलसी ऊपर गया।

कमलनयन रंगपुर में डाकृरी करते थे—यह सुन कर कमला के मन में कुछ भी सन्देह न रहा। तुलसी जब नीचे आया तब कमला ने फिर उससे पूछा—"डाकृर बाबू के नाम का एक व्यक्ति मेरे आत्मीय हैं। कहो, वे ब्राह्मण ही हैं न?"

तुलसी—"हाँ, ब्राह्मण, चटरजी।"

मालकिनी के तीव्र दृष्टिपात के भय से तुलसी देर तक कमला के साथ बात चीत न कर सका। वह चला गया।

कमला ने महामाया के पास जाकर कहा—"घर का सब काम धन्धा करके मैं आज एकबार दशाश्वमेध घाट स्नान करने जाऊँगी।"

महामाया झुँझला कर बोली—"तुम समय असमय कुछ नहीं समझती। सरकार की तबीयत आज ख़राब है, कब क्या दरकार होगा, यह कौन जाने। आज तुम्हारे जाने से कैसे बनेगा?"

कमला—"ख़बर लगी है, मेरे एक आत्मीय काशी में हैं। उनको एक बार देखने जाऊँगी।"

महामाया—"यह सब अच्छी बात नहीं है। तुम्हारे मन की अवस्था दिन दिन बदलती जाती है। मैं बहुत दिनों की हूँ। यह सब खेल कौतुक समझती हूँ। यह ख़बर तुमको किसने ला दी? मालूम होता है तुलसी ने। उस छोकड़े को मैं आज ही निकाल बाहर करती हूँ। सुनो, बाभनी! जब तक मेरे यहाँ रहोगी,

सब तक अकेली किसी घाट पर स्नान करने को जाना, या अपने घानेदार की खोज में महल्ले महल्ले घूमना, यह सब बात न चलेगी। यह तुम से मैं आज ही कह रखती हूँ।"

दरबान को हुक्म हो गया कि वह अभी तुलसी को हाते से बाहर कर दे, फिर वह कभी हाते के भीतर आने न पावे।

कमलनयन का जब तक कोई पता कमला को मालूम न था तब तक वह निश्चिन्त थी। उसके मन में धैर्य था। अब उसे धैर्य की रक्षा करना कठिन हो गया। वह एकाएक अधीर हो उठी। इसी शहर में उसके स्वामी हैं। अब क्षण भर के लिए दूसरे के घर में रहना उसे असह्य बोध होने लगा। चित्त की अस्थिरता के कारण बात बात में उससे त्रुटि होने लगी।

महामाया ने कहा—"तुम्हारी चाल ढाल अच्छी नहीं दीखती। तुम्हारे मन में क्या है, उसका कुछ पता नहीं लगता। क्या तुम्हारे सिर पर भूत तो नहीं सवार हुआ? तुम ने अपना खाना पीना छोड़ दिया है, उसी से क्या हम सबों को भी भूखों मार डालोगी? अब तो तुम्हारे हाथ की रसोई मुँह में देने योग्य नहीं होती।"

कमला—"मुझ से यहाँ का काम न होगा। मेरा जी अब यहाँ नहीं लगता। मुझे बिदा कर दीजिए।"

महामाया गरज कर बोली—"ठीक है, कलिकाल में किसी का उपकार करना भला नहीं। तुम्हारे ऊपर दया करके मैंने इतने दिनों के वैसे अच्छे पुराने रसोइया बाभन को मौकूफ़ कर दिया। फिर उसकी कुछ ख़बर तक न ली। अगर तुम सबे

बाभन की लड़की होती तो कभी न कहती कि मुझे बिदा कर दो।" अगर तुम भागने की चेष्टा करोगी तो मैं पुलिस में ख़बर दूँगी। मेरा लड़का हाकिम है, यह तुम्हें अच्छी तरह मालूम है। उसके हुक्म से कितने ही लोग फाँसी पा चुके हैं। मेरे पास तुम्हारी चालाकी न चलेगी। तुमने सुना ही होगा, गुमानी नौकर ने सरकार के मुँह पर सवाल जवाब किया था, उसका फल उस कमबख़्त को तुरन्त मिल गया। अब भी वह जेल की मिट्टी खोद रहा है। क्या तुम हम सबों को मामूली आदमी समझती हो?"

यह बात झूँठ न थी। उसने गुमानी को घड़ी चुराने की इल्ज़ाम लगा कर क़ैद करा दिया था।"

कमला कुछ न बोली। उसे यहाँ से भागने का कोई उपाय न सूझा। हाथ बढ़ाने ही से जब वह जीवन-फल पा सकती थी, तब उसके हाथ को बाँध देना कैसी निष्ठुरता और निर्दयता का काम है? दिन भर तो उसे काम करने से फ़ुरसत न मिलती थी। रात का सब काम ख़तम हो जाने पर वह जाड़े का कोई कपड़ा ओढ़ कर बाग के भीतर चली जाती थी। दीवाल के पास खड़ी होकर वह उस रास्ते को ओर टकटकी बाँध कर देखती थी, जो शहर की ओर गया है। उसका जो तरुण हृदय सेवा के लिए व्याकुल हो रहा था, आत्म समर्पण के लिए व्यग्र हो रहा था, उस हृदय को वह इस गहरी रात के सूने मार्ग से किसी एक अपरिचित घर का पता लगाने को भेजती थी। तिस के अनन्तर बड़ी देर तक वह चित्रवत् खड़ी हो धरती में सिर टेक प्रणाम करके अपने शयन गृह में लौट आती थी।

किन्तु इतना भी सुख, इतनी भी स्वाधीनता, कमला के हाथ में अधिक दिन न रही।

रात का सब काम हो जाने के बाद एक दिन महामाया ने किसी कारण कमला को बुला भेजा। दरवान ने आकर कहा—"बामनी देवता से भेट नहीं हुई। न मालूम वह कहाँ गई?"

महामाया घबराकर बाली—"क्या वह भाग तो नहीं गई?"

महामाया हाथ में लालटेन लेकर ख़ुद घर घर में खोज आई। कमला को कहीं न देखा। मुकुन्द बाबू आँख मूँदे तम्बाकू पी रहे थे। महामाया ने उनसे जाकर कहा—"सुना, रसोई बनाने वाली शायद रफूचक्कर हुई।"

इस आश्चर्य भरे कण्ठस्वर से भी मुकुन्द बाबू की शान्ति भङ्ग न हुई।

उन्होंने अलसाये हुए कण्ठ से कहा—"मैंने तो पहले ही तुम से कह दिया था, "अज्ञातकुलशीलस्य वासो देयो न कस्य-चित्।" कुछ ले तो न गई?"

महामाया—"उस दिन जो जाड़े का कपड़ा उसे ओढ़ने को दिया था, वह घर में नहीं है। इसे छोड़ और क्या सब गया है, यह अभी कैसे कहूँ?"

मुकुन्द बाबू ने गम्भीर स्वर में कहा—"पुलिस में ख़बर देदो।"

एक नौकर हाथ में लालटेन ले बाहर हुआ। इतने में उसने कमला को घर आते देखा। महामाया अपने घर की सब

वस्तुओं का मुलाहज़ा कर रही थी, कोई चीज़ चोरी गई है, या नहीं, इसी की देख भाल कर रही थी। ऐसे समय में कमला को आते देख महामाया बोल उठी—"तुम एक अजीब जानवर जान पड़ती हो। इतनी रात को तुम कहाँ गई थी?"

कमला—"काम सब होजाने के बाद मैं ज़रा मन बहलाने के लिए बाग़ में घूमने गई थी।"

महामाया के मुँह में जो कुछ आया बक गई। घर के सभी नौकर चाकर दरवाज़े के पास आ इकट्ठे हुए।"

कमला महामाया के कठोर से भी कठोर भर्त्सना-वाक्य से उसके सामने न कभी रोती थी और न कुछ जवाब देती थी। आज भी वह काष्ठ-मूर्ति की भाँति खड़ी रही।

महामाया जब वाक्य-बाण बरसा कर कुछ शान्त हुई तब कमला ने कहा—"मुझसे आप नाखुश हैं, मेरा रहना अब यहाँ उचित नहीं है। मुझे विदा कर दीजिए।"

महामाया—"विदा तो कर ही दूँगी। तुम्हारी जैसी नमक-हराम को खाना कपड़ा देकर मैं अधिक दिन अपने यहाँ रक्खूँगी, यह कभी ख़याल में भी न लाना। किन्तु कैसे लोगों के हाथ में पड़ी हो, यह पहले अच्छी तरह जता कर तब विदा करूँगी।"

कमला को तबसे बाहर जाने का साहस न होता था। वह किवाड़ बन्द कर के भीतर जब तब मन में यही सोच कर धीरज धरती थी कि जो मनुष्य इतना कष्ट सह

रहा है, ईश्वर अवश्य ही उसका किसी न किसी दिन उद्धार करेंगे !"

मुकुन्द बाबू अपने दो नौकर को साथ ले गाड़ी करके हवा खाने निकले हैं। मकान का सदर दरवाज़ा भीतर से बन्द है। साँझ होने में अब विलम्ब नहीं है।

दरवाज़े के पास आकर बाहरसे किसी ने पुकारा—"मुकुन्द बाबू घर में हैं ?"

महामाया चकित हो बोल उठी—"देखो, देखो, कमल-नयन बाबू डाक्टर आये हैं। बुधिया कहाँ गई।"

बुधिया नाम की दासी वहाँ न थी। तब महामाया ने कमला से कहा—"जल्दी जाकर दरवाज़ा खोल दो। डाक्टर बाबू से कहना, "सरकार हवाखाने बाहर गये हैं। अब आते होंगे कुछ देर बैठें।"

कमला लालटेन लेकर नीचे गई—"उसके पैर काँप रहे थे, छाती धड़क रही थी। उसे भय होने लगा कि पीछे कहीं इस व्याकुलता में पड़ कर वह उन्हें अच्छी तरह न देख सके।"

कमला भीतर से साँकल खोल कर मुँह पर घूँघट डाल किवाड़ की आड़ में खड़ी हो रही।

कमलनयन ने पूछा—"बाबू घर पर हैं ?"

कमला थरथराती हुई ज़बान से बोली—"नहीं, आप बैठिए।"

कमलनयन कमरे में आकर बैठे। इतने में बुधिया ने आकर कहा—"सरकार घूमने गये हैं, अब आते होंगे, थोड़ी देर, आप बैठें।"

कमला अपने आनन्दोल्लास को न रोक सकती थी। इससे उसके हृदय में कष्ट होता था। वह धीरे धीरे बरामदे की एक ऐसी अँधेरी जगह में जा खड़ी हुई जहाँ से कमलनयन का मुँह स्पष्ट दिखाई देता था। किन्तु वह देर तक खड़ी न रह सकी। चञ्चल हृदय को शान्त करने के लिए उसे वहाँ बैठ जाना पड़ा। उसके हृत्कम्प के साथ जाड़े की हवा ने योग दे कर उसे थर थर कँपा दिया।

कमलनयन मेज़ के पास, लम्प की ओर मुँह करके, बैठे मन ही मन कुछ सोच रहे थे। काँपती हुई कमला अन्धकार के भीतर से कमलनयन के मुँह की ओर टकटकी बाँधकर देख रही थी। देखते ही देखते उसकी आँखों में आँसू भर आये। उसने झट आँचल से आँखें पोंछ अपनी एकाग्रदृष्टि के द्वारा कमलनयन को अपने अन्तःकरण के बीच खींच लिया। मानो उसके हृदयपट पर कमलनयन का मनोहर चित्र अङ्कित हो गया। कमला जिधर देखती है उधर ही उसे वह मनोहर मूर्ति दिखाई देती है। कमलनयन के मुख की शोभा मानो उसकी आँखों में बस गई।

इस तरह कमला कुछ देर तक होश में थी या बेहोश, यह कहा नहीं जा सकता। ऐसे समय में हठात् एकबार उसने चकित हो देखा, कमलनयन खड़े होकर मुकुन्द बाबू के साथ बात कर रहे हैं।

वे दोनों बात करते करते कभी बरामदे में चले आवें और कमला को देख लें—इस भय से कमला बरामदे को छोड़ नीचे उतर आई और अपनी रसोईघर के द्वार पर जा बैठी। आँगन

के एक तरफ़ रसोईघर था । यही आँगन मकान के भीतर से बाहर होने का मार्ग था ।

कमला आनन्द से पुलकित होकर मन में कहने लगी, "मेरे समान हतभागिनी के ऐसे स्वामी । देवता के सदृश इनकी क्या ही सुभग प्रसन्न मूर्ति है ! इनके दर्शन से अब मेरे सब दुःख सार्थक हुए ।" यह कह कर वह बार बार ईश्वर को प्रणाम करके धन्यवाद देने लगी ।

सीढ़ी से नीचे उतरने की आहट सुन पड़ी । कमला झट उठ कर द्वार के पास अँधेरी जगह में जा खड़ी हुई । बुधिया लालटेन लेकर आगे आगे चली । कमलनयन उसके पीछे आ रहे थे । जब वे कमला के दृष्टिपथ से बाहर हो गये तब वह मन में कहने लगी—"नाथ ! यह तुम्हारे चरण की दासी दूसरे के द्वार की सेवा करके यहाँ समय बिता रही है । तुम सामने से होकर चले गये तो भी इस दासी को न पहचान सके ।"

मुकुन्द बाबू जब भोजन करने गये तब कमला धीरे धीरे उस बैठक में गई । जिस कुरसी पर कमलनयन बैठे थे, उसके सामने की धरती में सिर टेक कमला ने वहाँ की धूल सिर पर लगाई । सेवा करने का कोई आधार न पाकर कमला का हृदय भक्ति से अधीर हो उठा ।

दूसरे दिन कमला ने सुना, डाक्टर बाबू ने हवा पानी बदलने के लिए मालिक को काशी की अपेक्षा विशेष स्वास्थ्य कर स्थान जो यहाँ से अधिक दूर पच्छिम हो, जाने की सलाह दी है । इसी से उनके जाने की तैयारी आज ही से शुरू हो गई ।

कमला ने महामाया से जाकर कहा—"मैं काशी छोड़कर न जा सकूँगी।"

महामाया—"क्यों? हम सब जायँगी, तुम क्यों न जा सकोगी? काशी में बड़ी भक्ति देखती हूँ।"

कमला—"आप जो कहिए, मैं यहीं रहूँगी।"

महामाया—"अच्छा, तुम कैसे यहाँ रहती हो। यह भी देखना है।"

कमला—"मुझपर दया कीजिए, मुझे यहाँ से न ले जाइए।"

महामाया—"तुम बड़ी ख़ूँख़ार औरत जान पड़ती हो। ठीक जाने के समय विघ्न करने लगी। मुझे जलदी में यहाँ कौन आदमी मिलेगा? तुम्हारे बिना हम सबों का काम कैसे चलेगा?"

कमला के सब अनुनय-विनय व्यर्थ हुए। कमला अपने घर का द्वार बन्द करके भगवान् को पुकार कर रोने लगी।

तिरपनवाँ परिच्छेद

जिस दिन सन्ध्या होने के अनन्तर घनानन्द बाबू ने नलिनी के साथ कमलनयन के ब्याह का ज़िक्र किया था, उस दिन रात को फिर घनानन्द बाबू को वही दर्द कुछ कुछ मालूम होने लगा। रात किसी तरह कष्ट से कटी। सवेरे जब उनका दर्द कुछ कम हुआ तब वे अपने घर के पास वाले बाग़ में सड़क के किनारे एक तिपाई पर बैठे। नलिनी वहीं उनके चाय पानी का प्रबन्ध ठीक करने लगी। गत रात्रि के कष्ट से घनानन्द बाबू का मुँह सूख गया। एक ही रात में उनकी इतनी ताक़त घट गई है, जिससे मालूम होता है, वे कितने दिन के रोगी हों।"

जब घनानन्द बाबू के इस उदासी भरे चेहरे पर नलिनी की दृष्टि पड़ती थी, तब उसे यही जान पड़ता था, जैसे कोई उसके हृदय में छुरी भोंक दे। कमलनयन के साथ ब्याह करने में नलिनी को असम्मत देख करके वृद्ध व्यथित हो पड़े हैं, और उनकी यह मनोवेदना ही असल में उनके रोग का मुख्य कारण है। यह नलिनी के लिए अत्यन्त सन्ताप का विषय हुआ। उसे अब क्या करना चाहिए, किस तरह वह अपने बूढ़े बाप को सुखी रख सकेगी। बार बार सोचने पर भी इसका कोई उपाय उसे न सूझता था।

इसी समय अक्षय चक्रवर्ती को साथ लिए एकाएक वहाँ उपस्थित हुआ। नलिनी को वहाँ से हट जाने के हेतु उद्यत

देख अक्षय ने कहा—"आप ज़रा ठहरें, ये गाज़ीपुर के चक्रवर्ती महाशय हैं, इन्हें इस तरफ़ के सब लोग जानते हैं। ये आपसे कुछ कहने के लिए आये हैं।"

वहाँ पत्थर का एक चबूतरा सा बना था। उसी पर अक्षय और चक्रवर्ती जी बैठे।

चक्रवर्ती ने घनानन्द से कहा—"सुना है, रमेश बाबू के साथ आप की बड़ी घनिष्ठता है, इसी से मैं यहाँ आपसे पूछने आया हूँ, आपने उनकी स्त्री का कुछ समाचार सुना है?"

घनानन्द बाबू कुछ देर अवाक् हो रहे। पश्चात् आश्चर्य-युक्त स्वर में बोले—"क्या कहा? रमेश बाबू की स्त्री!"

नलिनी ने नज़र नीची कर ली। चक्रवर्ती ने नलिनी की ओर देखकर कहा—"मालूम होता है आप सब मुझे नितान्त असभ्य समझकर बात करने से जी चुराती हैं। पहले आप धीरतापूर्वक सब बातें सुन लीजिए, तब आप समझ जायँगी कि मैं दूसरे की बात लेकर आपसे विवाद करने नहीं आया हूँ। रमेश बाबू देवीपूजा के समय अपनी स्त्री को लेकर जब स्टीमर पर सवार हो पच्छिम को जा रहे थे, तभी से मैं उनको जानता हूँ, उसी स्टीमर पर उनसे मेरी जान पहचान हुई। आप तो जानते ही होंगे, कमला को जिसने एकबार देखा होगा, वह कभी उसे भूल नहीं सकता। मैंने अनेक सुख दुःख का समय देखा है। यही सब देखते सुनते बुढ़ापा भी आ गया। इस बुढ़ापे में भी कितने ही दारुण दुःख मुझे सहने पड़े हैं, जिससे मेरा हृदय पाषाण सा कठोर हो गया है। किन्तु उस कमला देवी

की सुध मेरे मन से पल भर भी नहीं टलती। रमेश बाबू कहाँ जायँगे, इसका उन्होंने कुछ निश्चय न किया था, परन्तु मेरे साथ परिचय होने पर कमला ने उन्हें गाज़ीपुर मेरे घर पर चलने के हेतु बाध्य किया। वहाँ आकर कमला को मेरी लड़की अन्नपूर्णा से बड़ा ही स्नेह हुआ। दोनों में सहोदर बहनों का सा सद्भाव था। परन्तु पीछे उसे क्या हो गया, क्या उसके जी में आया, यह मैं नहीं कह सकता। एकाएक वह हम सबों को छोड़ कर कहाँ गई क्या हुई इसका कुछ पता नहीं, तब से मेरी अन्ना बराबर उसके लिए रोती है। उसकी आँखों के आँसू सूखने नहीं पाते।"

यह कहते कहते चक्रवर्ती के दोनों नेत्रों से आँसू टपकने लगे।

घनानन्द ने व्यग्र होकर कहा—"उसे क्या हुआ, वह कहाँ गई?"

चक्रवर्ती ने अक्षयकुमार से कहा—"बाबू! आपने तो सब बात सुनी है, आप ही कहिए। कहते हुए मेरी छाती फटती है।"

अक्षय ने कमला और रमेश का सारा वृत्तान्त आदि से अन्त तक विस्तारपूर्वक वर्णन करके सुना दिया।

घनानन्द बाबू विस्मित हो बार बार कहने लगे—"हम सबों ने तो यह सब बात कभी कुछ न सुनी। रमेश जब से कलकत्ते को छोड़कर बाहर गये, तब से उनका एक भी पत्र न पाया।"

अक्षय ने उनकी बात में ज़ोर देकर कहा—"यहाँ तक कि उन्होंने जो कमला से व्याह किया यह भी हम सबों को ठीक ठीक

मालूम न था। अच्छा, चक्रवर्ती महाशय ! मैं आपसे पूछता हूँ आप तो उनका सब हाल जानते हैं, "कमला उनकी पत्नी थी या उसके साथ उनका कोई दूसरा नाता था ?"

चक्रवर्ती—"यह आप क्या पूछते हैं ? पत्नी न थी तो क्या थी ? वैसी सती स्त्री क्या सब को मिलती है ?"

अक्षय—"आप सच कहते हैं, परन्तु आश्चर्य यही कि स्त्री जितनी ही अच्छी मिलती है, पति के द्वारा उसका अनादर भी उतना ही अधिक होता है। ईश्वर अच्छे लोगों को ही कठिन परीक्षा में डाल देते हैं।" यह कहकर उसने लम्बी साँस ली।

घनानन्द अपने सिर पर हाथ फेरते हुए बोले—"निःसन्देह बड़े दुःख का विषय है, किन्तु जो होने को था हो गया, अब वृथा शोक करने से क्या फल !"

अक्षय—"मेरे मन में सन्देह है कि कमला आत्महत्या न करके कदाचित् काशीसेवन की इच्छा से यहाँ आई हो, इसीसे चक्रवर्ती जी को साथ लेकर मैं उसको खोजने आया हूँ। यह अच्छी तरह मालूम हो गया कि आप सब उसकी कुछ ख़बर नहीं रखते। ख़ैर, कुछ हो, दो चार दिन उसकी खोज करके देखना चाहिए।"

घनानन्द—"रमेश आज कल कहाँ हैं ?"

चक्रवर्ती—"वे तो हम सबों से बिना कुछ कहे सुने चले गये, कहाँ गये। यह मैं कैसे कहूँ ?"

अक्षय—"मुझसे तो उनकी भेंट नहीं हुई, पर लोगों के मुँह से सुना कि वे कलकत्ते गये हैं। शायद अब वे अलीपुर में वकालत करेंगे। मनुष्य का हृदय बड़ा कठिन होता है। वह बड़े से बड़े दुःखों का झेल सकता है। पर वे दुःख वा शोक अधिक दिन ठहर नहीं सकते। मनुष्य नये सुख की आशा में पुरातन शोक को भूल जाता है। विशेष कर रमेश की अभी नई उम्र है। चक्रवर्ती जी! चलिए, शहर में एकबार उसकी अच्छी तरह खोज करें।"

घनानन्द ने पूछा—"अक्षय बाबू! तुम तो यहीं ठहरोगे?"

अक्षय—"यह मैं ठीक नहीं कह सकता। मेरा मन स्थिर नहीं है। मैं जितने दिन काशी में रहूँगा, उसी खोज में रहूँगा। क्या कहते हैं! अच्छे घर की लड़की, अगर मन के विषाद से घर छोड़ कर यहाँ आई होगी तो उसे कितना कष्ट होता होगा! रमेश बाबू भले ही निश्चिन्त होकर रहें, परन्तु मैं नहीं रह सकता। जहाँ तक मुझसे हो सकेगा, उसे खोज निकालने का यत्न करूँगा।"

चक्रवर्ती को लेकर अक्षय चला गया।

घनानन्द बाबू ने बड़े उद्विग्न होकर एकबार नलिनी के मुँह की ओर देखा। नलिनी अपने मन को रोके चुपचाप बैठी थी। वह जानती थी, उसके पिता मन ही मन उसी के सम्बन्ध की बात सोच रहे हैं।"

नलिनी ने कहा—"बाबू जी! आज आप डाक्टर से एक-बार अच्छी तरह अपने शरीर की जाँच करावें। दिन दिन

आप का स्वास्थ्य बिगड़ा जाता है। इसका कोई यत्न करना उचित है।"

नलिनी की बात से घनानन्द को बड़ा सन्तोष हुआ। रमेश के गुप्त विषयों की उतनी बड़ी आलोचना होने के अनन्तर नलिनी ने जो घनानन्द की अस्वस्थता पर उद्वेग प्रकाश किया और उसके मुँह पर जो किसी अन्य प्रकार की घबराहट का चिह्न न था, इससे उनके मन का बोझ बहुत कुछ हलका हो गया। और दिन इस तरह की चर्चा होने पर वे अपनी बीमारी की बात उड़ा देने की चेष्टा करते थे। आज उन्होंने कहा—"अच्छी बात है, शरीर की परीक्षा करा लेता हूँ। तुम कहो तो आज कमलनयन बाबू को बुला भेजूँ।"

कमलनयन के सम्बन्ध में नलिनी कुछ संकुचित रहती थी। पिता के सामने उनके साथ पहले की तरह बात चीत करना उसके लिए कठिन होगा, तो भी उसने कहा—"क्या हर्ज है, उन्हीं को बुला भेजिए।"

घनानन्द ने नलिनी के मन का निर्मल भाव देखकर कहा—"रमेश का यह सब व्यापार—"

नलिनी ने बीच ही में बाधा देकर कहा—"बाबू जी! धूप अब कड़ी हो उठी, चलिए, अब कमरे के भीतर चलें।"

यह कहकर उन्हें उज्र करने का अवसर न देकर नलिनी चल दी। अगत्या घनानन्द भी उसके पीछे पीछे चले। नलिनी ने उन्हें बैठक में ले जाकर आरामकुरसी पर बिठा दिया। ऊपर से एक गरम कपड़ा उढ़ाकर उनके हाथ में एक अखबार दिया

और अपने हाथ से उनकी आँखों में चश्मा पहिरा कर कहा, आप अख़बार पढ़िए, मैं अभी आती हूँ।

घनानन्द ने सुसंयत बालक की भाँति नलिनी के आज्ञापालन की चेष्टा की, परन्तु उनका जी किसी तरह पढ़ने में न लगा। नलिनी के लिए वे उत्कण्ठित होने लगे। आख़िर अख़बार को मेज़ पर रख वे नलिनी को खोजने गये। देखा, जिस घर में वह रहती थी, वह बाहर से बन्द है।

वे चुपचाप बरामदे में घूमने लगे। बड़ी देर के बाद वे फिर एकबार नलिनी की खोज में गये। तब भी उसके घर का दरवाज़ा बन्द ही था। घनानन्द बाबू थक कर एक कुरसी पर बैठ रहे और अपने सिर पर हाथ फेरते हुए कुछ सोचने लगे।

कमलनयन बाबू डाक्टर ने घनानन्द के शरीर को जाँच कर देखा, और उचित उपचार बताकर नलिनी से पूछा—"घनानन्द बाबू के मन में क्या किसी तरह की विशेष चिन्ता तो नहीं है?" नलिनी ने कहा—"शायद होगी।"

कमलनयन—"यदि हो, तो पहले उनके मन से चिन्ता दूर करना आवश्यक है। मानसिक सुख से शारीरिक स्वास्थ्य का विशेष सम्बन्ध है। जब तक इनका चित्त चिन्ता रहित न होगा, ये सम्पूर्णरूप से स्वास्थ्यलाभ न कर सकेंगे। मेरी माता की भी यही अवस्था है। वे कभी कभी ऐसी सख़्त बीमार हो जाती हैं जो देखकर मेरी तबीयत घबरा जाती है कल क्या एक चिन्ता उनके मन में आई, जिसमें सारी रात वे जागती रहीं, एकबार भी न सोईं। मैं चाहता हूँ जिसमें वे किसी बात की कुछ चिन्ता न करें, परन्तु संसारी लोगों के लिए क्या यह कभी संभव है?"

नलिनी—"आप भी तो आज वैसे अच्छे नहीं देख पड़ते?"

कमलनयन—"नहीं, मैं तो बहुत अच्छा हूँ। उदास रहने का मेरा अभ्यास नहीं। कल रात में मुझे कुछ देर जागना पड़ा था, इसी से जान पड़ता है, आज मेरा चेहरा कुछ उदास दीखता हो।"

नलिनी—"आपकी माताकी सेवा करने के लिए यदि बराबर एक स्त्री उनके पास रहती तो बड़ा अच्छा होता। आप अकेले ठहरे, उसपर भी आप को कितने ही काम करने पड़ते हैं। बाहर जाने का तार बराबर लगा ही रहता है। न जायँ तो भी न बने। किस तरह आप उनकी सेवा कर सकेंगे?"

यह बात नलिनी ने सहज भाव से ही कही थी। बात उसने बहुत ठीक कही इसमें सन्देह नहीं। परन्तु कहने के साथ ही लज्जा ने उसे आ घेरा, वह मारे लज्जा के विवश हो पड़ी। उसके मन में हुआ कि कमलनयन बाबू मेरे कहने का कुछ और ही अर्थ न समझे। अकस्मात् नलिनी की इस लज्जा का अभिनव भाव देखकर कमलनयन को माता के प्रस्तावकी बात स्मरण हो आई।

नलिनी ने झट अपने को सँभाल कर कहा—"आप उनके पास एक दासी क्यों नहीं रख देते?"

कमलनयन—"मैंने तो कई बार चाहा, कि एक अच्छी दासी उनके पास रख दूँ, परन्तु वे इस बात को मंजूर नहीं करतीं। शहर की दासियाँ प्रायः भ्रष्टाचारिणी होती हैं। उन्हें

आचार-विचार बहुत कम रहता है। यही सोच कर शायद वे उसे अपनी सेवा में रखना नहीं चाहतीं। इसके सिवा उनका ऐसा दयालु स्वभाव है कि जो कोई कष्ट उठा कर उनकी सेवा करता है यह उन्हें सह्य नहीं होता। वे नहीं चाहतो कि उनके कारण किसी को कुछ कष्ट हो।"

इसके अनन्तर इस सम्बन्ध में और कोई बात न हुई। नलिनी ने कुछ देर चुप रह कर कहा—"आप के उपदेशानुसार चलने में कभी कभी भारी विघ्न उपस्थित होता है, जिससे मेरे साधन में बड़ा अन्तर पड़ जाता है। मुझे डर इस बात का है कि कहीं मेरी आशा व्यर्थ न हो जाय। क्या मेरा मन किसी दिन शान्तिसुख का भागी न होगा? क्या मैं यों ही विषय-वासना का बोझ सिर पर ले बाहर ही बाहर घूमती फिरूँगी?"

नलिनी की इस दीन वाणी से चिन्तित होकर कमल-नयन ने कहा—"देखिए, विघ्न हम सबों के हृदय की समस्त शक्ति को जाग्रत कर देने के लिए उपस्थित होता है। जो अटलभाव से अपने कर्तव्य पर स्थिर रहता है, उसे विघ्न क्या कर सकता है? आप हताश न हों। किसी दिन आपका अभीष्ट सिद्ध होहीगा।"

नलिनी—"क्या कल सवेरे आप एकबार यहाँ आने की कृपा करेंगे? आपको देख कर मुझे विशेष बल मिलता है।"

कमलनयन के मुँह पर जो एक स्थिर शान्ति का भाव था, उनके कण्ठस्वर में जो एक प्रकार की धीरता भरी थी, उससे नलिनी के विषयसन्तप्त हृदय को अत्यन्त सुख बोध होता था।

कमलनयन चले गये, परन्तु नलिनी के मन में कुछ सान्त्वना का विकाश कर गये। वह अपने शयनगृह के सामने बरामदे में खड़ी होकर शीतकाल की मोटी धूप से प्रकाशमान बाहरी दृश्य देखने लगी। उसके मन में ईश्वर के प्रकृति-सम्बन्धी अनेक भावों का उदय होने लगा। इसके अनन्तर वह कमल-नयन की माता की बात सोचने लगी—"उनके मन में कैसी चिन्ता है। रात में उन्हें नींद क्यों नहीं आती। क्यों वे रात भर जागती रहती हैं, यह नलिनी समझ गई। प्रथम तो उनके मनमें कमलनयन के ब्याह की चिन्ता है, दूसरे वे यह सोचती होंगी कि उनके परोक्ष में कमलनयन को कौन देखेगा। वे घरसे विरक्त होकर संन्यासी न हो जायँ।"

आज सबेरे नलिनी ने रमेश के जीवन-वृत्तान्त का जो कुछ थोड़ा सा अंश सुना है उससे उसके हृदय में एक ऐसी गहरी चोट लगी है, जिसके सहने के लिए आज उसे समस्त मान-सिक शक्ति का सहारा लेना पड़ा है। विचार करने से रमेश के लिए सोच करना उसे अब लज्जा का विषय जान पड़ता है। वह रमेश को अपराधी ठहराना भी नहीं चाहती। संसार के लाखों, करोड़ों मनुष्य भले या बुरे कामों में लगे रहते हैं, संसार पहिये की तरह दिनरात घूमता रहता है, नलिनी इन बातों के विचार का भार कहाँ तक अपने ऊपर ले सकती है। रमेश के सम्बन्ध की बात वह अपने मनमें लाना भी नहीं चाहती। बीच बीच में आत्मघातिनी कमला की बात स्मरण करके वह काँप उठती है। उसके मन में यह तरङ्ग उठती है, इस हतभागिनी की आत्महत्या के साथ क्या मेरा भी कोई सम्पर्क है? यह खयाल होते ही लज्जा, घृणा, और दया से उसका सम्पूर्ण हृदय व्याकुल हो उठता है। वह हाथ

जोड़ कर आँखों में आँसू भर कर गद्गद् कण्ठ से ईश्वर से प्रार्थना करती है—"भगवन्! मैंने तो कोई अपराध नहीं किया। तब मेरी यह दशा क्यों? मेरे इस बन्धन को तोड़ दो, मैं और कुछ नहीं चाहती। मुझे इस संसार में शान्तभाव से रहने दो।"

रमेश और कमला की घटना सुन कर नलिनी क्या समझती है, यह जानने के लिए घनानन्द बड़े उत्सुक हुए, इस विषय में नलिनी से कुछ पूछने का उन्हें साहस भी नहीं होता था। नलिनी बरामदे में चुपचाप बैठी सिलाई कर रही थी। घनानन्द वहाँ कई बार जाकर उसके चिन्तायुक्त मुँह को देख आये, पर उससे कुछ पूछ न सके।

नलिनी साँझ को डाक्टर की दी हुई दवा घनानन्द बाबू को दूध के साथ खिलाकर उनके पास बैठी।

घनानन्द बाबू ने कहा—"रोशनी को आँख के सामने से अलग कर दो।"

कुछ अँधेरा हो जाने पर घनानन्द बाबू ने कहा— "सबेरे जो बूढ़ा आदमी आया था, बहुत सीधा जान पड़ता था।"

नलिनी इस पर कुछ न बोली। घनानन्द इससे अधिक भूमिका न बाँध सके, उन्होंने कहा, "रमेश का वृत्तान्त सुनकर मुझे बड़ा आश्चर्य हुआ। उसके सम्बन्ध में कितने ही लोग कितनी ही तरह की बातें बोलते थे। मैं अब तक उन पर बिश्वास न करता था, परन्तु अब तो—"

नलिनी ने कातर कण्ठ से कहा—"बाबू जी! इन बातों की आलोचना करना छोड़ दीजिए।"

घनानन्द—"आलोचना करने की मेरी इच्छा नहीं है। परन्तु दैवयोग से जब किसी के साथ हमारे सुख दुःख का सम्बन्ध हो जाता है तब उस के आचरण की उपेक्षा करते नहीं बनता।"

नलिनी झट बोल उठी—"नहीं, नहीं, सुख दुःख का सम्बन्ध इस प्रकार जहाँ तहाँ न जोड़ना चाहिए। मैं भली भाँति जानती हूँ। मेरे लिए वृथा चिन्तित होकर मुझे लज्जित न कीजिए।"

घनानन्द—"बेटी, मेरी नाव अब किनारे लगी। जब तक तुम्हारे रहने की कोई जगह ठीक न होगी मेरा मन स्थिर न होगा। क्या मैं इसी तरह तुम्हें तपस्विनी की भाँति रखकर संसार से चल दूँगा?"

नलिनी चुप हो रही। घनानन्द बाबू ने कहा—"देखो बेटी! संसार में कोई एक आशा विफल होने से सब से विरक्त हो बैठना उचित नहीं। तुम कैसे सुखी होगी, तुम्हारा जीवन कैसे सार्थक होगा, इसकी चिन्ता बराबर मेरे मन में रहती है। मैं जानता हूँ, तुम्हारा किस में मङ्गल है, किस तरह तुम सुख पाओगी। मेरे प्रस्ताव की एक वार ही उपेक्षा न करो।"

नलिनी की दोनों आँखें डबडबा गईं। वह बोली—"आप ऐसी बात न कहें। मैं आपकी आज्ञा का कभी अनादर नहीं कर

सकती। आप जो आज्ञा दीजिएगा, मैं अवश्य उसका पालन करूँगी।"

घनानन्द अपने माथे पर हाथ फेरने लगे. और कुछ न बोले। दूसरे दिन सवेरे जब घनानन्द नलिनी को लेकर बाहर एक पेड़ के नीचे चाय पीने बैठे थे, तब अक्षय उनके पास आया। घनानन्द ने उसके मुँह की ओर देखा। अक्षय ने कहा—"अब तक कोई पता न लगा।" यह कहकर वह एक प्याला चाय लेकर एक ओर बैठ गया।

धीरे धीरे वार्तालाप आरम्भ हुआ, "रमेश बाबू और कमला का असबाब अब भी कुछ कुछ चक्रवर्ती महाशय के यहाँ पड़ा है। उसे वे कहाँ किसके पास भेजेंगे, यही सोच रहे हैं। रमेश बाबू आप का पता लगाकर अवश्य ही यहाँ आवेंगे, इस-लिए यदि आप के यहाँ—"

घनानन्द बाबू ने अत्यन्त क्रोध करके कहा—"अक्षय, तुम्हें कुछ भी व्यावहारिक ज्ञान नहीं है। रमेश मेरे ही यहाँ क्यों आवेंगे। उनकी चीज़ मैं अपने यहाँ रखने वाला कौन?"

अक्षय—"आप जो समझें, रमेश बाबू इस समय शोक-सन्तप्त होंगे, क्या अभी उन्हें सान्त्वना देना उनके पुराने बन्धु-वर्ग का कर्तव्य नहीं है? क्या आप उन्हें एकबार ही छोड़ देना चाहते हैं?"

घनानन्द—"तुम हम सबों को दुःखी करने के लिए क्यों इस बात को लेकर बार बार आन्दोलन करते हो। मैं तुमसे प्रार्थनापूर्वक कहता हूँ कि फिर कभी मेरे पास इस प्रसङ्ग की बात न चलाना।"

नलिनी ने कोमल स्वर में कहा—"बाबूजी, आप क्रोध न करें, स्वास्थ्य में हानि पहुँचेगी। अक्षय बाबू जो कहना चाहते हैं, कहें, इसमें क्या बिगड़ता है।"

अक्षय—"माफ़ कीजिए। मैं नहीं जानता था कि आप मेरे कहने का बुरा मानेंगे।" यह कह कर यह वहाँ से चल दिया।

चौवनवाँ परिच्छेद

मुकुन्द बाबू काशी त्याग करके सकुटुम्ब मेरठ जायँगे—इसका निश्चय हो गया। यात्रा का भी सब सामान ठीक हो गया। कल सवेरे मेरठ की यात्रा होगी। कमला के मन में इस बात की बड़ी आशा थी कि इस अरसे में ऐसी कोई घटना घटेगी जिससे उन सबों की यात्रा रुक जायगी। एक और आशा उसके मन में यह थी कि कमलनयन बाबू डाक्टर दो एक बार अपने रोगी को देखने आवेंगे। किन्तु उसकी इन दोनों आशाओं में एक भी फलित न हुई।

यात्रा की तैयारी की हलचल में कमला कहीं भाग न जाय, इस भय से महामाया उसे बराबर अपनी आँखों के सामने रखकर उसी के द्वारा बर्तन बिछौने आदि बँधवाने और यात्रासम्बन्धी अनेक काम करवाने लगी।

कमला एकान्त मन से इच्छा करने लगी कि आज की रात में उसे एक ऐसी भयानक बीमारी हो, जिससे उसे साथ ले जाना माहामाया के लिए असम्भव हो जाय। उस कठिन पीड़ा की चिकित्सा का भार किसी डाक्टर के ऊपर दिया जायगा। वह यह भी मनहीमन सोचती थी। उस बीमारी से यदि अन्त में उसकी मृत्यु हो ही जाय तो अन्त·काल में वह डाक्टर के पैरों की धूल सिर पर डाल कर सुख से मर सकेगी।

महामाया उस रात में कमला को अपने घर में लेकर सोई। स्टेशन जाने के समय उसे अपनी गाड़ी में बिठा लिया। मुकुन्द बाबू सेकेन्ड क्लास की गाड़ी में जा बैठे। महामाया कमला को लेकर ड्योढ़े दर्जे की गाड़ी में सवार हुई।

आख़िर काशी स्टेशन से गाड़ी रवाना हुई। जिस तरह मत्त हाथी लता को सूँड़ में लेकर भागता है, उसी तरह रेल गाड़ी कमला को लेकर गरजते गरजते भाग चली। कमला खिड़की से सिर निकाल कर तृषित नयन से बाहर की ओर देखती रह गई। महामाया ने कहा—"कमला, पान का डिब्बा कहाँ रक्खा?"

कमला ने पान का डिब्बा निकाल कर दिया। डिब्बा खोल कर महामाया ने कहा—"देखो, जो सोचा था, वही हुआ। तुम चूने की डिब्बी वहीं छोड़ आई। अब सोच करने ही से क्या होगा। जो काम मैं ख़ुद न देखूँगी, उसमें एक न एक नुक़ता लगा ही चाहे। लेकिन यह तुमने जानबूझ कर शैतानी की है। केवल मुझको सताने की इच्छा से। तुम्हारा यह खोटा स्वभाव मुझे अच्छा नहीं लगता। तुम अपनी दुर्वृत्ति से बराबर मेरा जी जलाया करती हो। तरकारी में कभी नमक नहीं तो कभी मसाला नहीं। तुम्हारे हाथ में कोई चीज़ ठहरने नहीं पाती। छूने के साथ ग़ायब हो जाती है। तुम समझती हो, तुम्हारी यह सब चालाकी मैं समझती ही नहीं। अच्छा, चलो मेरठ, तब देखा जायगा। तुम्हारी सब चालाकी निकल जायगी।"

गाड़ी जब पुल के ऊपर से होकर चली, कमला ने खिड़की से मुँह निकाल कर एकबार काशी शहर को देख लिया—इस

शहर में कमलनयन का घर किस तरफ़ था, यह वह न जानती थी, इसलिए रेलगाड़ी की तीव्रगति में घाट, मन्दिर और मकान, जो कुछ उसे देख पड़ा, सभी कमलनयन से भरा हुआ जान पड़ा।

महामाया ने कहा—"तुम इतना झुककर क्या देख रही हो, तुम चिड़िया नहीं हो, तुम्हारे पर नहीं हैं जो उड़ जाओगी!"

काशी का दृश्य कमला की दृष्टि से बाहर निकल गया, पर उसका चित्र जो उसके हृदय में खिंच गया है वह ज्यों का त्यों बना है। वह उसके अन्तःकरण की दृष्टि से बाहर नहीं निकल सकती।

इतने में गाड़ी मोग़लसराय में जा खड़ी हुई। कमला को स्टेशन का शोर गुल, लोगों की भीड़ आदि अभिनव दृश्य स्वप्नवत् प्रतीत होने लगा। वह कठपुतली की भाँति एक गाड़ी से उतर कर दूसरी गाड़ी में सवार हुई।

गाड़ी रवाना होने की आख़िरी घंटी बज चुकी। उसके चलने का समय हो गया। ऐसे समय में कमला एक परिचित कण्ठ स्वर सुनकर चौंक उठी। बाहर से किसी ने उसे "माँ" कहकर पुकारा। उसने प्लैटफ़ार्म की ओर मुँह घुमा कर देखा—सामने उमेश खड़ा है।

कमला का चेहरा मारे ख़ुशी के खिल गया। बोली—"उमेश!"

उमेश ने गाड़ी का द्वार खोल दिया, कमला झट गाड़ी से उतर पड़ी। उमेश ने कमला का पैर छू कर प्रणाम किया। उसका सर्वाङ्ग आनन्द से पुलकित हो गया।

इधर एक रेलवे कर्म्मचारी ने कोठरी का दर्वाज़ा बन्द कर दिया।

महामाया शोर गुल मचाने लगी—"अरी कमला, तू क्या करती है। गाड़ो चलने पर हुई, जल्द आ, अब देर नहीं है। तू किससे बात कर रही है? हरामज़ादी को कितनी देर से पुकार रही हूँ, जैसे सुनती ही न हो।"

महामाया की यह बात कमला के कान तक न पहुँची। गाड़ी सीटी बजा कर भक्भक् शब्द करती हुई स्टेशन से बाहर हो गई। महामाया हाथ मलकर रह गई। मानो उसके हाथ से सोने की चिड़िया उड़ गई।

कमला ने उमेश से पूछा—"तुम कहाँ से आते हो?"

उमेश—"गाज़ीपुर से।"

कमला—"वहाँ सब लोग अच्छे हैं? चक्रवर्तीजी का क्या हाल है

उमेश—"वे अच्छी तरह हैं?"

कमला—"मेरी बहन अन्नपूर्णा कैसे है?"

उमेश—"उसका हाल क्या पूँछती हो, वह दिन रात आपके लिए रोती ही रहती है।"

कमला की दोनों आँखों में आँसू भर आये। पूछा, उमिया का हाल कहो। वह अपनी मौसी को भूल तो नहीं गई ?"

उमेश—"तुम जो उसे एक जोड़ा गहना दे आई हो, जब तक वह उसे पहिराया नहीं जाता, तब तक वह किसी तरह दूध नहीं पीती। जब वह कहती है कि "मौसी कहाँ गई !" तब अन्नपूर्णा की आँख से आँसू टपक पड़ता है।

कमला—"तुम यहाँ क्या करने आये ?"

उमेश—"मुझे गाज़ीपुर का रहना अच्छा नहीं लगा, इसी से चला आया हूँ।"

कमला—"कहाँ जाओगे ?"

उमेश—"तुम्हारे साथ जाऊँगा।"

कमला—" मेरे पास एक पैसा भी नहीं है।"

उमेश—"मेरे पास है।"

कमला—"तुमने कहाँ पाया ?"

उमेश—"आप ने जो वह पाँच रुपया मुझको दिया था, अभी तक मेरे पास मौजूद है।"

यह कहकर उसने गाँठसे पाँच रुपया खोल कर दिखा दिया।

कमला—"तो चलो, हम तुम काशी चलें। कहो तुम्हारी क्या इच्छा है ? तुम टिकट ला सकोगे न ?"

उमेश—"क्यों नहीं ला सकूँगा।" यह कह कर वह टिकट ले आया। गाड़ी तैयार थी। उमेश ने कमला को ज़नानी गाड़ी में बिठा कर कहा—"मैं इसी गाड़ी के पास वाली कोठरी में रहूँगा।"

काशी-स्टेशन में उतर कर कमला ने उमेश से पूछा—"कहो, अब किधर चलोगे?"

उमेश—"माँ जी, आप कुछ चिन्ता न कीजिए, मैं आपो एक अच्छी जगह ले चलता हूँ।"

कमला—"तुम यहाँ का हाल क्या जानते हो, जो मुझे अच्छी जगह ले जाने की डींग हाँकते हो।"

उमेश—"मैं सब जानता हूँ। आप देखिए तो मैं कहाँ ले जाता हूँ।" यह कहकर कमला को एक किराये की गाड़ी में बिठा कर आप कोचबक्स पर जा बैठा। गाड़ी एक मकान के सामने जा खड़ी हुई। उमेश ने कहा—"माँ, यहाँ उतर जाइए।"

कमला गाड़ी से उतर कर उमेश के पीछे पीछे एक मकान के अंदर गई। उमेश ने पुकारा—"दादा जी?"

पार्श्ववर्ती एक घर से उत्तर आया—"कौन है उमेश! तुम कहाँ से आये?" चक्रवर्ती हाथ में हुक्का लिए स्वयं उपस्थित हुए। उमेश मुँह बन्द करके हँसने लगा। कमला ने चकित होकर चक्रवर्ती जी को प्रणाम किया। चक्रवर्ती जी अवाक् हो रहे। वे क्या बोलेंगे, कहाँ हुक्का रक्खेंगे, इसकी कुछ सुध उनके मन में न रही। आख़िर उन्होंने गद्गद् कण्ठ से कहा—"मेरी बेटी लौट आई, चलो, ऊपर चलो।"

"आरी अन्ना, यहाँ आकर देख तो जा, कौन आया है?"

अन्नपूर्णा हड़बड़ा कर घर से बाहर हो बरामदे की सीढ़ी के सामने आ खड़ी हुई। कमला उसके पैरों पर गिर पड़ी।

अन्नपूर्णा ने उसे उठाकर अपनी छाती से लगाया। कुछ देर तक दोनों प्रेम से विह्वल हो चुप रहीं। पीछे अन्नपूर्णा आँसू बरसाती हुई बोली—"हम सबों को रुलाकर तुम एकाएक इस तरह क्यों ग़ायब हो गई? भला इस तरह भी कोई कहीं जाता है?"

चक्रवर्ती—"अन्ना, यह सब बात पीछे होगी। अभी इसे ले जाकर मुँह हाथ धुलाओ, कुछ खाने पीने का प्रबन्ध कर दो।"

इसी समय उमा "मौसी मौसी" करती हुई दोनों हाथ फैला कर बाहर दौड़ी आई। कमला ने झट उसे गोद में उठा कर छाती से लगाया और बार बार उसका मुँह चूमा।

अन्नपूर्णा कमला के रूखे केश और मैला कपड़ा देख कर न रह सकी। उसने कमला को स्नानागार में ले जाकर बड़े यत्न से स्नान करा कर अपने संदूक़ से एक नई रङ्गीन साड़ी निकाल कर पहरने को दी। कहा, "मालूम होता है, कल रात में तुम्हें अच्छी नींद न आई, तुम्हारे दोनों नेत्र आलस्य से भरे हैं। तब तक तुम बिछौने पर जाकर सो रहो, मैं अभी रसोई का ठीकठाक करके तुम्हारे पास आती हूँ।"

कमला—"नहीं बहन, चलो, मैं भी तुम्हारे साथ रसोई-घर में जाऊँगी।" दोनों रसोईघर में गईं।

चक्रवर्ती जी अक्षय की सम्मति से जब काशी जाने को तैयार हुए तब अन्नपूर्णा ने उनसे कहा—"मैं भी आपके साथ काशी जाऊँगी।"

चक्रवर्ती—"विपिनविहारी को तो अभी जाने की छुट्टी नहीं है।"

अन्नपूर्णा—मैं अकेली ही जाऊँगी। माँ यहाँ हैं। किसी को कोई तकलीफ़ न होगी।"

अन्नपूर्णा ने इसके पूर्व इस तरह अलग होने का प्रस्ताव कभी अपने पति के साथ न किया था।

आखिर चक्रवर्ती को राज़ी होना पड़ा। अन्ना और अक्षय को साथ ले चक्रवर्ती जी गाज़ीपुर से काशी को रवाना हुए। काशी स्टेशन पर उतर कर देखा, "उमेश भी उन सबों के साथ ही गाड़ी से उतरा है। चक्रवर्ती ने पूछा—"अरे! तुम क्यों आये?"

उमेश ने कहा—"जिस मतलब से आप सब आये हैं, मैं भी उसी मतलब से आया हूँ।"

किन्तु उमेश तब तक चक्रवर्ती जी के घर का काम करने को नियुक्त हुआ था, उसके इस तरह चुपचाप चले आने से चक्रवर्ती की गृहिणी क्रुद्ध होंगी, इस हेतु सभी ने समझा बुझाकर उमेश को गाज़ीपुर लौटा दिया। तिसके बाद जो घटना हुई सो पाठक जानते ही हैं। वह किसी तरह गाज़ीपुर में न रह सका। अन्ना की माँ ने उसे कोई चीज़ लाने के लिए बाज़ार भेजा, वही पैसा लेकर वह सीधे बनारस चला आया। अन्ना की माँ ने समझा कि वह पैसा लेकर भाग गया। ख़ैर! थोड़े ही से हाथ धोकर वह उसका यों भाग जाना एक प्रकार से अच्छा ही समझ चुप हो रही।

पचपनवाँ परिच्छेद

उस दिन अक्षय चक्रवर्ती जी से एकबार भेंट करने आया था, परन्तु उन्होंने कमला के आने की बात उससे न कही। रमेश के साथ उसकी हार्दिक मित्रता नहीं है, यह वे समझ गये थे।

कमला क्यों चली गई थी, कहाँ चली गई थी, इस विषय में किसी ने उससे कुछ न पूछा। जैसे कमला इन सबों के साथ ही काशी देखने आई है। उमा की धाय ने स्नेह का आँसू ढलका कर उससे कुछ पूछना चाहा था, परन्तु चक्रवर्ती ने उसे एकान्त में बुलाकर मना कर दिया।

रात में अन्नपूर्णा ने कमला को अपने बिस्तर पर सुलाया, और वह आप भी उसे छाती से लगा कर सोई। दहना हाथ कमला की पीठ पर फेरने लगी। उसका यह कोमल हस्तस्पर्श नीरव प्रश्न की भाँति कमला से गुप्त मर्मान्तिक वेदना की बात पूछने लगा।

कमला ने कहा—"बहन, तुम सबों ने मेरे विषय में क्या समझा था? मुझ पर तुम सब बहुत नाराज़ हुई होंगी?"

अन्नपूर्णा—"क्या हम सबों को इतनी भी समझ नहीं है? क्या हम सब नहीं जानतीं, यदि संसार में तेरे लिए कोई अच्छा रास्ता रहता तो ऐसे संकीर्ण मार्ग का अनुसरण कदापि न करती। हम सब यही कहकर रोती थीं कि भगवान्

ने क्यों तुम्हें ऐसे संकट में डाल दिया। जो लोग कुछ अपराध करना नहीं जानता वह भी दण्ड पाता है।"

कमला—"बहन, तुम मेरा सब वृत्तान्त सुनोगी?"

अन्नपूर्णा ने कोमल स्वर में कहा—"हाँ, क्यों न सुनूँगी?"

कमला—"तब तुमसे मैं क्यों नहीं कह सकी, यह मैं नहीं जानती। उस समय मेरा चित्त स्थिर न था। सोच कर कोई बात देखने का समय न था। मेरे सिर पर एक ऐसी आफ़त का पहाड़ टूट पड़ा था कि मैं लज्जा से तुम सबों के आगे अपना मुँह न दिखा सकती थी। संसार में मेरे माँ बहन नहीं हैं, तुम्हीं मेरी माँ बहन दोनों हो। इस कारण मैं तुमसे जी खोलकर सब बात कहती हूँ। नहीं तो मेरा जो वृत्तान्त है वह किसीसे कहने का नहीं है।"

कमला अब सोई न रह सकी, उठ बैठी। अन्ना भी उसके सामने सावधान हो बैठी। कमला विवाह से आरम्भ करके अपना सारा जीवन वृत्तान्त कहने लगी।

कमला ने जब कहा—"विवाह के पहले या विवाह की रात में उसने अपने पति को न देखा" तब अन्नपूर्णा ने कहा—"तुम्हारी जैसी अबोध स्त्री तो मैंने देखी नहीं। तुम से भी कम उम्र में मेरा ब्याह हुआ था। क्या तुम समझती हो मैंने लज्जा से अपने वर को देखने का सुयोग न पाया। मुझे ख़ूब याद है, लोगों की आँख बचाकर मैं ने ब्याह की रात में भी दो तीन बार उनके मुँह की ओर देखा था।"

कमला—"लज्जा नहीं, बहन, मेरे ब्याह की उम्र प्रायः बीत गई थी। ऐसे समय में जब एकाएक मेरे ब्याह की बात स्थिर हो गई तब मेरी सखी सहेली सब मुझसे तरह तरह के व्यङ्ग करने लगीं। ज़्यादा उम्र में वरको पाकर जो मेरा मिज़ाज सात आसमान के ऊपर न चढ़ गया यह दिखलाने के लिए मैंने उनकी ओर पलक उठा कर देखा तक नहीं।"

बल्कि उनके सम्बन्ध की कोई बात मन में लाना भी मैंने बड़ी लज्जा और अमर्यादा समझ ली थी। आज उसी का प्रायश्चित्त कर रही हूँ।"

यह कह कर कमला कुछ देरतक चुप रही। उसके बाद फिर कहने लगी—"ब्याह होने के उपरान्त नाव डूबने पर कैसे हमारी प्राणरक्षा हुई यह मैंने तुमसे पहले ही कहा था। तब मैं यह न जानती थी कि मृत्यु के मुख से बचकर मैं जिसके हाथ पड़ी, जिसे मैंने अपना पति जाना, वह मेरा पति न था।"

अन्नपूर्णा चौंक उठी, वह कमलाके गले से लिपट कर बोली, "हाय रे दैव! इसीसे यह विडम्बना! अब मैं सब बात समझ गई। ऐसी भी अघटितघटना कभी होती है!"

कमला—"कहो तो बहन, मरने ही से सब आफ़त टल जाती! विधाता ने मुझे ऐसी विपत्ति में क्यों डाल दिया?"

अन्नपूर्णा—"क्या रमेश बाबू भी कुछ न जान सके?"

कमला—"विवाह के कुछ दिन बाद उन्होंने एक दिन मुझे सुशीला कहकर पुकारा। मैंने उनसे कहा, "मेरा नाम कमला है, आप मुझे सुशीला कहकर क्यों पुकारते हैं?"

अब मैं समझती हूँ, उसी दिन उनके कान खड़े हुए। किन्तु मुझे उसकी कुछ भी ख़बर न थी। तब की बात स्मरण होने से अब भी मेरा सिर लज्जा से झुक जाता है।" यह कहकर कमला चुप हो रही।

अन्नपूर्णा ने धीरे धीरे कमला का आदि से अन्त तक सब वृत्तान्त जान लिया। सब बात सुन लेने पर कहा, "बहन, तुम्हारे दौर्भाग्य का दोष है। किन्तु मैं यह सोचती हूँ, तुम भाग्य से ही रमेश के हाथ पड़ी थी। दूसरे के हाथ पड़ने से तुम्हारा उद्धार होना कठिन था। तुम जो कहो, रमेश बाबू की बात सोचने से मन में बड़ा दुःख होता है। अब रात अधिक हुई। तुम अब सो रहो। कई दिनों से बराबर जगे रहने और रोने के कारण तुम्हारी अजीब हालत हो गई है। अबजो कुछ करना होगा उसका निश्चय कल हो जायगा।"

रमेश के हाथ की लिखी वह चिट्ठी कमला के पास मौजूद थी। दूसरे दिन अन्नपूर्णा ने उससे वह चिट्ठी लेकर पिता को सूने घर में बुलाकर उनके हाथ में दी। चक्रवर्तीजी ने आँख में चश्मा लगाकर धीरे धीरे चिट्ठी पढ़ी। इसके बाद चिट्ठी मोड़कर चश्मा उतारकर रख दिया और कन्यासे कहा—"दैवी विचित्रा गतिः।" ख़ैर! अब क्या कर्तव्य है?

अन्नपूर्णा—"उमा कई दिनों से बीमार है, उसे कफ खाँसी हो गई है, एकबार कमलनयन बाबू डाकृर को बुला भेजिए। काशी में उनका और उनकी माता का बड़ा ही नाम है। एक-बार उनको इसे दिखा लीजिए।"

रोगी को देखने के लिए डाकृर आये। उनके देखने के लिए अन्नपूर्णा हड़बड़ा उठी। कमला से कहा,—"अरी, शीघ्र आ। देख तो कौन आता है?"

जो कमला महामाया के घर में कमलनयन को देखने के लिए मारे व्यग्रता के अपने को भूल गई थी, वही कमला आज लज्जा से उठना नहीं चाहती।

अन्नपूर्णा—"मैं अब अधिक देर तक तुमको इस दशा में न रहने दूँगी। यह अभी कह रखती हूँ। समय बहुत थोड़ा है। उमिया की बीमारी केवल नाम मात्र की है। डाकृर देर तक न रहेंगे। तुम्हारे मनाने ही में समय निकल जायगा तो उनसे मेरी भेंट न होगी।"

यह कहकर अन्नपूर्णा ज़ोर से कमला को खींचकर दरवाज़े के पास तक ले आई। कमलनयन उमा की छाती और पीठ की भली भाँति परीक्षा करके औषध बताकर चले गये।

अन्नपूर्णा ने कमला से कहा—"विधाता तुमको चाहे जितना दुःख दें तुम्हारा भाग्य अच्छा है। अब दो एक दिन तुम्हें धीरज धर कर रहना होगा। हम सब तुम्हारी व्यवस्था किये देती हैं। घबराना नहीं। इधर उमिया के लिए डाकृर की ज़रूरत बनी रहेगी, वे उसको देखने के लिए आवें ही गे। अतएव उनके दर्शन से तुमको वञ्चित न होना पड़ेगा।"

चक्रवर्ती एक दिन ऐसे समय में डाकृर को बुलाने गये, जब वे घर पर न थे। नौकर से पूछने पर मालूम हुआ "डाकृर बाबू नहीं हैं।" चक्रवर्ती ने कहा—"वे नहीं हैं, उनकी माता तो हैं, उनसे जाकर कहो, "एक वृद्ध ब्राह्मण उनका दर्शन करना चाहता है।"

ऊपर से पुकार हुई। चक्रवर्ती जाकर विनयपूर्वक बोले—"आपका नाम काशी में विख्यात है। इसी से आपका दर्शन कर कृतार्थ होने और अनायास पुण्यसंचय करने के लिए आया हूँ। और मैं कुछ नहीं चाहता। मेरी एक छोटी सी दौहित्री (नातिन) कुछ दिनों से बीमार है। आपके बेटे को बुलाने आया था। सुना, वे घर पर नहीं हैं। इसी से कहा कि कोरे हाथ न फिरूँगा। आपके दर्शन का फल लेकर ही जाऊँगा।"

कल्याणी—"कमल अब आता होगा। आप कुछ देर बैठने की कृपा करें। दिन दोपहर के क़रीब हुआ। आपके लिए कुछ जलपान मँगा देती हूँ।"

चक्रवर्ती—"मैं जानता हूँ, आप मुझे बिना कुछ खिलाये न जाने देंगी। मैं जो भोजनप्रिय हूँ, यह मुझको देखते ही लोग समझ जाते हैं और इस विषय में लोग मुझ पर कुछ विशेष दया भी करते हैं।"

कल्याणी चक्रवर्ती को जलपान कराकर बहुत प्रसन्न हुईं। उन्होंने चक्रवर्ती से कहा—"कल आपको मेरे यहाँ मध्याह्न भोजन का निमन्त्रण है। आज मैं प्रस्तुत न थी, इसीसे भली-भाँति आपको खिला न सकी।"

चक्रवर्ती ने कहा—"जब आप प्रस्तुत हों तब इस ब्राह्मण का स्मरण कीजिएगा। आपके घर से मेरा घर कुछ अधिक दूर नहीं है, कहिए तो मैं आपके नौकर को अपना घर दिखा दूँ।"

इस तरह चक्रवर्ती जी ने दो ही चार दिन के आने जाने से कमलनयन के घरवालों को आत्मीय बना लिया।

कल्याणी ने कमलनयन से कहा—"तुम चक्रवर्ती जी से कुछ न लेना।"

चक्रवर्ती ने हँस कर कहा—"वे पूर्व से ही मातृ-आज्ञा का पालन करते आते हैं। मुझसे आप कुछ नहीं लेते। जो दाता हैं, उदार हैं, वे गरीब को देखने ही पहचान लेते हैं।"

दो एक दिन बाप बेटी में परामर्श होने के बाद एक दिन सबेरे चक्रवर्ती ने कमला से कहा—"चलो बेटी, दशाश्वमेध घाट पर स्नान करने चलें।"

कमला ने अन्ना से कहा—"बहन, तुम भी चलो न।"

अन्ना—"नहीं, उमिया अच्छी नहीं है। मैं उसे छोड़ कर कैसे जाऊँगी।"

चक्रवर्ती जिस मार्ग से दशाश्वमेध घाट गये थे, स्नान करके उस मार्ग से न लौट कर एक दूसरे रास्ते से चले। कुछ दूर आगे जाकर देखा एक वृद्धा स्त्री स्नान करके पीताम्बर पहिरे ताँबे की कलसी में गङ्गाजल लिये धीरे धीरे आ रही हैं। कमला को उनके सम्मुख लाकर चक्रवर्ती ने कहा - बेटी, इनको प्रणाम करो। ये डाकूर बाबू की माँ हैं।"

कमला ने चकित होकर झट उनके पैरों पर सिर रख प्रणाम किया। कल्याणी ने कहा—"तुम कौन हो, देखूँ, देखूँ, तुम्हारा मुँह देखूँ।" यह कहकर उन्होंने उसका घूँघट हटाकर उसके झुके हुए मस्तक को ऊपर उठाकर देखा। बोलीं, अहा! यह तो साक्षात् लक्ष्मी की मूर्ति जान पड़ती है। बेटी! तुम्हारा नाम क्या है?"

उसके उत्तर देने के पूर्व ही चक्रवर्ती ने कहा—"इसका नाम "सती" है। यह मेरे दूर के नाते से भतीजी होती है। इसके माँ बाप कोई नहीं है। इसकी रक्षा का भार मेरे ही ऊपर है।

कल्याणी—"चलिए चक्रवर्तीजी, मेरे घर होकर जाइएगा।"

उनको घर ले जाकर कल्याणी ने कमलनयन को एकबार पुकारा। कमलनयन तब तक बाहर चले गये थे।

चक्रवर्ती चौकी पर बैठे। कमला उनसे कुछ दूर हटकर एक चटाई पर बैठी। चक्रवर्ती ने कहा—"देखिए, मेरी भतीजी का भाग्य बड़ा ही मन्द है। ब्याह होने के दूसरे ही दिन इसके पति संन्यासी होकर कहीं चले गये। यह नहीं जानती कि पति किसे कहते हैं। इसकी इच्छा तीर्थसेवन करने की है। यह चाहती है कि तीर्थ में रहकर धर्म्म कर्म्म का आचरण कर जीवन व्यतीत करे। सिवाय धर्म्माचरण के इसके धैर्य्य की और सामग्री ही क्या है। यहाँ मेरा घर नहीं है। मैं नौकरी करता हूँ। जो कुछ वेतन मिलता है, उसी से किसी तरह निर्वाह होता है। मैं जो यहाँ आकर इसके साथ रहूँगा, ऐसी मेरी सुविधा नहीं। इसी से आपकी शरण में आया हूँ। यदि आप इसे अपनी लड़की की भाँति अपने पास रख सकें तो मैं निश्चिन्त हो जाऊँ। जब आपको इसके रहने से किसी तरह की असुविधा जान पड़े तब आप इसे मेरे पास गाज़ीपुर भेज देंगी। किन्तु मैं आपसे इतना कह जाता हूँ। इसे दो दिन अपने पास रखने ही से आप समझ जायँगी कि यह कैसी रत्न है। तब आप

क्षण भर भी इसे अपनी आँखों के सामने से अलग न होने दूँगी। तब क्या आपको इसके छोड़ने का जी चाहेगा?"

कल्याणी ने प्रसन्न होकर कहा—"वाह, यह तो बड़ी अच्छी बात है। ऐसी लड़की को आप मेरे पास रक्खे जाते हैं, यह मेरे लिए विशेष लाभ है। मैं तो कई दिन रास्ते से दूसरे की लड़की को अपने घर लाकर उसे खिला पिला कोई रङ्गीन कपड़ा पहिना कर आनन्द मनाती हूँ। मैं छोटे बालक और बालिकाओं को बहुत प्यार करती हूँ। मेरा स्वभाव ही ऐसा है। परन्तु दूसरे के बच्चों को मैं घेर कर कैसे रख सकती हूँ। वे कुछ देर के लिए मेरे पास आते हैं। खेलकूद कर फिर अपने घर चले जाते हैं। यह तो बराबर मेरे पास रहेगी। मैं इसे अपनी बेटी की तरह रक्खूँगी। आप इसके लिए कुछ भी सोच फ़िक्र न करेंगे। मेरा पुत्र कैसा है यह तो आप ने दस पाँच सज्जनों के मुँह से सुना ही होगा। वह बड़ा ही सच्चरित्र है। उसके सिवा मेरे घर में और कोई नहीं।"

चक्रवर्ती—"कमलनयन बाबू का नाम कौन नहीं जानता? उनका सुयश सर्वत्र व्याप्त है। वे यहाँ आपके पास रहकर आप की सेवा करते हैं, यह जान कर मैं और भी निश्चिन्त हुआ। मैंने सुना है, विवाह होने के बाद किसी दुर्घटना के कारण जब से उनकी स्त्री पानी में डूब कर मर गई तब से वे एक प्रकार ब्रह्मचारी की भाँति रहते हैं।"

कल्याणी—"उस बात को जाने दीजिए, जो हो गई सो हो गई। उस घटना का स्मरण होते ही मेरा शरीर भय से काँप उठता है।"

चक्रवर्ती—"आपकी आज्ञा हो तो मैं इसे आपके पास रख कर अब बिदा होऊँ । कभी कभी आकर इसे देख जाऊँगा । इसके एक बड़ी बहन है। वह भी आपसे आशीर्वाद लेने आवेगी ।"

चक्रवर्ती के चले जाने पर कल्याणी ने कमला को अपने पास बिठा कर कहा—"बेटी, मुँह तो ऊपर उठाओ, तुम्हारी उमर तो अधिक नहीं जान पड़ती। अहा! तुमको छोड़कर चल दिया, फिर कभी तुम्हारी खोज ख़बर न ली। हा! संसार में ऐसे कठोर जीव भी हैं। मैं आशीर्वाद देती हूँ, तुम्हारा सुहाग बढ़े, वे फिर लौट आवें। ऐसा सुन्दर मुखड़ा विधाता कभी वृथा नष्ट करने के लिए नहीं बना सकता।" यह कहकर उन्होंने उसका चिबुक स्पर्श करके अपनी उँगली चूमी।

कल्याणी—"यहाँ तुम्हारी उम्र की कोई सखी सहेली तुम्हें न मिलेगी। तुम अकेली मेरे पास रह सकोगी न?"

कमला ने अपनी दोनों बड़ी बड़ी आँखों के द्वारा आत्म-निवेदन करके कहा—"हाँ, रह सकूँगी।"

कल्याणी—"तुम किस तरह रहकर समय बिताओगी, मैं यही सोचती हूँ।"

कमला—"मैं आपके घर का काम करूँगी, आपकी सेवा में बराबर हाज़िर रहूँगी।"

कल्याणी—"तू भोली है। तू ऐसा सुन्दर सुकुमार शरीर लेकर मेरे घर का काम कैसे करेगी। मेरे घर का काम ही कितना

है जो तू करेगी । तुझे क्या मैं अपने यहाँ दासी बनाकर रक्खूँगी? तू धीरज से रह, तेरे लायक़ जो काम होगा वह तुझे बता दूँगी । संसार में मेरे यही एक मात्र बेटा है । वह भी संन्यासी की तरह रहता है । दिनरात वेदान्त की बातों का मनन करता है । कभी वह मुँह खोल कर एकबार भी नहीं कहता कि "माँ, मुझे यह चाहिए । मैं यह खाना चाहता हूँ, यह चीज़ मेरे पसन्द की है, इसे मैं बहुत चाहता हूँ ।" कहता तो मैं कितनी ख़ुश होती । परन्तु वह कभी कुछ नहीं बोलता । रुपया ढेर कमाता है परन्तु हाथ में कुछ नहीं रखता । सब अच्छे कामों में ख़र्च कर देता है, परन्तु किस धर्मकार्य में क्या देना है यह किसी से नहीं कहता । देखो बेटी, जब तुमको चौबीस घण्टे मेरे पास रहना होगा तब यह बात पहले ही कह रखती हूँ, मेरे मुँह से मेरे पुत्र की बारबार प्रशंसा सुनकर तुम्हें ज़रूर बुरा मालूम होगा । किन्तु यह तुम्हें बरदाश्त करना होगा ।"

कमला ने आनन्द से पुलकित होकर आँखें नीची कर लीं ।

कल्याणी ने कहा—"मैं तुम्हारे हाथ में कौन काम दूँ, यही सोचती हूँ । सिलाई करना जानती हो ?"

कमला—"थोड़ा थोड़ा जानती हूँ ।"

कल्याणी—"अच्छा, मैं तुमको सिलाई सिखा दूँगी ।"

"पढ़ी लिखी हो ?"

कमला—"हाँ, हिन्दी लिखना पढ़ना जानती हूँ ।"

कल्याणी—"अच्छी बात है, आँख रहते भी बिना चश्मा के कुछ नहीं सूझता । तुम मुझे पढ़कर कुछ कुछ सुनाया करना ।"

कमला—"मैं रसोई बनाना जानती हूँ, और घर का सब काम सँभाल सकती हूँ ।"

कल्याणी—"तुम साक्षात् अन्नपूर्णा हो । तुम यह सब काम न जानोगी तो कौन जानेगा ! मैं कमल को अपने हाथ से रसोई बनाकर खिलाती हूँ । मेरे बीमार होने पर वह अपने हाथ से रसोई बना कर खाता है, परन्तु दूसरे के हाथ का बनाया कुछ नहीं खाता । अब मैं उसे अपने हाथ से रसोई बनाने न दूँगी । उसके स्वयं पाक का अभ्यास छुड़ाऊँगी। तुम्हारे रहने से मुझे बड़ी सहायता मिलेगी । बीमार हो जाने पर जब कभी मैं असमर्थ हो पड़ूँगी तब तुम चार दाने हविष्यान्न पकाकर मुझे खिलाओगी । तुम्हारे हाथ का हविष्यान्न खाने में मुझे अरुचि न होगी । चलो बेटी, मैं तुम्हें रसोईघर और भाण्डारघर सब दिखा लाऊँ ।"

कल्याणी ने घूम घूम कर अपना सब घर कमला को दिखलाया । कमला ने मौक़ा पाकर अपनी दरख़ास्त जारी की, कहा—"माँ, आज मुझी को रसोई बनाने दीजिए ।"

कल्याणी कुछ हँस कर बोली—"गृहिणी का विशेष अधिकार भाण्डारघर और रसोईघर पर रहता है । मैं अपने जीवन में सब कामों से धीरे धीरे हाथ खींचती आती हूँ । रसोई घर का काम मेरा साथ नहीं छोड़ता । वह अब तक मेरे साथ

लगा है। आज तुम्ही भोजन बनाओ। दो चार दिन बीतने पर सब कामों का भार क्रम क्रम से तुम्हारे ही ऊपर पड़ेगा। घर के सब कामों की देख भाल तुम्हीं को करनी होगी। मुझे भी ईश्वर में मन लगाने का समय मिलेगा। अभी दो चार दिन तुम्हारा चित्त चञ्चल रहेगा। भाण्डारघर के सिंहासन पर पाँव रखना क्या सहज है ?"

क्या पकाना होगा, क्या करना होगा, कमला को सब बता कर कल्याणी आप पूजाघर में चली गई। कल्याणी के पास आज से कमला के गृहकार्यकौशल की परीक्षा प्रारम्भ हुई।

कमला अपनी स्वाभाविक तत्परता के साथ रसोई का सब सामान ठीक करके रसोई बनाने लगी।

कमलनयन बाहर से लौट आने पर पहले अपनी माँ को देखने जाते थे। माँ के स्वास्थ्य सम्बन्ध की चिन्ता उनके मन में बराबर लगी रहती थी। आज घर में प्रवेश करते ही उन्हें रसोई-घर का शब्द सुन पड़ा और मसाले का गन्ध लगा। माँ रसोई बना रही हैं, समझ कर कमलनयन रसोई घर के द्वार के सम्मुख आ खड़े हुए। पैर की आहट सुन कमला ने चकित होकर ज्यों पीछे की ओर घूम कर देखा त्यों कमलनयन के साथ उसकी आँखों आँख भेट हो गई। उसने झट हाथ से चमचा रख सिर पर घूँघट डालने की वृथा चेष्टा की, क्योंकि रसोई बनाने के पूर्व ही उसने आँचल को कमर में बाँध लिया था। आँचल को किसी तरह खींच खाँच कर जब तक वह माथे को ढके ढके तब तक कमलनयन विस्मित हो वहाँ से चले गये। इसके बाद जब कमला ने हाथ में चमचा लिया, तब उस का हाथ काँप रहा था।"

कल्याणी झटपट पूजा समाप्त करके रसोईघर में गई, देखा, "रसोई तैयार हो गई है। घर को धो बना कर कमला ने साफ़ कर रक्खा है। कहीं जली लकड़ी या तरकारी के छिलके नहीं हैं। सभी स्थान परिष्कृत हैं। कहीं किसी तरह का मैलापन नहीं है। यह देखकर कल्याणी मन ही मन प्रसन्न हुई। बोली—"तुम यथार्थ में ब्राह्मण की लड़की हो।"

कमलनयन जब भोजन करने बैठे तब कल्याणी उनके सम्मुख बैठी। एक सकुचित मूर्ति चुपचाप द्वार की आड़ में खड़ी थी। झाँक कर देखने का उसे साहस न हो ताथा। रसोई बिगड़ न गई हो, इस भय से वह मरी जाती थी।

कल्याणी ने पूछा—"आज की रसोई कैसी हुई है?"

कमलनयन खाने पीने का वैसा शौकीन न था। जो उसके आगे आजाता था, बड़ी प्रसन्नता से खा लेता था। इसी से कल्याणी कभी ऐसा अनावश्यक प्रश्न उससे न करती थीं। आज उन्होंने कौतूहल से पूछा था।

कमलनयन जो आज के रसोईघर के नूतन रहस्य का परिचय पा चुके हैं, यह उनकी माँ न जानती थीं। माता का शरीर अस्वस्थ होने से कमलनयन ने रसोई बनाने के लिए एक व्यक्ति रख लेने के निमित्त माँ से कई बार निवेदन किया था। किन्तु वे किसी तरह अपनी माँ को इस प्रस्ताव पर राज़ी न कर सके थे। आज एक व्यक्ति को पाककार्य में नियुक्त देख वे मन ही मन प्रसन्न थे।

रसोई अच्छी हुई है या बुरी इस पर उन्होंने कुछ ध्यान न दिया; किन्तु वे बड़े उत्साह के साथ बोले—"रसोई बहुत अच्छी बनी है।"

ओट से यह उत्साहवर्धक बात सुनकर कमला स्थिर होकर खड़ी न रह सकी । उसने बड़ी फुरती से पास के दूसरे घर में जाकर अपने चञ्चल हृदय को दोनों बाहों से दबाया ।

भोजन करके कमलनयन मन में कुछ सोचते हुए अपनी ख़ास कोठरी में चले गये ।

दिन के पिछले पहर कल्याणी ने अपने हाथ से कमला के केश बाँध कर सिर में सिन्दूर कर दिया । उसके मुँह को एकबार इस तरफ एकबार उस तरफ घुमा फिरा कर अच्छी तरह देखा । कमला लज्जा से सिर झुका कर बैठ रही । कल्याणी ने मन में कहा, "अहा हा, यदि मैं ऐसी एक पतोहू पाती !"

उसी रात में कल्याणी को फिर ज्वर चढ़ आया । कमलनयन का मन उद्विग्न हो उठा । उन्होंने कहा—"माँ, मैं तुमको कुछ दिन के लिए काशी से कहीं अन्यत्र ले जाऊँगा । यहाँ तुम्हारा शरीर अच्छा नहीं रहता ।"

कल्याणी—"अच्छा ! यह न होगा । दोचार दिन बचा रखने की आशा से मुझे काशी छुड़ाकर कहीं अन्यत्र लेजाओगे, यह न होगा । मैं अब अन्तकाल में काशी छोड़ कहीं न जाऊँगी । (कमला की ओर देखकर) बेटी ! तुम बड़ी देर से किवाड़ की आड़ में क्यों खड़ी हो ? जाओ, जाओ सोने जाओ । सारी रात इस तरह जगी रहने से तुम भी बीमार हो जाओगी । मैं तो कई दिनों तक इसी अवस्था में रहूँगी । मेरी सेवा टहल सब तुम्हीं को करनी होगी । रात भर जागोगी तो दिन का काम कैसे कर सकोगी ? कमलनयन । तुम एकबार उस घर में जाओ ।"

कमलनयन के जाने पर कमला कल्याणी के पैर के पास बैठकर धीरे धीरे उसका तलुवा मलने लगी। कल्याणी ने कहा—"पूर्वजन्म में तुम ज़रूर मेरी माँ थी, नहीं तो न तुम्हारा कहीं नाम न तुम्हारी चर्चा, एकाएक तुम मेरे पास कैसे आ गई ? मेरा एक विचित्र स्वभाव है कि मैं किसी से अपनी सेवा कराना नहीं चाहती, दूसरे को अपना शरीर तक छूने नहीं देती। मुझे अपवित्रता का सन्देह सदा जी में बना रहता है। परन्तु तुम जब मेरी देह पर हाथ रखती हो तब मुझे बड़ा आराम मिलता है। तुम्हारे हाथ के स्पर्श से जान पड़ता है जैसे मेरा आधा दुःख दूर हो गया। मेरे मन में होता है जैसे मैं तुमको पहले से जानती होऊँ। यह बड़े आश्चर्य की बात है। यह नहीं मालूम होता है कि तुम दूसरी कोई हो। इसी से कहती हूँ, तुम अब सोने जाओ। मेरे लिए कुछ चिन्ता न करो। मेरे घरके पास ही के घर में कमल है। वह मेरी सेवा किसी के ऊपर न छोड़कर अपने हाथ से मेरी सेवा करता है, हज़ार मना करती हूँ तो भी वह नहीं मानता। बराबर मेरी सेवा में हाज़िर रहता है। परन्तु उसमें एक गुण है, वह रात भर जागे, चाहे कैसा ही परिश्रम का काम क्यों न करे, उसका मुँह ज़रा भी म्लान नहीं होता, उसका चेहरा देखकर कोई नहीं कह सकता कि उसने कुछ परिश्रम किया है या उस पर कोई सङ्कट आ पड़ा है। इसका कारण है। वह कभी घबराता नहीं। कैसा ही कठिन से कठिन समय क्यों न आवे वह धैर्य-च्युत नहीं होता। मैं ठीक उसके विपरीत हूँ। मुझ में उसका एक भी गुण नहीं। मैं समझती हूँ, तुम मन ही मन यह सोच कर हँस रही हो कि कमलनयन का गुणगान फिर आरम्भ हुआ। मैं चाहती हूँ कि उसकी प्रशंसा न करूँ, पर वह क्या

रोके रुकती है । हठात् मेरे मुँह पर आही जाती है । इकलौता बेटा रहने से ऐसे ही होता है । बेटी, मैं तुम से सच कहती हूँ । कमलनयन सा मातृभक्त बालक भाग्य ही से किसी माता को मिलता है । कभी कभी मेरे मन में होता है. कमलनयन मेरा बेटा नहीं, बाप है । उसने जितना मुझे सुख दिया है, जितना कष्ट मेरे लिए अङ्गीकार किया है, उतना क्या मैं उसके लिए कभी कर सकती हूँ । यह देखो, फिर कमलनयन की ही बात । अच्छा, अब न कहूँगी । तुम सोने जाओ । तुम्हारे रहने से मुझे नींद न आवेगी । वृद्ध के पास लोग रहने से उसे बकना छोड़ और कुछ अच्छा नहीं लगता ।"

दूसरे दिन कमला ही को गृहकार्य्य का सम्पूर्ण भार अपने ऊपर लेना पड़ा । कमलनयन ने पूरब ओर के उसारे में ईंट की दीवाल से घेर कर एक छोटी सी कोठरी बना ली थी, यही उनकी उपासना का घर था । दोपहर को इसी घर में बैठकर वे विश्राम करते थे । उस दिन सवेरे उस घर में प्रवेश करके कमलनयन ने देखा, घर लीपा पोता खूब साफ़ सुथरा है । धूप जलाने की एक पीतल की धूपदानी थी वह आज सोने की तरह झकाझक चमक रही है । ताक पर दावात कलम रक्खे हैं । छोटी सी आलमारी में उनकी कई एक सुपाठ्य पुस्तकें सिलसिलेवार रक्खी हैं । घर की इस निर्मलता के ऊपर खुली खिड़की की राह से प्रातःकालिक सूर्य की किरण पड़कर उसकी स्वच्छता को और भी अधिक बढ़ा रही है, यह देखकर स्नान करके आये हुए कमलनलन के मनमें बड़ी प्रसन्नता हुई ।

कमला बड़े तड़के घड़े में गङ्गाजल लेकर कल्याणी के बिछौने के पास आ खड़ी हुई । कल्याणी ने उसका नहाया शरीर देख

कर कहा—"यह क्या बेटी, तुम अकेली घाट गई थीं? मैं बड़ी देर से सोच रही थी, मैं बीमार हूँ, तुम किसके साथ स्नान करने जाओगी, तुम अभी कम उमर की हो, इस तरह अकेली जाना क्या—"

कमला—"मेरे बाप के घर का एक नौकर मुझको देखने के लिए कल रात में ही यहाँ आया था। मैं उसी को साथ लेकर गई थी।"

कल्याणी—"अहा! तुम्हारी चाची ने तुम्हारे विना अधीर होकर तुमको देखने के लिए नौकर भेजा है। भेजा तो अच्छा ही हुआ, वह तुम्हारे ही पास रहे न। तुम्हें उससे गृहकार्य्य में सहायता मिलेगी। तो वह कहाँ है, उसे पुकारो तो।"

कमला ने उमेश को लेकर उपस्थित किया। उमेश ने धरती में सिर टेक कल्याणी को प्रणाम किया। उन्होंने पूछा—"तेरा क्या नाम है?"

"मेरा नाम उमेश है।" यह कह कर वह अकारण हँस पड़ा।

कल्याणी ने उसे सीधा समझ कर पूछा—"उमेशा, ऐसे बहार का कपड़ा तू ने कहाँ पाया?"

उमेश ने कमला की ओर उँगली दिखाकर कहा—"माँ जी ने दिया है।"

कल्याणी ने कमला की ओर देख कर उमेश का परिहास किया। हँसकर कहा—"कमला ने तो तुम्हें लाल कपड़े पहिना कर पूरा दूल्हा बना दिया।"

कल्याणी की कृपा लाभ करके उमेश यहीं रहने लगा।

उमेश की सहायता पाकर कमला ने घर के सब आवश्यक काम एक ही दिन में समाप्त कर डाले। कमलनयन के शयनगृह को अपने हाथ से झाड़ बुहार कर साफ़ किया। उनके बिछौने को धूप में सूखने रख दिया। कमलनयन की एक मैली धोती घरके एक कोने में पड़ी थी। कमला ने उसे साबुन से धो कर अच्छी तरह सुखाकर, अरगनी पर रख दी। घर की जो सब चीज़ें साफ़ सुथरी थीं, उन्हें भी कपड़े से झाड़ पोंछ कर यथास्थान रक्खा। बिछौने के सिरहाने की ओर दीवाल में एक आलमारी बनी थी। उसे खोलकर देखा, उसके भीतर कुछ न था, नीचे के दर्जे में कमलनयन की सिर्फ़ एक जोड़ा खड़ाऊँ था। कमला ने झट उसे निकाल कर सिर में लगाया और छोटे बालक की भाँति उसे छाती के पास रख कर बारबार आँचल से उसकी धूल पोंछ कर फिर उसी में रख दिया।

अपराह्न को कमला कल्याणी के पैर के पास बैठकर उनके तलुवे में तेल मल रही थी। ऐसे समय में नलिनी ने हाथ में फूल की डाली लिये घर में प्रवेश कर कल्याणी को प्रणाम किया।

कल्याणी उठ बैठी और स्नेह भरे स्वर में बोली, आओ, आओ, बैठो, घनानन्द बाबू तो अच्छे हैं ?

नलिनी—"उनका शरीर अस्वस्थ था। इसी से कल न आ सकी। आज वे अच्छे हैं ।"

कल्याणी ने कमला को दिखाकर कहा—"यह देखो बेटी, बचपन में ही मेरी माँ मर गई, उन्होंने फिर जन्म लेकर इतने दिन बाद कल अकस्मात् रास्ते में मुझे दर्शन दिया। मेरी माता का नाम था पार्वती। इसबार उन्होंने सती नाम ग्रहण किया है। कहो तो, ऐसी लक्ष्मीमूर्ति तुमने कभी देखी थी?"

कमला ने लज्जा से सिर नीचा कर लिया। नलिनी के साथ उसका धीरे धीरे परिचय हो गया।

नलिनी ने कल्याणी से पूछा—"अब आपका शरीर कैसा है?"

कल्याणी—"मैं बहुत बूढ़ी हुई। मेरी जो उमर हुई है, उस से अब मेरे शरीर की अवस्था क्या पूछने योग्य है। मेरी आयुर्दा लेकर तुम सब जिओ। मैं जो अब तक जीती हूँ, यही मेरे लिए बहुत है। परन्तु अब नाव किनारे लगी। कुछ दिन की पाहुनी हूँ। किस दिन चल बसूँगी, इसका निश्चय नहीं। तुमने भला स्मरण दिलाया। मैं कितने दिनों से तुमसे कहना चाहती थी। पर कहने की सुविधा न मिलती थी। कल रात में जब फिर मुझे बुख़ार आया, तब मैंने निश्चय किया कि अब विलम्ब करना अच्छा नहीं। देखो बेटी, बाल्यावस्था में यदि मुझ से कोई ब्याह की बात करती तो मैं लज्जा से मर जाती, परन्तु तुम सबों की वैसी शिक्षा नहीं। तुम सब लिखी पढ़ी हो। उमर भी हुई है। तुमसे यह बात स्पष्ट कहना ही अच्छा है। इसीलिए आज तुम से सब बात ख़ुलासा कहती हूँ। तुम मुझ से लाज न करो। अच्छा, कहो तो उस दिन मैंने तुम्हारे बाप से जो प्रस्ताव किया था क्या वह उन्होंने तुमसे न कहा?"

नलिनी ने नज़र नीची करके कहा—"हाँ, कहा था ।"

कल्याणी—"शायद तुमने उस प्रस्ताव को स्वीकार न किया । अगर तुम उस प्रस्ताव पर सम्मत होती तो वे उसी समय मेरे पास दौड़े आते । तुमने सोचा होगा, "मेरा कमल संन्यासी है, दिन रात योग जप के पीछे हैरान रहता है । उसके साथ ब्याह होने से क्या सुख होगा ? परन्तु तुम सब उसे नहीं पहचान सकतीं । उसको बाहर से देखने से तुम्हें यही जान पड़ता होगा कि वह महा विरागी है किन्तु यह तुम्हारी भूल है । मैं उसे जन्म ही से जानती हूँ । मेरी बात का विश्वास करो । वह भीतर का बड़ा अनुरागी है । उसके हृदय में प्रेम भरा है, उसके छिपाने के लिए उसने संन्यास का ढोंग रचा है । उसके इस संन्यास-कवच को तोड़कर जो उस हृदय को पा सकेगा, वह अवश्य ही बहुत मीठा फल पावेगा । यह तुमसे कह रखती हूँ । बेटी नलिन, तुम अब बालिका नहीं हो । तुम पढ़ी लिखी हो, समझदार हो । तुमने मेरे ही कमल से मन्त्र लिया है । यदि मैं तुमको कमल की गृहिणी बनाकर मरूँगी तो मेरे मन में कोई चिन्ता न रहेगी । नहीं तो मैं तुमसे सच कहती हूँ, मेरे मरने पर वह कदापि विवाह न करेगा । तब उसकी क्या दशा होगी, यह तुम एकबार सोच देखो । कमलनयन पर तुम्हारी भक्ति और श्रद्धा भी है । तो फिर तुम्हें उज्र किस बात का है ।"

नलिनी ने सिर नीचा करके कहा—"यदि आप मुझे उस योग्य समझती हैं तो मुझे कुछ उज्र नहीं ।"

यह सुनकर कल्याणी ने नलिनी को अपने पास खींचकर बड़े प्यार से उसका शिरश्चुम्बन किया । इसके उपरान्त वे इस सम्बन्ध में और कुछ न बोलीं ।

"सती, यह फूल—" कल्याणी ने नज़र उठाकर देखा। सती घर में न थी। वह पैर की आहट बचाकर, कभी की घर से निकल गई थी।

पूर्वोक्त कथावार्ता के अनन्तर नलिनी को कल्याणी के पास बैठने में लज्जा मालूम होने लगी। उसने सकुच कर कहा—माँ, मैं अब जाती हूँ। बाबूजी मेरे आने की राह देखते होंगे। उनकी तबीयत अच्छी होती तो मैं कुछ देर और बैठती।" यह कहकर उसने कल्याणी को प्रणाम किया। कल्याणी ने उसके माथे पर हाथ रखकर कहा—"बेटी फिर आना।"

नलिनी के चले जाने पर कल्याणी ने कमलनयन को बुला कर कहा—"कमल, अब मैं बहुत विलम्ब न कर सकूँगी।"

कमलनयन—"समाचार क्या है?"

कल्याणी—"आज मैंने नलिनी से सब बात खोलकर कही, वह राज़ी हुई। अब मैं तुम्हारा कोई उज्र सुना नहीं चाहती। मेरे शरीर की अवस्था तुम देख ही रहे हो। तुम्हारे घर की कोई स्थिति बिना किये मैं किसी तरह निश्चिन्त नहीं हो सकती। आधी रात को जब मेरी नींद टूटती है, तब मैं इन्हीं सब बातों को सोचती हूँ। सोचते सोचते सवेरा हो जाता है।"

कमला—"माँ, आप सोच न करें, अच्छी तरह सोवें। जो आप कहिएगा, वही होगा।"

कमलनयन के चले जाने पर कल्याणी ने कमला को पुकारा। कमला पास के घर से तुरन्त उनके पास आकर हाज़िर हुई। तब दिन ढल जाने के कारण घर में कुछ

कुछ अँधेरा छा गया था। जिससे कमला का मुँह अच्छी तरह नहीं देखा गया। कलयाणी ने कहा—"बेटी, इन फूलों को जल से भिगो कर पूजा घर में सजाकर रख दो।" यह कहकर उन्होंने गुलाब का एक फूल उठाकर फूल-डाली कमला की ओर बढ़ा दी।

कमला ने उन में से कुछ फूल लेकर एक थाल में सजाकर कमलनयन के उपासनागृह में आसन के सामने रख दिये। कुछ फूल एक कटोरे में करके कमलनयन के सोने के घर में एक तिपाई पर रख आई। और जो कुछ फूल बच रहे, वे अलमारी खोलकर उस खड़ाऊँ पर चढ़ा दिये। खड़ाऊँ पर सिर रखकर प्रणाम करते समय उसकी आँखों से झर झर आँसू गिरने लगे। इस खड़ाऊँ के सिवा संसार में उसके और कोई नहीं। अब यही एक मात्र उसके जीवन की आधार बच रही। पति की पद सेवा का अधिकार भी वह खो बैठी है।

इसी समय घर के भीतर किसी को आते देख उसने झट-पट अलमारी को बन्द कर दिया। देखा, कमलनयन हैं। कमला के किसी ओर भागने की राह न मिली, वह लज्जा से सिमट कर कहीं बैठ गई, वह सोचने लगी कि कहा! मैं सायंकाल के अन्धकार में मिल क्यों न गई?

कमलनयन कमला को देखकर घर से बाहर हो गये। कमला झट उठ कर बड़ी फुर्ती के साथ दूसरे घर में चली गई। तब कमलनयन फिर उस घर में आये। कमला अलमारी खोल कर क्या करती थी, इसको देखकर उसने झट पट उसे बन्द

क्यों कर दिया ? यह जानने के हेतु कौतूहल वश कमलनयन ने आलमारी खोलकर देखा—"उनकी खड़ाऊँ पर कई एक फूल रक्खे हैं।" वे फिर आलमारी बन्द करके खिड़की के पास खड़े होकर आकाश की ओर देखने लगे। देखते ही देखते सूर्यास्त होगया। अन्धकार ने धीरे धीरे अपना अधिकार जमाना आरंभ कर दिया।

छप्पनवाँ परिच्छेद

नलिनी कमलनयन के साथ अपने ब्याह की सम्मति देकर मन को समझाने लगी, "मेरे लिए यह कम सौभाग्य का विषय नहीं है। मेरा पुराना बन्धन टूट गया। मैं अब स्वाधीन हो गई।" इस प्रकार मन ही मन धैर्य धारण करके एक बृहत् वैराग्य का आनन्द अनुभव किया।

घर आकर नलिनी ने मन में कहा—"अगर मेरी माँ जीती रहती तो आज मैं उससे इस अपूर्व आनन्द की बात कहकर उसे प्रसन्न करती। बाबू जी से मन की सब बातें कैसे कहूँगी।"

कमज़ोरी के सबब घनानन्द बाबू आज देर तक न बैठे। और दिन की अपेक्षा सबेरे ही सोने चले गये। नलिनी एक सादी बही लेकर अपने सोने के सूने घर में लिखने लगी—"मैं मृत्यु के महाजाल में फँस कर सारे संसार से अलग हो गई थी। ईश्वर उससे उद्धार कर मुझे फिर नवीन जीवन प्रदान करेंगे—यह आशा स्वप्न में भी न थी। आज उन जगन्नाटक-सूत्रधार के चरणों में बार बार प्रणाम कर मैं कर्तव्यक्षेत्र में प्रवेश करने को तैयार हूँ। मैं किसी तरह जो सौभाग्य पाने की अधिकारिणी नहीं, वही पा रही हूँ। ईश्वर मुझे वह शक्ति दे जिससे मैं आजीवन उस सौभाग्य की रक्षा कर सकूँ। भगवन्! आप से मेरी यही प्रार्थना है कि जिनके सुख दुःख की भागिनी आप मुझको बनाया चाहते हैं, मैं सदा निश्छल भाव से उनकी सेवा कर सकूँ।

इसके बाद वही बन्द करके वह जाड़े की उस अँधेरी रात में बाग़ की कँकरीली सड़क पर टहलने लगी। नक्षत्रखचित अनन्त आकाश ने उसके हृदय में निःशब्द शान्ति-मन्त्र का उच्चारण किया।

दूसरे दिन अपराह्न को जब घनानन्द बाबू नलिनी को लेकर कमलनयन के वहाँ जाने के लिए तैयार थे उसी समय फाटक पर एक गाड़ी आकर खड़ी हुई। कोचबक्स के ऊपर से कमल-नयन के एक नौकर ने उतर कर ख़बर दी, "डाक्टर बाबू की माँ आई हैं।"

घनानन्द बाबू तुरन्त फाटक के पास जा खड़े हुए। कल्याणी गाड़ी से उतर पड़ीं। घनानन्द ने कहा—"आज मेरा परम सौभाग्य है।"

कल्याणी—"आज आप की लड़की को देखने और उसे आशीर्वाद देने आई हूँ।" यह कहकर वे भीतर गईं। घनानन्द बाबू ने उन्हें बैठक में लेजाकर बड़े आदर से एक कम्बल के आसन पर बिठाकर कहा—"आप बैठें, मैं नलिनी को बुला लाता हूँ।"

नलिनी बाहर जाने के लिए अपने भूषण-वसन सँवार रही थी। कल्याणी के आने की बात सुनकर वह झट उनके पास आई और उनके पैर छू कर प्रणाम किया। कल्याणी ने कहा—"सौभाग्यवती होकर तुम दीर्घायु हो।" "देखूँ बेटी, तुम्हारा हाथ देखूँ" यह कहकर उन्होंने उसके दोनों हाथों में सोने का कड़ा पहिना दिया। नलिनी की पतली कलाई में सोने का मोटा कड़ा ढीला फिरने लगा। कड़ा पहिरने पर नलिनी ने फिर कल्याणी को धरती में सिर नवाय प्रणाम किया। कल्याणी ने दोनों हाथों

से उसका मुँह ऊपर को उठाकर उसे चूमा। इस आशीर्वाद और आदर से नलिनी के मन में एक विशेष आनन्द का संचार हुआ। उसका हृदय एक अपूर्व माधुर्य से परिपूर्ण हो गया।

कल्याणी ने कहा—"समधी महाशय! कल मेरे यहाँ आप दोनों जनों का निमन्त्रण है। सवेरे आने की कृपा कीजिएगा।"

दूसरे दिन सवेरे घनानन्द बाबू बाहर के कमरे में यथा-नियम चाय पीने बैठे हैं। पास में नलिनी बैठी है। घनानन्द का रोग से सूखा मुँह एक ही रात में हरा सा हो गया है। उस पर कुछ कुछ प्रसन्नता की झलक दिखाई दे रही है। वे रह रह कर स्नेहभरी दृष्टि से नलिनी के शान्तभावपूर्ण मुँह की ओर देख रहे हैं। उनके मन का उत्साह आज उनके चेहरे से लक्षित हो रहा है। वे चाय पीकर यही बार बार सोचते हैं कि कल्याणी के निमन्त्रण में जाने का समय होगया। अब तैयार होना चाहिए। विलम्ब करना उचित नहीं। नलिनी उनके मनका भाव समझ कर बार बार उन्हें यह कहकर आश्वासन देती थी कि "अभी बहुत समय है। अभी आठ ही बजे हैं।"

घनानन्द कहते थे, "तैयार होने में भी तो कुछ समय लगेगा। विलम्ब करके जाने की अपेक्षा कुछ पहले जाना अच्छा है।"

इतने में कई एक स्टीलबक्स और बिछौने आदि बोझों सहित एक गाड़ी आकर सदर फाटक के पास खड़ी हुई।"

नलिनी चौंक कर देखते के साथ ही "भैया आये!" कहकर फाटक की ओर दौड़ी।"

योगेन्द्र ने मुस्कुराते हुए कहा, "नलिनी अच्छी हो ?"

नलिनी—"क्या तुम्हारी गाड़ी में और कोई है ?"

योगेन्द्र ने हँस कर कहा—"हाँ, है तो, बाबूजी के लिए एक बड़ा दिन का उपहार लाया हूँ ।"

इतने में रमेश भी गाड़ी से उतर पड़ा । नलिनी एकबार उस के मुँह की ओर देख कर तुरन्त घर की ओर लौट गई ।

योगेन्द्र ने पुकार कर कहा—"नलिन, ठहरो, ठहरो, तुम से कुछ कहना है सुन लो ।"

यह पुकार नलिनी के कान तक न पहुँची । वह जैसे किसी भूत के अनुसरण से आत्मरक्षा के लिए भयभीत होकर आगे पीछे न देख भाग गई ।"

रमेश ठिठक कर खड़ा हो रहा । वह आगे बढ़े या से लौट जाय, यह सोचने लगा । योगेन्द्र ने कहा—"रमेश, आओ, बाबू जी यहीं बाहर बैठे हैं ।" यह कहकर रमेश का हाथ पकड़ कर घनानन्द बाबू के पास ले आया ।

घनानन्द दूर ही से रमेश को देखकर घबरा उठे । वे सिर पर हाथ फेरते फेरते सोचने लगे—"फिर कहाँ से यह विघ्न बीच में खड़ा हुआ ?"

रमेश ने सिर झुकाकर घनानन्द को नमस्कार किया । घनानन्द ने उसको बैठने का इशारा करके योगेन्द्र से कहा—"योगेन्द्र, तुम बहुत ठीक समय पर आ गये । मैं तुमको तार देने की बात सोच रहा था ।

योगेन्द्र ने पूछा—"क्यों ?"

घनानन्द—"कमलनयन के साथ नलिनी के ब्याह की बात स्थिर हो गई। कल कमलनयन की माँ नलिनी को देख कर आशीर्वाद दे गई हैं।"

योगेन्द्र—"यह क्या! ब्याह की बात पक्की हो गई! आपने मुझसे इस विषय में एकबार कुछ पूछा तक नहीं।"

घनानन्द—"तुम कभी कुछ कहते हो, कभी कुछ इसका कुछ निश्चय नहीं जब मैं कमलनयन को जानता भी न था, तब तुम्ही सब इस विवाह के लिए उद्योग कर रहे थे।"

योगेन्द्र—"तब की बात जाने दीजिए। उस समय मेरा कुछ और ही ख़याल था। अब भी समय है। इस ब्याह के सम्बन्ध में आपसे बहुत बातें कहनी हैं। पहले उन बातों को सुन लीजिए, पश्चात् जो कर्तव्य हो, कीजिएगा।"

घनानन्द—"अच्छा, उन बातों को समय पाकर किसी दिन सुन लूँगा। किन्तु आज तो सुनने की फुरसत नहीं। अभी मुझको बाहर जाना होगा।"

योगेन्द्र—"कहाँ जाइएगा?"

घनानन्द—"कमलनयन की माँ के यहाँ मेरा और नलिन का निमन्त्रण है। तुम्हारे खाने पीने का यहीं—"

योगेन्द्र—"नहीं, नहीं, मेरे लिए आप कुछ चिन्ता न करें। मैं रमेश को साथ लेकर यहाँ के किसी होटल में जाकर खा पी

लूँगा। साँझ तक तो लौटेंहीगे। तब तक हम सब भी आ जायँगे।"

घनानन्द बाबू रमेश के साथ कुछ विशेष संभाषण न कर सके। बल्कि उसके मुँह की ओर देखना भी उनके लिए कठिन हो पड़ा। रमेश भी इतनी देर चुप बैठा था। जाते समय घनानन्द बाबू को नमस्कार करके चला गया।

सत्तावनवाँ परिच्छेद

कल्याणी ने कमला से जाकर कहा—"बेटी, कल नलिनी और उसके पिता का यहाँ मध्याह्न भोजन का निमन्त्रण है। कहो, उसके लिए कैसी आयोजना की जाय? उनके भोजन की ऐसी सामग्री तैयार होनी चाहिए, जिससे उनके मन में यह सन्देह न रहे कि उनकी लड़की को यहाँ भोजन का कष्ट होगा। तुम जैसी पाककुशला हो, उससे अयश न होगा, यह मैं जानती हूँ। मेरा लड़का भोजन करके किसी दिन भला या बुरा कुछ नहीं बोलता था। कल उसने तुम्हारे हाथ की रसोई की बहुत प्रशंसा की। परन्तु आज तुम्हारा मुँह ऐसा उदास क्यों देखती हूँ? क्या शरीर अच्छा नहीं है?"

कमला ने सूखी हँसी हँसकर कहा—"शरीर तो अच्छा है।"

कल्याणी ने सिर हिलाकर कहा—"जान पड़ता है, तुम्हारा जी यहाँ नहीं लगता। ऐसा होना कुछ अचम्भे की बात नहीं। उसके लिए तुम क्यों लजाती हो? मुझे पराई मत समझो। मैं तुमको अपनी बेटी की तरह मानती हूँ। यदि तुम को यहाँ किसी तरह का कष्ट हो या तुम अपने किसी कुटुम्बीय को देखना चाहो तो मुझसे कहो, मैं उसका उचित प्रबन्ध कर दूँ।"

कमला ने नम्रतापूर्वक कहा—"नहीं माँ, आपकी सेवा के अतिरिक्त और मैं कुछ नहीं चाहती।"

कल्याणी ने इसपर ध्यान न देकर कहा—"न हो तो कुछ दिन के लिए तुम चक्रवर्ती जी के घर जाकर रहो, फिर जब तुम्हारी इच्छा हो, यहाँ चली आना।"

कमला अधीर हो उठी, बोली—"मैं जब तक आपकी सेवा में रहूँगी, तब तक मुझे किसी तरह की चिन्ता न रहेगी। यदि मुझसे आपकी सेवा में कुछ अपराध हो पड़े तो आपके जो जी में आवे दण्ड दीजिए, परन्तु एक दिन के लिए भी मुझको अपने पास से अलग न कीजिए।"

कल्याणी ने कमला का दहना हाथ अपनी छाती के पास लाकर कहा—"इसी से कहती हूँ, तुम पूर्व जन्म में मेरी माँ थी। नहीं तो दो ही एक दिन की भेट में ऐसी ममता क्योंकर हो सकती है। अच्छा, अब सोने जाओ, दिन भर तुम्हें पैर मोड़ने की फुरसत नहीं। एक न एक काम करती ही रहती हो।"

कमला अपने शयनगृह में जाकर द्वार बन्द करके चिराग़ बुझाकर चारपाई पर न लेट, नीचे भूमि में बैठ रही। बड़ी देर तक गाल पर हाथ दिये बैठी रही। उसने मन ही मन सोच विचार कर यही निश्चय किया, "दौर्भाग्य दोष से जिसे मैं खो चुकी हूँ वह फिर मेरे हाथ कैसे आ सकता है। सब आशा छोड़ने के लिए मनको दृढ़ करना होगा। केवल सेवा करने के सुयोग को जैसे होगा, प्राणपण से बचा रक्खूँगी। सेवा ही को मैं परम सुख मानूँगी। यदि मैं विषादवश मन छोटा करूँगी तो मुझे इस रहे सहे सुख से भी हाथ धोना पड़ेगा।

वह एकाग्र मन से बार बार सङ्कल्प करने लगी, "मैं कल से किसी प्रकार के दुःख को मन में स्थान न दूँगी। ज़रा भी मैं अपने मुँह पर उदासी न आने दूँगी। जो सुख प्राप्त होने का नहीं, उसके लिए कोई कामना मन में न रहने दूँगी। केवल सेवा करूँगी, जब तक जिऊँगी, केवल सेवा करूँगी। और कुछ न चाहूँगी, कुछ न चाहूँगी।"

इसके अनन्तर कमला सोने गई। बड़ी देर तक करवटें बदलती रही, पर एकबार भी उसे अच्छी नींद न आई। जब जब उसकी नींद टूटती थी, वह मन्त्र की भाँति जप करने लगती थी—"मैं कुछ न चाहूँगी, कुछ न चाहूँगी।" खूब तड़के बिछौने से उठ कर उसने हाथ जोड़ शुद्ध मन से प्रतिज्ञा की—"मैं आजीवन आप की सेवा करूँगी, और कुछ न चाहूँगी।"

इसके अनन्तर वह झटपट हाथ मुँह धो, कपड़ा बदल कमलनयन के उस छोटे से उपासना-घर में गई। अपने आँचल से घर को अच्छी तरह झाड़ बुहार कर गाय के गोबर और मिट्टी से चौका दिया। यथास्थान आसन बिछा कर जल्दी से गङ्गा स्नान करने गई। उन दिनों कमलनयन के एकान्त अनुरोध से कल्याणी ने सूर्योदय के पूर्व गङ्गास्नान करना छोड़ दिया था। इससे उमेश को ही उस दुःसह शीत के समय कमला के साथ घाट तक जाना पड़ा।

स्नान करके घर आने पर कमला ने प्रफुल्लमुख से कल्याणी को प्रणाम किया। तब वे स्नान के लिए बाहर जाने की तैयारी कर रही थीं। उन्होंने कमला से कहा, "इतना सवेरे क्यों नहाने गई? मेरे साथ जाती।"

कमला—"माँ जी, आज बहुत काम करना है। कल साँझ को जो सब तरकारी मँगा रक्खी है उसे अभी बना रखती हूँ। और जो कुछ बाज़ार से मँगाना बाक़ी रह गया है, वह अभी उमेश को भेज कर मंगा लेती हूँ।"

कल्याणी—"तुमने अच्छी बात सोची है। समधी आने के साथ भोजन तैयार पावेंगे।"

ऐसे समय में कमलनयन को बाहर से आते देख कमला भीगे बालों के ऊपर कपड़ा डाल झट घर के भीतर चली गई। कमलनयन ने माँ को नहाने के लिए जाते देख कर कहा—"कल तुम्हारी तबीयत कुछ अच्छी थी। आज सबेरे ही स्नान करने चलीं?"

कल्याणी—"तुम अपनी डाक्टरी रहने दो, सबेरे गङ्गास्नान न करने से भी कोई अमर नहीं होता। मालूम होता है, तुम कहीं बाहर जा रहे हो। जाते हो तो जाओ, लेकिन जल्दी लौट आना।"

कमलनयन—"क्यों?"

कल्याणी—"मैं कल तुमसे कहना भूल गई थी। आज घनानन्द बाबू तुमको देखने और आशीर्वाद देने आवेंगे।"

कमलनयन—"आशीर्वाद देने आवेंगे? वे सहसा मेरे ऊपर इतने प्रसन्न क्यों हो गये? उनसे तो मेरी रोज़ ही भेट होती है। रोज़ ही आशीर्वाद देते हैं।"

कल्याणी—"मैं कल नलिनी को एक जोड़ा सोने का कड़ा आशीर्वाद में दे आई हूँ। उसी से आज घनानन्द बाबू भी तुमको आशीर्वाद देने आते हैं। जो कुछ हो, तुम लौट आने में विलम्ब न करो। वे यहीं भोजन करेंगे।"

यह कह कर वे स्नान करने चली गईं। कमलनयन सिर नीचा करके सोचते सोचते सड़क पर आये।

अट्ठावनवाँ परिच्छेद

नलिनी रमेश के पास से भाग कर भीतर आई। अपने सोने के घर में जाकर वह द्वार बन्द करके चुपचाप चारपाई पर बैठ रही। मन का प्रथम आवेग शान्त होने पर वह वृथा भाग आने की बात सोच कर मन ही मन पछताने और अपनी लज्जा पर कुढ़ने लगी—"मैं रमेश बाबू के साथ सहज भाव से क्यों भेट न कर सकी ? जिस बात की मैं आशा नहीं करती, वह मेरे बीच क्यों इस प्रकार अशोभन भाव से आ खड़ी होती है ? कुछ नहीं, यह सब मेरे हृदय की दुर्बलता का कारण है।"

यह सोच कर वह ज़ोर से उठी, और अपने घर का द्वार खोल दिया, बाहर निकल आई। मनमें निश्चय किया कि मैं न भागूँगी, लज्जा पर विजय प्राप्त करूँगी। वह ढाढ़स बाँध फिर रमेश बाबू से भेट करने चली। हठात् क्या उसके मन में आया, वह फिर घर में गई। पेटी खोल कर उसमें से कल्याणी के दिये सोने के कड़े दोनों हाथों में पहिर लिये। मानो वह कवच पहिर युद्ध में जाने की तरह अपने को सुरक्षित कर सिर उठा बाग़ की ओर चली।"

घनानन्द बाबू ने कहा—"नलिन, तुम कहाँ जाती हो ?"
नलिनी—"रमेश बाबू और भैया हैं न ?"

घनानन्द—"नहीं, वे बाहर गये हैं, फिर आवेंगे।"

नलिनी ने मन में कहा—"चलो, अच्छा हुआ।" इस परीक्षा से निष्कृति पा वह मन ही मन ख़ुश हुई।

घनानन्द ने कहा—"तो अब—"

नलिनी—"हाँ, मैं चलती हूँ। मुझे, स्नान करने में कुछ देर न होगी। आप गाड़ी मँगवाइए।"

इस प्रकार नलिनी ने निमन्त्रण में जाने के लिए हठात् अपने स्वभाव के विरुद्ध अत्यन्त उत्साह दिखलाया। इस उत्साह की अधिकता को घनानन्द न भूल सके। उनका मन विशेष रूप से उत्कण्ठित हो उठा।

नलिनी झटपट स्नान कर कपड़े बदल, बाल सँवार घनानन्द के पास आकर बोली—"बाबू जी, गाड़ी नहीं आई?"

घनानन्द—"नहीं, अभी तक तो नहीं आई।"

नलिनी बाग़ की सड़क पर टहलने लगी। घनानन्द बरामदे में बैठ कर सिर पर हाथ फेरने लगे।

घनानन्द नलिनी को साथ ले जब कमलनयन के घर पर पहुँचे तब समय साढ़े दस से अधिक न हुआ था। कमलनयन तब तक बाहर से लौटकर न आया था, इससे घनानन्द के स्वागत का भार कल्याणी को ही लेना पड़ा।

कल्याणी उन्हें आदरपूर्वक बिठा कर उनसे कुशल-प्रश्न पूछने लगीं। बीच बीच में वे नलिनी के मुँह की ओर भी देखती थीं। परन्तु उसके मुँह पर उत्साह का कोई चिह्न

दिखाई न देता था। बल्कि उसके चेहरे से चिन्ता का भाव लक्षित होता था। यह कल्याणी के मन में खटक गया। वह मन में सोचने लगी, "कोई ऐसी लड़की न होगी जो मेरे कमल-नयन के साथ ब्याह होने में अपना सौभाग्य न समझेगी, किन्तु नई शिक्षा के मद में आकर मेरे कमल को अपने योग्य नहीं समझती।" अगर यह बात नहीं है, तो इसके मन में इतनी चिन्ता किस लिए है? इस बेचारी का क्या दोष! सब दोष मेरा ही है, बिना सोचे विचारे काम कर बैठी। मैं बूढ़ी हो गई, तो भी आगे पीछे की बात कुछ न सोच सकी। इच्छा होने के साथ ही ब्याह की बात स्थिर करने को उतारू हो गई। बड़ी उम्र की लड़की के साथ कमल के ब्याह की बात स्थिर की। यह मेरा दोष नहीं तो किसका है?"

नलिनी के मुँह का भाव देख कर कल्याणी को घनानन्द बाबू के साथ वार्तालाप करना असह्य हो पड़ा। उन्होंने घना-नन्द से कहा—"ब्याह के लिए शीघ्रता करने की क्या ज़रूरत है। ये दोनों पूर्ण वयस्क हैं, अपने विचार से काम करेंगे। हम सबों को इसके लिए दबाव डालना ठीक नहीं। नलिन के मन में क्या है, यह तो मैं नहीं जानती, किन्तु कमलनयन की बात मैं कह सकती हूँ, वह अब भी मन को स्थिर नहीं कर सका है।"

कल्याणी यह बात विशेष करके नलिनी को सुनाने ही के लिए बोली। नलिनी को यह ब्याह पसन्द नहीं है और उनके बेटा जो इस ब्याह के प्रस्ताव से बड़े प्रसन्न हैं, यह धारणा वे दूसरे के मन में उत्पन्न होने देना नहीं चाहतीं।"

नलिनी यहाँ आते समय विशेष उत्साह का भाव दिखाने लगी थी। उसी से उसका उलटा फल हुआ। क्षण मात्र

की उत्तेजना एक गंभीर चिन्ता-स्रोत में विलीन हो गई। जब वह कल्याणी के घर के भीतर आ पहुँची तब उसके मन का भाव बदल गया। हठात् उसके मन में यह आशङ्का उत्पन्न हुई—"जिस नई जीवन-यात्रा के मार्ग पर वह पैर रखना चाहती है, वह उसके आगे अत्यन्त दूर दुर्गम पहाड़ी-पथ की भाँति प्रत्यक्ष दीखने लगा।"

कमलनयन के आने में जो आज देर हुई, उससे कल्याणी मन ही मन खुश हुई। नलिनी की ओर देख कर उन्होंने कहा—"देखो तो, कमल की बुद्धि कैसी है! तुम सबों के आने की बात उसे मालूम है, तो भी उसका कहीं पता नहीं। आज कुछ थोड़ा सा काम करके चला आता। उसे क्या घर अच्छा लगता है? जब मैं बीमार होती हूँ तभी वह घर पर रहता है। इससे क्या उसकी कम हानि होती है?"

यह कह कर कल्याणी, भोजन तैयार होने में क्या विलम्ब है, यह देखने के लिए कुछ देर की फुरसत लेकर वहाँ से टल गईं। उनकी इच्छा थी कि नलनी को कमला के साथ उलझा कर आप उस निश्छल वृद्ध के साथ बात चीत करें।"

कल्याणी ने देखा, भोजन की सब सामग्री तैयार करके कमला उन्हें आग की मधुर आँच में गरम रहने के लिए चूल्हे पर चढ़ा कर आप एक कोने में चुपचाप बैठी किसी बात के ध्यान में निमग्न है। कल्याणी को सामने देख वह चौंक उठी। परन्तु वह तुरन्त लजा कर मुस्कुराती हुई उठी। कल्याणी ने कहा—"देखती हूँ, तुम रसोई के पीछे बहुत हैरान होर ही हो।"

कमला—"रसोई हो गई। भोजन की सब सामग्री तैयार है।"

कल्याणी—"तो, तुम यहाँ चुप क्यों बैठी हो ? घनानन्द बाबू बूढ़े हैं। उनके सामने जाने में लज्जा क्या ? नलिन आई है। उसे अपने घर में ले जाकर उसके साथ गपशप करो। मैं बूढ़ी हूँ। उसे अपने पास बिठा कर क्यों दुःख दूँ।"

नलिनी के पास से विमुख होकर आई हुई कल्याणी का स्नेह कमला के प्रति दूना हो गया।

कमला ने दबी ज़बान से कहा—"माँ, मैं उनके साथ क्या गप करूँगी ! वे बहुत पढ़ी लिखी हैं। मैं मूर्ख हूँ।"

कल्याणी—"यह तुम क्या कहती हो ? तुम किसी से कम-बुद्धिमती नहीं हो। लिख पढ़कर कोई स्त्री अपने को चाहे जितनी बड़ी समझे, तुमसे बढ़कर आदर पाने योग्य शायद ही कोई होगी। पोथी पढ़ कर सभी स्त्रियाँ विदुषी हो सकती हैं परन्तु तुम्हारी जैसी सुघर गृहलक्ष्मी होना क्या सबके भाग्य में होता है ? आओ, इधर आओ, मैं तुमको इस भेस में न रहने दूँगी, अपने हाथ से आज तुम्हें सजाऊँगी।"

कल्याणी आज सभी प्रकार नलिनी का गर्व चूर्ण करना चाहती हैं। रूप में भी उसको इस अल्प शिक्षिता सती से पराजित करना चाहती हैं। कमला को कुछ उज्र करने का साहस न हुआ। कल्याणी ने अपने हाथ से ख़ूब सजा कर उसका शृङ्गार कर दिया। फ़िरोज़ा रङ्ग की रेशमी सारी पहिराई। नये ढङ्ग की चोटी गूँथ दी। सिर में सिन्दूर कर दिया। उसे

अच्छी तरह भूषण-वसन से सजाकर कल्याणी बार बार उसका मुँह देख कर बोली—"अहा! यह रूप तो राजा के घर में सजता।"

कमला बीच बीच में बोल उठती थी,—"माँ, वे सब अकेले बैठे हैं। क्या कहते होंगे? देर हो रही है।"

कल्याणी—"होने दो देर। आज मैं तुमको बिना भली भाँति सजाये न जाऊँगी।"

जब कमला का सब साज श्रृङ्गार ठीक हो गया, तब उसे साथ लेकर कल्याणी चलीं। कहा, बेटी, लजाओ मत, तुमको देख कर कालेज की पढ़ी पण्डिता, जिन्हें अपने रूप का घमण्ड होगा, लजायेंगी। तुम सब के सामने सिर ऊँचा करके खड़ी हो सकती हो।"

जिस घर में घनानन्द बाबू बैठे थे कल्याणी उसी घर में कमला को बलात् खींच कर ले गईं। देखा, 'कमलनयन उनसे बात कर रहा है।' कमला ने कमलनयन को देखकर वहाँ से लौट जाना चाहा, परन्तु कल्याणी ने रोक कर कहा—"क्यों लजाती हो? यहाँ सब लोग अपने हैं।"

कल्याणी कमला के रूप और सुन्दर साज-श्रृङ्गार से अपने मन में गर्व का अनुभव कर रही थीं। उसे देख कर सब लोग चमत्कृत हों, यही उनकी इच्छा थी। वे नलिनी की उत्कर्षता को कमला के रूप से दबाना चाहती थीं। बल्कि वे कमलनयन के पास भी नलिनी को नीचा दिखाने की इच्छा रखती थीं।

कमला को देख कर सभी चकित हुए। नलिनी ने प्रथम दिन जब उसे देखा था तब उसका ऐसा मनोहर वेष न था। वह मलिन भाव से संकुचित हो एक तरफ़ बैठी थी। वह भी अधिक देर तक बैठी न रह सकी। इससे उस दिन भली भाँति भेंट न हुई। आज उसकी अपूर्व शोभा देख कर नलिनी आश्चर्यभरी दृष्टि से कुछ देर तक उसके मुँह की ओर देखती रही। तिसके बाद वह खड़ी हुई और लजाती हुई कमला का हाथ पकड़ कर उसने अपने पास बिठाया।"

कल्याणी का अभीष्ट सिद्ध हुआ। वे नलिनी के ऊपर विजय प्राप्त कर प्रसन्न हुईं। सभी को मन ही मन स्वीकार करना पड़ा कि ऐसा सुन्दर रूप दैवयोग से ही देखने में आता है। कल्याणी ने कृतकार्य होकर कमला से कहा—"तुम नलिन को अपने घर में ले जाकर गपशप करो। मैं तब तक खाने की जगह ठीक करने जाती हूँ।"

कमला के मन में अनेक भाव उठने लगे। वह सोचने लगी—"नलिनी मुझे किस दृष्टि से देखेगी! यह कौन जाने! यही नलिनी एक दिन इस घर की बहू बनकर आवेगी। यही इस घर की स्वामिनी होगी।" यह सोच कर कमला उसकी सुदृष्टि का अनादर न कर सकती थी। इस घर की स्वामिनी होने का अधिकार उसी को था किन्तु इस बात को वह कभी मन में भी लाना नहीं चाहती थी। ईर्ष्या को वह कभी अन्तःकरण में स्थान न देगी। वह अपना अधिकार खो चुकी है। अब इस घर पर उसका कोई दावा न रहा। वह निरपेक्ष भाव से कल्याणी और कमलनयन की केवल सेवा करना चाहती है।

इसी से नलिनी के साथ जाते समय उसके पैर थरथराने लगे।

नलिनी ने धीरे धीरे कमला से कहा—"तुम्हारी सब बात मैंने माँ से सुनी है। सुनकर बड़ा कष्ट हुआ। तुम मुझे अपनी बहन की तरह देखना। तुम्हारे कोई बहन नहीं है?"

कमला ने नलिनी के स्नेह और दया से भरे कण्ठस्वर से आश्वस्त होकर कहा—"मेरे सगी बहन नहीं है, एक चचेरी बहन है।"

नलिनी—"मेरे एक भी बहन नहीं। मैं जब बहुत छोटी थी तभी मेरी माँ मर गई। बिना माँ के मैं कितने ही दुःख सहती हूँ। मेरे एक बहन रहती तो भी कुछ सन्तोष होता। मेरे पास ऐसा कोई न रहा जिससे मैं अपने मन के सुख दुःख की बात कहती। इसी से बचपन से ही मुझे मन की बात मन ही में दबा रखने की आदत हो गई। यही कारण है कि अब भी मैं किसी से जी खोलकर कोई बात नहीं कह सकती। लोग समझते हैं, मैं बड़ी गरबीली हूँ, परन्तु बहन, तुम कभी ऐसा न समझना।"

कमला के मन का सब सन्देह दूर हो गया। उसने कहा—"मैं क्या तुम्हें पसन्द पड़ूँगी? मुझे तुम नहीं जानती, मैं भारी मूर्ख हूँ।"

नलिनी ने हँसकर कहा—"मुझे जब तुम अच्छी तरह जानोगी, तब देखोगी, मैं भी निपट मूर्ख हूँ। मैंने दो चार किताबें पढ़कर कण्ठस्थ कर ली हैं, और कुछ नहीं जानती। इसी से मैं

तुमसे कहती हूँ, यदि मेरा यहाँ आना हो तो तुम कभी मेरा साथ न छोड़ना। एक न एक दिन गृहकार्य का भार मेरे ऊपर पड़े ही गा, इस बात को सोचकर मैं अभी से डरती हूँ। मैं घर का कोई काम करना नहीं जानती।"

कमला ने सरल भाव से कहा—"तुम सब भार मेरे ऊपर देना। मैं बचपन से ही घर का काम करती आती हूँ। मैं घर के किसी काम से नहीं डरती। हम तुम दोनों बहनें मिलकर सब काम कर लेंगी। तुम उन्हें सुख से रक्खोगी, मैं तुम सबों की सेवा करूँगी।"

नलिनी—"अच्छा, एक बात तो कहो, तुमने तो अपने स्वामी को कभी अच्छी तरह नहीं देखा, उनका तुम कैसे स्मरण करती हो?"

कमला इस बात का ठीक जवाब न देकर बोली—"स्वामी का स्मरण करना होता है, यह मैं न जानती थी। जब मैं चचा के घर आई तब चचेरी बहन अन्नपूर्णा के साथ मेरा विशेष रूप से परिचय हुआ। वह अपने स्वामी की जिस तरह सेवा करती है, उसे अपनी आँख से देखकर मेरे मन में पहले पहल इसका ज्ञान हुआ। मैंने अपने पति को कभी नहीं देखा, यह सही है, तब उनकी भक्ति मेरे मन में कैसे उत्पन्न हुई, यह मैं नहीं कह सकती। अब वे मेरे हृदयमन्दिर में दिन रात विहार करते हैं, मैं जिधर देखती हूँ उधर ही उनकी मधुरमूर्ति दिखाई देती है। उन्होंने मुझे त्याग दिया, पर मैं उन्हें क्यों तजूँ। जब तक जिऊँगी, उनके चरणकमल की मानसिक पूजा से अपना जीवन सफल करूँगी।"

कमला की यह भक्तिभरी बात सुनकर नलिनी का हृदय द्रवित हो गया। वह कुछ देर तक चुप रह कर बोली—"मैं तुम्हारे मन का आशय अच्छी तरह समझ गई। इस तरह से पूजा करने ही का नाम यथार्थ पूजा करना है। प्रत्यक्ष की पूजा स्वार्थ से ख़ाली नहीं रहती। वह भाव थोड़े ही दिनों में नष्ट हो जाता है। तुमने जो पाया सो किसी ने न पाया।"

नलिनी की बात बख़ूबी कमला की समझ में आई या नहीं, यह वही जाने। वह नलिनी के मुँह की ओर देखती रही। कुछ देर बाद बोली—"बहन, तुम ठीक कहती हो, मैं अपने मन में किसी तरह का दुःख नहीं आने देती हूँ, आनन्द में मगन रहती हूँ। जो कुछ मैंने पाया है, उसी को परम लाभ समझती हूँ।"

नलिनी बड़े प्यार से कमला का हाथ अपने हाथ में लेकर बोली—"हानि और लाभ दोनों को बराबर समझना ही सच्चा लाभ है। मेरे गुरु का यही उपदेश है। बहन, मैं तुमसे सच कहती हूँ, यदि मैं तुम्हारी तरह सुख दुःख को बराबर समझूँगी तो अपने को धन्य मानूँगी।"

कमला ने कुछ विस्मित होकर कहा—"क्यों बहन! तुम्हें किस बात का दुःख होगा? तुम तो सब सुख पाओगी।"

नलिनी—"जो सुख सात्त्विक है, उसे पाकर सुखी हो सकती हूँ, परन्तु इसके अतिरिक्त जो सुख है, वह सुख नहीं, भार है, अनेक दुःखों का कारण है। यह सब बात मेरे मुँह से सुनकर तुम्हें आश्चर्य मालूम होगा, मुझे भी आश्चर्य मालूम होता है। परन्तु ईश्वर की ऐसी ही कृपा है। वही मुझसे इन बातों को

सुभ्रयाते हैं। बहन, तुम नहीं जानतीं, आज मेरा मन चिन्ता से दबा जा रहा था। तुमको पाकर मेरे हृदय का बोझ कुछ हलका हुआ। मैंने बल पाया, इसी से इतना बोलने का साहस किया। नहीं तो मैं इतनी बात क्या कभी बोल सकती?" इसी समय एक दासी वहाँ आई, जिससे दोनों की गप रुक गई।

उनसठवाँ परिच्छेद

कल्याणी के घर से लौट आने पर नलिनी ने कमरे के भीतर मेज़ पर एक बहुत बड़ी चिट्ठी पाई। लिफ़ाफ़े के ऊपर का हस्ताक्षर देखकर ही वह समझ गई—चिट्ठी रमेश के हाथ की लिखी है। नलिनी की छाती धड़कने लगी। वह चिट्ठी लेकर अपने शयनगृह में गई। द्वार बन्द करके काँपते हुए हाथों से चिट्ठी खोलकर पढ़ने लगी।

चिट्ठी में रमेश ने कमला के सम्बन्ध की सब बातें बड़े विस्तार से लिखी हैं। अन्त में उसने लिखा है, "ईश्वर ने तुम्हारे साथ मेरा बन्धन दृढ़ कर दिया था। उसे तुमने तोड़ दिया। तुमने अब अपना मन दूसरे को सौंप दिया। इसके लिए मैं तुम्हें कोई दोष नहीं दे सकता। प्रार्थना इतनी है कि तुम भी मुझे दोष न देना। यद्यपि मैंने कमला के साथ एक दिन के लिए वैसा व्यवहार नहीं किया, जैसा कि लोग अपनी स्त्री के साथ करते हैं, तथापि उसने धीरे धीरे मेरे हृदय को अपनी ओर खींच लिया था। इस बात को मैं तुम्हारे पास स्वीकार करता हूँ। आज मेरे हृदय की क्या अवस्था है, यह मैं नहीं कह सकता। अगर तुम मेरा त्याग न करती तो मैं तुम्हारा आश्रय पाकर चित्त को शान्त कर सकता। इसी आशा से मैं अपने विक्षिप्त चित्त को लेकर तुम्हारे पास दौड़ा आया था। लेकिन अब आज स्पष्ट देखा कि तुम मुझसे घृणा करके मेरे पास से

विमुख हो भीतर चली गईं, जब सुना कि तुम दूसरे के साथ ब्याह करना चाहती हो, तब मेरा मन और डावाँडोल हो उठा। आज सवेरे जब तुम अपनी सूरत दिखा कर बिजुली की तरह ग़ायब हो गईं, तब मैंने मन में कहा—"मैं भाग्य-हीन हूँ।" परन्तु अब मैं इस बात को मन में जगह न दूँगा। मैं सरलभाव से, बड़ी ख़ुशी के साथ, तुमसे बिदा होने की प्रार्थना करता हूँ। मैं सदा के लिए तुम्हारे पास से प्रस्थान करूँगा। ईश्वर मुझे वह शक्ति दे, जिससे बिदा होते समय मैं किसी तरह की दीनता का अनुभव न करूँ। तुम सुखी हो। तुम्हारा मङ्गल हो। मुझे कभी घृणा की दृष्टि से न देखना। मुझपर घृणा करने का तुम्हारा कोई कारण नहीं है।"

घनानन्द बाबू कुरसी पर बैठे एक किताब पढ़ रहे थे। एकाएक नलिनी को सामने खड़ा देख चौंक उठे। बोले—"नलिन, तुम्हारा मुँह उदास देखता हूँ! शरीर अच्छा है न?"

नलिनी—"हाँ, अच्छा है। रमेश बाबू की एक चिट्ठी पाई है। लीजिए, पढ़कर फिर मुझे लौटा दीजिएगा।"

चिट्ठी देकर वह वहाँ से चली गई। घनानन्द बाबू ने आँख में चश्मा लगा कर बड़े ध्यान से उस चिट्ठी को पढ़ा। पढ़कर चिट्ठी नलिनी के पास वापस भेज सोचने लगे। बड़ी देर तक सोचने के बाद उन्होंने स्थिर किया—"यह एक तरह से अच्छा ही हुआ। पात्रता का विचार करने से रमेश की अपेक्षा कमल-नयन विशेष प्रार्थनीय हैं। रमेश आपही यहाँ से हट गया। यह अच्छा हुआ।"

वे यह सोच ही रहे थे, कि उस समय कमलनयन वहाँ उपस्थित हुआ। उसे देख घनानन्द को आश्चर्य हुआ। आज सवेरे एकबार कमलनयन के साथ उनकी भेंट हो चुकी है। फिर कुछ काल बीतते न बीतते वह क्या सोचकर आया है ? वृद्ध ने मन ही मन हँसकर कहा—"कुछ नहीं, नलिनी को देखने के लिए आया होगा।"

वे किसी बहाने से नलिनी के साथ कमलनयन की भेंट कराकर आप वहाँ से टल जाने की बात सोच रहे थे। ऐसे समय में कमलनयन ने कहा—"महाशय! मेरे साथ आपकी लड़की के ब्याह की बातचीत हो रही है। बात अधिक दूर आगे बढ़ने के पूर्व जो मेरा वक्तव्य है, वह आपसे कहा चाहता हूँ।"

घनानन्द—"सही है, वह तो कहना ही चाहिए।"

कमलनयन—"आप नहीं जानते, मेरा ब्याह पहले ही हो गया है।"

घनानन्द—"जानता हूँ। किन्तु—"

कमलनयन—"आप जानते हैं, सुनकर आश्चर्य हुआ। शायद आप अनुमान करते होंगे, वह मर गई। परन्तु इसका क्या निश्चय हो सकता है, वह अब तक जीती हो। बल्कि मेरा विश्वास तो ऐसा ही है कि वह अब तक जीती है।"

घनानन्द—"ईश्वर करें, यही बात सत्य हो।" यह कहकर उन्होंने नलिनी को पुकारा।

नलिनी आकर बोली—"क्या है?"

घनानन्द—"रमेश ने जो चिट्ठी लिखी है, उसमें जो वह अंश है, इन्हें—"

नलिनी ने वह चिट्ठी कमलनयन के हाथ में देकर कहा—"इस चिट्ठी का सम्पूर्ण अंश आपके देखने योग्य है।" यह कहकर वह चली गई।

चिट्ठी पढ़कर कमलनयन क्षुब्ध होकर बैठ रहा। घनानन्द ने कहा—"ऐसी आश्चर्य-घटना प्रायः संसार में नहीं घटती! चिट्ठी पढ़ने के लिए दी जाकर आपके मन में चोट पहुँचाना हुआ। किन्तु यह गुप्त रखना भी हम लोगों के लिए अन्याय होता।"

कमलनयन कुछ देर तक चुप बैठा रहा. तिसके बाद वह घनानन्द को नमस्कार करके चला। जाते समय उसने उत्तर ओर के बरामदे में नलिनी को देखा।

नलिनी को देखकर कमलनयन के मन में दुःख हुआ। उसने ज़रा घूमकर बरामदे के सामने से होकर गाड़ी पर चढ़ने की बात स्थिर की। उसने सोचा, यदि नलिनी को कुछ पूछना होगा तो पूछेगी। परन्तु जब वह बरामदे के सामने आया, देखा, नलिनी बरामदा छोड़कर घर में चली गई। हृदय के साथ हृदय का मिलाप होना सहज नहीं है। मनुष्य के साथ मनुष्य का सम्बन्ध होना सहज नहीं है! इस बात को सोचता हुआ कमलनयन गाड़ी पर सवार हो चल दिया।

कमलनयन के चले जाने पर योगेन्द्र आया। घनानन्द ने पूछा—"योगेन्द्र, अकेले ही आते हो?"

योगेन्द्र—"और दूसरे किस व्यक्ति की खोज करते हैं, सुनूँ भी तो ?"

घनानन्द—"तुम्हारे साथ रमेश को नहीं देखता ?"

योगेन्द्र—"उसे अब देखिएगा भी नहीं। उसका प्रथम दिन का सत्कार क्या उसके लिए यथेष्ट न हुआ ?"

"सतां माने म्लाने मरणमथवा दूरगमनम् ।"

यदि काशी की गङ्गा में डूबकर उसे अब तक शिवत्व न मिला होगा तो मैं नहीं कह सकता, वह कहाँ गया, क्या हुआ। कल से वह लापता है। टेबुल पर एक काग़ज़ का टुकड़ा पड़ा पाया है, उसमें लिखा है—"चला—तुम्हारा रमेश।" इस तरह की कविता करने का मेरा अभ्यास नहीं, इसलिए मैं साफ़ ही साफ़ क्यों न कह दूँ, मुझे भी यहाँ से भागना होगा। मेरी हेड-मास्टरी ही अच्छी है।"

घनानन्द—"नलिनी के लिए कोई बात स्थिर करके—"

योगेन्द्र—"इसका ज़िक्र न कीजिए। मैं स्थिर करूँगा और आप उसे अस्थिर करेंगे। यह खेल मुझे पसन्द नहीं। जो आपके जी में आवे कीजिए। मैं उस में हस्तक्षेप करने वाला कौन ? मैं कल सवेरे की गाड़ी से विदा हूँगा। बाँकीपुर में कुछ काम है, उसे करता हुआ जाऊँगा।"

घनानन्द बाबू चुप हो रहे। उनके मन की चिन्ता और भी बढ़ गई। यह संसार उनके निकट दुरूह सा प्रतीत होने लगा।

साठवाँ परिच्छेद

अन्नपूर्णा और उसके पिता चक्रवर्ती कमलनयन के घर आये हैं। अन्नपूर्णा कमला को लेकर एक घर में बैठकर फुसुर फुसुर बातें कर रही थी। चक्रवर्ती कल्याणी के साथ गप कर रहे थे।

चक्रवर्ती—"मेरे छुट्टी के दिन पूरे हुए। कल ही गाज़ीपुर जाना होगा। यदि सती आप सबों के मन में किसी तरह का रञ्ज पहुँचाती हो या वह यहाँ रहना न चाहती हो तो—"

कल्याणी—"दो में एक भी नहीं। वह न यहाँ से कहीं जाना चाहती है, और न हम सबों के खिलाफ़ कोई काम करती है, बल्कि उसके रहने से मुझे घरके कामों में पूरी सहायता मिलती है। आपके मनका भाव समझ में नहीं आता। क्या आप किसी बहाने से अपनी लड़की को यहाँ से ले जाना तो नहीं चाहते?"

चक्रवर्ती—"मुझे आप वैसा न समझें। मैंने जो दे दिया, वह फिर नहीं ले सकता। किन्तु यदि आपको कुछ असुविधा हो—"

कल्याणी—"यह आप क्या कहते हैं? आप भी मन ही मन भली भाँति जानते हैं, सती जैसी लक्ष्मी को पास रखने से सुविधा की सीमा नहीं तो भी—"

चक्रवर्ती—"बस, अब और कुछ न कहिए । मैं अपने प्रश्न का पूरा उत्तर पा गया । वह एक बहाना था । आपके मुँह से सती की प्रशंसा सुनने ही के लिए मैंने यह ज़िक्र निकाला था । किन्तु सोच यही है कि कमलनयन बाबू यह न समझें कि कहाँ की एक आफ़त उनके सिर आ पड़ी । मेरी सती का हृदय बड़ा ही कोमल है । यदि वह अपने ऊपर कमलनयन की ज़रा भी नाराज़गी देखेगी तो वह उसके लिए बड़ी असह्य होगी । वह उस दुःख से मन ही मन मर मिटेगी ।

कल्याणी—"राम राम ! कमलनयन उसपर नाराज़ होगा । क्रोध तो वह करना ही नहीं जानता ।"

चक्रवर्ती—"यह ठीक है, किन्तु मैं सती को प्राण से भी बढ़कर प्यार करता हूँ, इसलिए मैं थोड़े ही में सुन्तुष्ट नहीं हो सकता । माना कि कमलनयन उस पर कभी नाराज़ न होंगे, उदासीन की तरह रहेंगे । यह भी मेरे पसन्द की बात नहीं । जब उनके घर में सती है, तब उन्हें चाहिए कि वे उसे स्नेह की दृष्टि से देखें, उसे आत्मीय समझें । ऐसा न होने से उसके मन में बड़ा दुःख होगा । वह घर की दीवाल तो हुई नहीं, वह भी एक मनुष्य है । उसपर ख़फ़ा न होंगे और न उसे प्यार करेंगे । ऐसा ही बर्ताव उसके साथ रक्खेंगे यह भी तो—"

कल्याणी—"चक्रवर्ती जी, आप बहुत चिन्ता न करें । मेरा कमलनयन सती को प्यार करता है, हृदय से प्यार करता है । वह किसी का दुःख नहीं देख सकता । परन्तु उसके मन का भाव बाहर से कुछ लक्षित नहीं होता । यह जो सती कुछ दिन से मेरे यहाँ है, वह कैसे सुख से रहेगी, किसमें उसकी भलाई

होगी, यह चिन्ता अवश्य ही कमलनयन के मन में लगी होगी अधिकतर सम्भव है, वह उसका उपाय भी कुछ न कुछ सोचता होगा। परन्तु हम सबों को वह कुछ मालूम होने नहीं देता।"

चक्रवर्ती—"आपकी बात से मेरे मन की चिन्ता दूर हुई। तो भी मैं जाने के पूर्व कमलनयन बाबू से इस विषय में एकबार कुछ कहना आवश्यक समझता हूँ। एक स्त्री का सम्पूर्ण भार अपने ऊपर ले सकें, ऐसा पुरुष संसार में विरला ही मिलता है। ईश्वर ने जब कमलनयन बाबू को वह पुरुषार्थ दिया है तब वे जिसमें सती को पराई स्त्री समझ मिथ्या संकोच न करें, उनके साथ शुद्ध हृदय और निश्छल भाव से वार्तालाप करें, उसे अपनी दासी समझ रक्षा करें, यही उनसे एकबार सूचित करना चाहता हूँ।"

कमलनयन के प्रति चक्रवर्ती का यह विश्वास देखकर कल्याणी का मन मुग्ध हो गया। उन्होंने कहा—"पीछे आप कुछ और ही ख़याल करें, इस भय से मैं कमला को कमलनयन के सामने बेधड़क जाने आने नहीं देती। किन्तु मैं अपने बेटे का स्वभाव जानती हूँ, आप उसपर पूर्ण विश्वास करें, वह धर्मविरुद्ध कोई काम नहीं कर सकता।"

चक्रवर्ती—"तो आपसे सब बात ख़ुलासा ही क्यों न कहूँ? सुना है, कमलनयन के ब्याह की बातचीत हो रही है। लड़की की उम्र भी कुछ कम नहीं है। है तो पढ़ी लिखी, परन्तु उसका रीति-व्यवहार हम सबों के समाज के साथ नहीं मिलता। इसी से मैं सोचता था, शायद सती का पीछे—"

कल्याणी—"यह क्या मैं नहीं समझती ? चिन्ता की बात ही थी। परन्तु वह विवाह न होगा—"

चक्रवर्ती—"क्या फलदान वापस हो गया ?"

कल्याणी—"फलदान हुआ ही नहीं। वापस क्या होगा। कमल एकदम ब्याह करना नहीं चाहता था। मैंने ही उसे ज़िद करके राज़ी किया था। किन्तु मैं अब उस ब्याह के लिए उसे तङ्ग न करूँगी। जिस काम में मन न माने, उसे ज़ोर देकर करने से परिणाम अच्छा नहीं होता। ज़रूर एक न एक अनिष्ट हो ही आता है। भगवान की क्या इच्छा है, नहीं जानती। मालूम होता है, अब मरने के पूर्व मैं बहू को न देख सकी।"

चक्रवर्ती—"आप यह न कहें। हम सब हैं किस लिए ? बिना सम्बन्ध किये, बिना मिठाई खाये, क्या यों ही चले जायँगे ?"

कल्याणी—"आपके मुँह में घी शक्कर पड़े! मेरे मन में दुःख है कि कमलनयन इस उमर में मेरे कारण गृहस्थधर्म में प्रवेश न कर सका, ब्रह्मचारी ही बना रहा। इसी से मैं घबरा कर सब ओर ध्यान न देकर झट पट उसके ब्याह की बात स्थिर कर बैठी थी, परन्तु उस आशा को मैंने त्याग दिया। अब आप ही उसके ब्याह की बात ठीक कर दीजिए। विलम्ब न कीजिए। मैं अधिक दिन नहीं जिऊँगी। मेरी आँखों के सामने यह शुभकार्य हो जाय तो ठीक हो।"

चक्रवर्ती—"सब हो जायगा। आप निश्चिन्त रहें। जो आप चाहती हैं, वही होगा। अभी आप बहुत दिन जियेंगी।

धर्मात्मा लोग जल्दी नहीं मरते । घबराने की कोई बात नहीं । आपको जैसी बहू चाहिए वह मैं समझ गया । बहुत कम उम्र की होने से भी आपका काम न चलेगा । जो आपकी सेवा-शुश्रूषा करे, आपकी आज्ञानुसार चले—ऐसी पतोहू मिल जाने ही से आपका मनोरथ पूरा होगा । आप कुछ चिन्ता न कीजिए, ईश्वर की कृपा से शीघ्र ही आपका उद्देश सफल होगा । होगा क्या, हुआ ही समझिए । यदि आपकी आज्ञा हो तो सती को कर्तव्य सम्बन्ध में दो चार बातों का उपदेश दे आऊँ । अन्ना को अभी आपके पास भेज देता हूँ । जब से उसने आपको देखा है, तब से वह आपही का गुण गा रही है ।"

कल्याणी—"नहीं, आप तीनों जने कुछ देर तक एक घर में बैठ कर बात करें, मैं एक काम को जाती हूँ ।"

चक्रवर्ती ने हँसकर कहा—"हम लोगों का कल्याण-साधन ही आपका कार्य है । आपके काम का परिणाम अवश्य ही अच्छा होगा । कमलनयन बाबू की वधू के सौभाग्य से शीघ्र ही बन्धुबान्धवों का मुँह मीठा हो ।"

चक्रवर्ती ने अन्ना और कमला के पास आकर देखा, कमला के दोनों नेत्रों में अब भी आँसू छलछला रहे हैं । चक्रवर्ती ने अन्ना के पास बैठकर एक बार उसके मुँह की ओर देखा । अन्ना ने कहा—"मैं कमला से कह रही थी कि अब कमलनयन बाबू से सब बात खोलकर कहने का अवसर आगया । अब चुप रहने से काम न चलेगा । इस कारण आपकी यह निर्बुद्धि सती मेरे साथ झगड़ रही है ।"

कमला बोल उठी—"नहीं बहन, मैं तुम्हारे पैरों पड़ती हूँ, ऐसी बात फिर न कहो । वह मुझसे किसी तरह न होगा ।"

अन्नपूर्णा—"तुम्हारी कैसी बुद्धि है! तुम चुप होकर बैठी रहो, और नलिनी के साथ कमलनयन का ब्याह हो! ब्याह के दूसरे दिन से आज तक तुम बराबर अघटित घटना ही के पाले पड़ी हो, फिर अपने ऊपर एक नई आफ़त क्यों लेना चाहती हो?"

कमला—"मेरी बात क्या किसी से कहने की है? मैं सब बातें कह सकूँगी, परन्तु वह लाज की बात मुझसे न कही जायगी। मैं जिस तरह हूँ, जिस अवस्था में हूँ, अच्छी हूँ। मुझे कोई दुःख नहीं। किन्तु यदि मेरी सब बात प्रकट हो जायगी तो मैं किस मुँह से एक घड़ी भी इस घर में रह सकूँगी? मारे लज्जा के मैं मर जाऊँगी।"

अन्नपूर्णा इस बात का कोई उत्तर न दे सकी, किन्तु नलिनी के साथ कमलनयन का ब्याह होना उसे हर्गिज़ मंजूर न था।

चक्रवर्ती ने कहा—"जिस विवाह की बात कह रही हो, वह होहीगा—इसका क्या निश्चय है!"

अन्नपूर्णा—"सुनती हूँ, सब बात ठीक हो गई है, कमल-नयन बाबू की माँ आशीर्वाद भी दे आई हैं।"

चक्रवर्ती—"विश्वेश्वर के आशीर्वाद से वह आशीर्वाद रद्द हो गया। बेटी कमला, तुम्हें कोई डर नहीं, धर्म तुम्हारा सहायक है।"

कमला सब बातें स्पष्ट न समझ दोनों आँखें फाड़ कर चक्रवर्ती के मुँह की ओर देखती रही।

चक्रवर्ती ने कहा—"उस विवाह की बात रुक गई। कमल-नयन भी उस ब्याह में राजी नहीं हैं। उनकी माँ को भी अब सब बातें सूझ गईं। वे अब अपने बेटे को नलिनी के साथ न ब्याहेंगी।"

अन्नपूर्णा ने पुलकित होकर कहा—"ईश्वर ने कुशल किया। कल मैंने यह ख़बर जब से सुनी, बेचैन थी, रात में एकबार भी नींद न आई। सारी रात सोच में पड़ी रही। आज आपके मुँह से यह आनन्द समाचार सुन कर सब दुःख दूर हुआ। अच्छा, मैं एक बात आप से पूछती हूँ, क्या कमला अपने घर में इसी तरह दासी की भाँति रहकर समय बितावेगी? ऐसा कोई उपाय नहीं जिससे वह अपना अधिकार पाकर कृतार्थ हो?"

चक्रवर्ती—"अन्ना, तू क्यों घबराती है? जब समय आवेगा तब सब काम आप ही सहल हो जायगा।"

कमला—"अब जो हुआ, वही बहुत हुआ, इससे बढ़कर अब कुछ नहीं हो सकता है। मैं बड़े सुख से हूँ। मुझे इससे अधिक और कुछ न चाहिए। मैं आप के पैरों पर गिरती हूँ। आप किसी से कुछ न कहिए। आप मुझे इस घर के किसी कोने में फेंक कर मेरी सब बातें एकदम भूल जाइए। मेरे लिए इतना ही बहुत है।" यह कहते कहते कमला की दोनों आँखों से झरझर आँसू गिरने लगे।

चक्रवर्ती—"बेटी, क्यों रोती हो? तुम जो कहती हो, वह मैं समझता हूँ। तुम घबराओ मत। मैं तुम्हारी शान्ति का भङ्ग न करूँगा। ईश्वर आप ही धीरे धीरे जिस काम को कर रहे हैं, उसमें मैं मूर्ख की भाँति वृथा हस्तक्षेप करके क्यों उसे

बिगाड़ूँगा। कुछ डर नहीं। मैं वृद्ध हो गया। मेरी इतनी बड़ी उम्र हो गई। क्या मैं स्थिर होकर रहना नहीं जानता?"

इसी समय उमेश हँसता हुआ घर में आकर खड़ा हुआ।

चक्रवर्ती ने पूछा—"उमेश, कहो क्या ख़बर है?"

उमेश—"रमेश बाबू नीचे खड़े हैं। डाक्टर बाबू से मुलाकात चाहते हैं।"

कमला का मुँह सूख गया। चक्रवर्ती झट उठकर बोले—"डरो मत, मैं अभी जाकर सब ठीक कर आता हूँ।"

चक्रवर्ती ने नीचे आकर रमेश का हाथ पकड़ कर कहा—"आज किधर भूल पड़े? आइए, इधर आइए, आप से कुछ कहना है।"

रमेश ने आश्चर्ययुक्त होकर कहा—"चक्रवर्तीजी! आप यहाँ कैसे आये?"

चक्रवर्ती—"आप ही की खोज में आया था। आप से भेंट हो गई। बड़ा अच्छा हुआ। अब देर न कीजिए। इधर आइए, काम की बात को ख़तम ही कर डालना चाहिए।" यह कह कर रमेश को सड़क पर ले जाकर चक्रवर्ती ने टहलते टहलते कहा—"

"रमेश बाबू, आप यहाँ क्या करने आये हैं?"

रमेश—"कमलनयन बाबू की खोज में आया था। उनसे कमला की सब बात आद्योपान्त कह देना चाहता हूँ। मेरे मन में कभी कभी होता है, कमला मरी नहीं, अब तक जीती है।"

चक्रवर्ती—"मान लीजिए, कमला जीती है, और कमलनयन के साथ उसकी भेंट भी होगई, तो फिर आप के मुँह से कमला का सब वृत्तान्त सुन कर कमलनयन कौन लाभ उठावेंगे? या आप ही को क्या फल मिलेगा? उनकी बूढ़ी माँ बड़ी ही धर्म्मशीला हैं। वे ये सब बातें सुन पावें तो क्या कमला के लिए अच्छा होगा?"

रमेश—"सामाजिक रीति से फल क्या होगा, यह मैं नहीं जानता, किन्तु कमला निरपराधिनी है। यह तो कमलनयन बाबू को मालूम होना चाहिए। यदि कमला मर ही गई होगी, तब भी कमलनयन बाबू आदर के साथ उसका नाम ले सकेंगे।"

चक्रवर्ती—"आप का यह ख़याल कैसा है, यह मैं नहीं जान सकता। आप लोग नये ख़याल के आदमी ठहरे। मैं अब पुराना हुआ। मेरी समझ ही कितनी! तो भी मैं जहाँ तक समझता हूँ, अगर कमला मर ही गई हो तो उसके एक रात के स्वामी के पास, जिसने कभी उसकी सूरत तक न देखी, उससे उसका जीवन-वृत्तान्त कहना कोई आवश्यक नहीं दीखता। यह जो घर आप देख रहे हैं, उसी में मैं टिका हूँ। कल सवेरे यदि आप एकबार मेरे घर पर आ जायँ तो मैं सब बात आप से .खुलासा कह दूँगा। किन्तु इसके पूर्व आप कमलनयन से भेंट न करें। यही मेरा अनुरोध है।"

रमेश—"अच्छा।"

चक्रवर्ती ने लौट कर कमला से कहा—"कल सवेरे तुमको मेरे घर पर जाना होगा। वहाँ तुम .खुद रमेश से सब बात समझा कर कहना, यही मैंने स्थिर किया है।"

कमला सिर नीचा करके बैठ रही। चक्रवर्ती ने कहा—"जब तक तुम .खुद इसमें न पड़ोगी तब तक काम न चलेगा। अपने घर में लजाने की कौन बात है। मन से संकोच को दूर कर डालो। जहाँ तुम्हारा अधिकार है। वहाँ दूसरे को पैर रखने न देना तुम्हारा ही काम है। इस सम्बन्ध में हम लोगों का ज़ोर उतना काम न देगा।"

कमला तब भी सिर झुकाये ही रही। चक्रवर्ती ने कहा—"मार्ग बहुत साफ़ हो चुका है। अब थोड़ा सा जो मार्ग कटीला रह गया है, उसको साफ़ करने में सङ्कोच मत करो।"

इसी समय किसी के पैर की आहट सुनकर कमला ने सिर उठा कर देखा—द्वार के सम्मुख कमलनयन खड़े हैं। एकबार ही उसकी आँख के ऊपर कमलनयन की दोनों आँखे पड़ गईं। और दिन कमला को देखकर जैसे कमलनयन झट नज़र फेर कर चला जाता था, आज उसने वैसा न किया। बल्कि वह कुछ देर तक कमला की ओर देखता रहा, पर तो भी कमला को वह चितवन दुबारा देखने का सौभाग्य न हुआ। कमला की वह प्रथमवार की दृष्टि मानों उसकी आँखों में चुभ गई। अन्नपूर्णा को देख कर जब वह वहाँ से हट जाने को उद्यत हुआ तब चक्रवर्ती ने उससे कहा— "कमलनयन बाबू, आप भागिए मत, आप को हम सब अपने से भिन्न करके नहीं मानते। यह मेरी लड़की अन्ना है। इसी की लड़की का इलाज आपने किया था।" अन्नपूर्णा ने कमलनयन को हाथ जोड़ कर नमस्कार किया। कमलनयन ने भी यथायोग्य अभिवादन कर उससे पूछा—"आप की लड़की अच्छी है?"

अन्नपूर्णा—"हाँ, अच्छी है।"

चक्रवर्ती—"आपको अच्छी तरह देखकर नयन तृप्त करूँगा, इसका अवसर तो आप देते नहीं। यदि अभी यहाँ आगये तो कुछ देर बैठने की कृपा कीजिए।"

कमलनयन को बिठाकर चक्रवर्ती ने देखा, कमला घर में नहीं है। वह उनके पीछे से दबे पैर कभी की निकल गई! वह कमलनयन की सुदृष्टि से पुलकित होकर आनन्द से उद्वेलित हृदय को स्थिर करने के लिए दूसरे घर में गई है।

इतने में कल्याणी ने आकर कहा—"चक्रवर्ती जी, एकबार उठने का कष्ट कीजिए।"

चक्रवर्ती—"जब से आप एक काम को गईं, तभी से मैं इस कष्ट के लिए आप की राह देख रहा था।"

भोजन करके चक्रवर्ती ने बैठक में आकर कहा—"आप सब बैठें, मैं अभी आता हूँ।" यह कहकर उन्होंने कुछ ही देर में दूसरे घर से कमला का हाथ पकड़े कमलनयन और कल्याणी के सामने लाकर उसे हाज़िर किया। उसके पीछे पीछे अन्नपूर्णा भी आई।

चक्रवर्ती ने कहा—"कमलनयन बाबू, आप हमारी सती को पराई स्त्री समझ कर संकोच न करें। इस चिरदुःखनी को हम आप ही के घर में रक्खे जाते हैं। इसे आप अपनी ही करके जानिए। इस सेवा का सम्पूर्ण अधिकार दीजिए। यह आपके घर का सब काम करेगी। आप की सेवा में सदा हाज़िर रहेगी। आप निश्चय जानें, जान बूझकर यह कभी कोई अपराध न करेगी। कदाचित् अज्ञान से इससे कोई भूल हो तो आप उसे क्षमा कीजिएगा।"

कमला लज्जा से सिकुड़ कर चुपचाप सिर झुकाये बैठी थी। कल्याणी ने कहा—"चक्रवर्ती महाशय! आप कुछ चिन्ता न करें। सती हमारे घर की लड़की की तरह रहेगी। उसके हाथ में कोई काम देने के लिए आज तक हमें उससे कुछ कहने की आवश्यकता नहीं हुई। इतने दिन रसोईघर और भाण्डार-घर का इन्तज़ाम मेरे हाथ में था। मैं ही सब कुछ करती धरती थी। अब मैं कोई नहीं। जो कुछ है सो यही है। नौकर चाकर भी अब मुझसे कुछ नहीं पूछते। जिसे जो कुछ पूछना होता है, इसीसे पूछ कर काम करता है। कहाँ क्या होता है, यह मैं जानती भी नहीं। आने के साथ इसने घर का सब भार अपने ऊपर ले लिया। किस तरह इसने धीरे धीरे सब काम को अपने हाथ में कर लिया, इसकी मुझे कुछ ख़बर नहीं। मेरे पास कई कुञ्जियाँ थीं, इसने कौशल करके वे भी हड़प लीं। मेरे घर की दासी, स्वामिनी जो समझिए सो सब यही है। कहिए, आप अपनी इस डकैत लड़की के लिए और क्या चाहते हैं? अब सबसे बढ़कर मेरे लिए यही डकैती होगी, यदि आप कहें कि हम अपनी लड़की को ले जायँगे।"

चक्रवर्ती—"मैं कहूँगा भी तो क्या यह जायगी? यह यहाँ से हिलने का नाम तक न लेगी। इसे आप निश्चय जानें। इसको आप सबों ने इस तरह भुला रक्खा है कि यह आपके सिवा संसार में और किसी को नहीं जानती। यह जन्म ही की दुखिया है। इतने दिन बाद यह आपके पास आकर सुख का अनुभव करने लगी है। भगवान् इसके इस सुख को निर्विघ्न करें। आप सब सदा इस पर प्रसन्न रहें। हम हृदय से इसे यही आशीर्वाद देते हैं।"

यह कहते कहते चक्रवर्ती की आँखों में आँसू भर आये। कमलनयन चुपचाप ध्यानपूर्वक चक्रवर्ती की बात सुन रहा था। जब वे सबके सब वहाँ से उठ कर चले गये तब वह धीरे धीरे अपने सोने के घर में आया। तब जाड़े की सुहावनी सन्ध्या उसके शयनगृह को लाल रङ्ग में बोर कर मानो नवविवाह की रक्तिमाछटा दरसा रही थी। उस रक्तप्रभा ने कमलनयन के समस्त रोम कूपों की राह से प्रवेश करके उसके अन्तःकरण को लाल कर दिया।"

आज सबेरे कमलनयन को एक प्रिय मित्र के यहाँ से एक टोकरी गुलाब का फूल आया था। कल्याणी ने वह गुलाब की टोकड़ा घर सजाने के लिए कमला को दी थी। कमलनयन के शयनगृह की मेज़ पर जो फूलदान में गुलाब के फूल रक्खे थे, उनका मधुर सुगन्ध कमलनयन के मस्तिष्क में प्रवेश करने लगा। उस सूने घर की खुली खिड़की में आरक्त सन्ध्या के साथ मिल कर गुलाब के मनोहर गन्ध ने कमलनयन के मन में एक विचित्र भाँति की चञ्चलता उत्पन्न कर दी। इतने दिन उसके हृदय में शान्ति थी, ज्ञान की गम्भीरता थी, धीरता का बल था, चारों ओर संयम का पहरा था, आज एकाएक वहाँ भाँति भाँति के बाजे कहाँ से बज उठे? किस अदृश्य नृत्य के पदप्रक्षेप और नूपुर की मधुर ध्वनि से वह शान्तिकुटीर रङ्गालय हो गया।

कमलनयन ने खिड़की के पास से फिर कर घर के भीतर देखा, उसकी चारपाई का सिरहाना गुलाब के फूलों से सजा था। नहीं कह सकते, ये खिले फूल किसके नेत्र की भाँति उसके मुँह की ओर देख रहे थे।"

कमलनयन ने उनमें से एक फूल उठा लिया। वह पन्ने की तरह पीले रङ्ग के गुलाब की कली थी। कुछ सुगन्धि भी उसमें ज़रूर थी। उस कली को हाथ में लेते ही उसे जान पड़ा जैसे किसी की कोमल उँगली ने उसकी उँगली का स्पर्श किया। कमलनयन के रोंगटे खड़े हो गये। वह उस मुकुलित कोमल कली को अपने मुँह और आँख की पलकों पर फेरने लगा।

देखते ही देखते सायंकालिक सूर्य की प्रभा छिप गई। कमल ने घर से बाहर होने के पूर्व उस गुलाब कली को बिछौने की चादर हटा कर सिरहाने के तकिये पर रक्खा। रखकर घरसे बाहर होना चाहा, देखा, चारपाई के उस तरफ़ कोई एक स्त्री आँचल से मुँह छिपाये मारे लज्जा के धरती में समा जाना चाहती है। कमला को लज्जा रखने की कोई जगह नहीं। वह उस घर को गुलाब के फूलों से सजाकर अपने हाथ से कमलनयन का बिछौना करके ज्यों बाहर होने लगा, इतने में कमलनयन के आने की आहट पा वह झट उलटे पैर लौट कर चारपाई के उस तरफ़ जा छिपी। संयोगवश कमलनयन भी उसी घर में आगये। अब न उसे भागते ही बनता था, न छिपते ही। वह लज्जा से काठ होकर जहाँ की तहाँ बैठी रही।

कमलनयन इस लज्जिता को लज्जाबन्धन से छुटकारा देने के लिए शीघ्र बाहर जाने को उद्यत हुआ। द्वार तक जाकर एकाएक खड़ा होगया। न मालूम क्या सोच कर फिर धीरे धीरे लौट आया। कमला के सामने खड़ा होकर कहा—"उठो, मुझसे तुम्हें कोई लज्जा नहीं।"

इकसठवाँ परिच्छेद

दूसरे दिन सबेरे ही कमला चक्रवर्ती के घर पर गई। अन्नपूर्णा के एकान्त में पाते ही वह उसके गले से लिपट गई। अन्नपूर्णा ने उसकी ठोड़ी पकड़कर कहा—"क्यों बहन, आज इतनी खुशी काहे की?"

कमला—"मैं नहीं जानती, परन्तु मेरे मन में होता है, जैसे मेरे सिर पर से बोझ उतर गया हो।"

अन्नपूर्णा—"कहो, कहो, सब बात मुझसे जी खोल कर कहो! कल साँझ तक तो हम सब वहीं थीं। उसके बाद क्या हुआ? कुछ भी तो नई ख़बर सुनाओ।"

कमला—"ख़बर तो ऐसी कुछ नहीं, परन्तु मेरे मन में होता है, जैसे मैं उन्हें पा गई। भगवान् मुझ पर दयालु हुए हैं।"

अन्नपूर्णा—"यही हो, परन्तु मुझसे कुछ छिपाओ मत।"

कमला—"मेरे पास क्या धरा है जो तुमसे छिपाऊँगी। कोई ऐसी बात नहीं जो तुमसे न कह सकूँ। सबेरे जब सोकर उठी, तब मुझे जान पड़ा, जैसे मेरा जीवन सार्थक हो। तब से मैं बहुत प्रसन्न हूँ। इससे अधिक मैं कुछ नहीं चाहती। डर इतना ही है कि पीछे कहीं यह भी न नष्ट हो। मेरा दिन जो

अब इसी तरह आनन्द से कटेगा, इसका विश्वास मुझे नहीं होता।

अन्नपूर्णा—"बहन, मैं तुमसे सच कहती हूँ, तुम्हारे भाग्य में अभी और सुख लिखे हैं। तुम्हारा जो कुछ पाना है, वह सब तुम्हें मिलेगा।"

कमला—"नहीं बहन, मैं सब पा चुकी। किसी के ज़िम्मे कुछ बाक़ी नहीं। मैं विधाता को अब कोई दोष नहीं दे सकती। उसने सब दे दिया।

इसी समय चक्रवर्ती ने आकर कहा—"कमला, तुमको ज़रा बाहर चलना होगा। रमेश बाबू आये हैं।"

चक्रवर्ती इतनी देर तक रमेश के साथ बात कर रहे थे। उन्होंने रमेश से कहा—"आपके साथ कमला का क्या सम्बन्ध था, यह मैंने सब जाना। अब आपसे मेरा यही कहना है कि आप कमला के सम्बन्ध की कोई बात किसी से न कहें। यदि उसके जीवनसम्बन्ध की कोई गाँठ सुलझाने की आवश्यकता होगी तो आप उसका भार ईश्वर पर छोड़ दें। आप उसमें हाथ न डालें।"

रमेश ने इसके उत्तर में कहा—"कमला के सम्बन्ध की सब बात जब तक मैं एकबार कमलनयन से न कहूँगा तब तक मेरे चित्त को विश्राम न मिलेगा। मेरा जो कुछ वक्तव्य है सो उनसे कह कर मैं निश्चिन्त होना चाहता हूँ।"

चक्रवर्ती ने कहा—"अच्छा, आप बैठिए। मैं अभी आता हूँ।" रमेश मुँह घुमाकर खिड़की की राह से सड़क पर आते जाते हुए लोगों की ओर देखने लगा। कुछ ही देर

बाद उसने किसी के आने की आहट से सावधान होकर देखा, एक रमणी ने धरती में सिर टेक उसे प्रणाम किया। जब वह प्रणाम करके उठी, तब रमेश बैठा न रह सका। वह झट उठकर खड़ा हुआ, बोला—"कमला!" कमला कुछ न बोली, चित्रवत् खड़ी रही।

चक्रवर्ती ने कहा—"रमेश बाबू, कमला ने इतने दिन जिस अघटित घटना में पड़कर भाँति भाँति के कष्ट सहे हैं, वे आप से प्रायः छिपे नहीं हैं। ईश्वर अब इसका दिन फेरना चाहते हैं। यह सुख के ठिकाने पर पहुँच गई है। आपने बड़े संकट के समय इसकी रक्षा की। इसके लिए आप को भी कुछ कम तकलीफ़ न झेलनी पड़ी। अब आप से सदा के लिए अलग होते समय यह आपके निकट बिना कृतज्ञता प्रकट किये नहीं रह सकती। इसीलिए सम्बन्ध तोड़ने के पूर्व यह आपसे आशीर्वाद लेने आई है।"

रमेश ने कुछ देर तक चुप रह कर रुके हुए कण्ठस्वर को बलपूर्वक परिष्कार करके कहा—"कमला, तुम सुखी हो, तुम्हारा सौभाग्य बढ़े। मैंने जानकर या अज्ञानतः जो कुछ तुम्हारे पास अपराध किये हों। सब माफ़ करो।"

कमला इसके उत्तर में कुछ न कह सकी, चुपचाप खड़ी रही।

रमेश ने फिर कहा—"अगर मुझसे तुम्हारा कोई विशेष उपकार हो सके तो कहो। मैं यथासाध्य उसे करने को तैयार हूँ।"

कमला ने हाथ जोड़ कर कहा—"मेरी बात आप किसी से न कहें, यही मेरी प्रार्थना है।"

रमेश—"बहुत दिनों तक मैंने तुम्हारे सम्बन्ध की कोई बात किसी से न कही थी, कुछ दिन हुए जब मैंने सोचा। तुम्हारी बात कहने से तुम्हारे हक़ में कोई ख़राबी न होगी तब मैंने केवल एक आत्मीय व्यक्ति के पास तुम्हारी बात ज़ाहिर कर दी। उससे तुम्हारा कुछ अनिष्ट न होकर अच्छा ही होगा। चक्रवर्ती जी को शायद इसकी ख़बर लगी होगी। घनानन्द बाबू, जिनकी लड़की के साथ—"

चक्रवर्ती—"नलिनी! मालूम है। क्या उन लोगों ने सब बातें सुनीं हैं?"

रमेश—"हाँ! यदि उन लोगों से और कुछ कहने का प्रयोजन हो तो कहिए, मैं जाकर कह सकता हूँ। किन्तु मेरी इच्छा अब वहाँ जाने की नहीं होती। मैं इन सब बखेड़ों से एकदम अलग होना चाहता हूँ। इस झूँठ मूँठ के झमेले में पड़कर मैंने व्यर्थ अपने समय को नष्ट किया। अब सब से क्षमा प्रार्थना करके मैं कहीं निराली जगह में जाकर रहने ही में कुशल समझता हूँ।"

चक्रवर्ती ने रमेश का हाथ पकड़कर स्नेह भरे कण्ठस्वर में कहा—"नहीं, रमेश बाबू, अब आपको कुछ न करना होगा। आप बहुत तकलीफ़ें झेल चुके हैं। अब आप इस झंझट से किनारे हो स्वाधीनभाव से रहें, सुख से समय बितावें। यही मेरा आशीर्वाद है।"

जाते समय रमेश ने कमला की ओर करुणाभरी दृष्टि से देखकर कहा—"अच्छा, मैं अब जाता हूँ।"

कमला ने कुछ न बोल फिर धरती में माथा टेक कर रमेश को प्रणाम किया।

रमेश मार्ग में जाते जाते सोचने लगा—"कमला से भेंट हो गई। यह अच्छा ही हुआ। भेंट न होने से यह बखेड़ा तय न होता। यद्यपि यह ठीक ठीक मालूम न हुआ कि कमला क्या जानकर उस रात को हठात् गाज़ीपुर का बँगला छोड़कर चली गई, किन्तु इसका जानना मैं अब सर्वथा निष्प्रयोजन समझता हूँ। अब मेरा आवश्यक केवल मेरे जीवन को लेकर है। मुझे अब आगे की ओर देखना चाहिए, पीछे घूम कर देखने की कोई ज़रूरत नहीं।"

बासठवाँ परिच्छेद

कमला ने चक्रवर्ती के यहाँ से लौट कर देखा, नलिनी और घनानन्द बाबू कल्याणी के पास बैठे हैं। कमला को देखकर कल्याणी ने कहा, "देखो, सती आ गई। बेटी, तुम अपनी सखी को अपने घर ले जाओ, मैं घनानन्द बाबू को जलपान कराती हूँ।"

कमला के घर में प्रवेश करते ही नलिनी ने कमला के गले से लिपट कर कहा—"बहन कमला!"

कमला ने विशेष आश्चर्यान्वित न होकर कहा—"तुमने कैसे जाना कि मेरा नाम कमला है!"

नलिनी—"मैंने एक व्यक्ति से तुम्हारे जीवन की सारी घटना सुनी है। सुनने के साथ मेरे मन में निश्चय हो गया कि तुम्हीं कमला हो, ऐसा क्यों हुआ, यह मैं नहीं कह सकती।"

कमला—"मेरा नाम कोई जाने, यह मैं नहीं चाहती। मुझे अपने नाम पर एकदम अश्रद्धा हो गई है।"

नलिनी—"किन्तु इसी नाम के ज़ोर से तो तुम अपना अधिकार पाओगी।"

कमला ने सिर हिला कर कहा—"वह सब मैं नहीं जानती। न मेरा कुछ अधिकार है, न कुछ ज़ोर है। न मैं अपना बल दिखाकर कुछ पाना चाहती हूँ।"

नलिनी—"किन्तु तुम अपने परिचय से अपने स्वामी को कैसे वञ्चित कर सकोगी? क्या तुम अपना भला बुरा उनसे कुछ न कहोगी? उनसे कोई बात तुम कब तक छिपा सकोगी? छिपाने से तुम्हारा काम भी तो न चलेगा।"

एकाएक कमला का मुँह पीला पड़ गया। वह चुपचाप नलिनी के मुँह की ओर देखने लगी। कुछ देर के बाद वह ऊपर आकाश की ओर ताक कर बोली—"भगवान तो जानते हैं। मैंने कोई अपराध नहीं किया है तो वे मुझ निरपराधिनी को इस तरह लज्जित कर क्यों सतावेंगे? जो दोष मेरा नहीं उसके लिए वे मुझे क्यों दण्ड देंगे?" बहन! मैं उनके सामने अपनी लाज की बात कैसे कहूँगी?

नलिनी बड़े प्यार से कमला का हाथ पकड़ कर बोली—"दण्ड नहीं, ईश्वर तुम्हें मुक्ति देंगे। परन्तु तुम्हारा इस तरह गुप्त होकर रहना ठीक नहीं। तुम निश्छलभाव से पति के निकट अपना परिचय दो। इसी में तुम्हारा कुशल है। तुम व्यर्थ भ्रमजाल में न पड़ी रहो। शीघ्र इस मिथ्या-बन्धन को तोड़ डालो। परमेश्वर अवश्य तुम्हारा मङ्गल करेंगे।"

कमला—"पीछे यह सुख भी कहीं हाथ से न चला जाय। यह शङ्का जब मनमें उत्पन्न होती है तब मैं अधीर हो उठती हूँ। मेरा सब उत्साह मिट्टी में मिल जाता है। तुम जो कहती हो वह मेरे हित की बात कहती हो। अब जो मेरे भाग्य में लिखा होगा, होगा। मैं उनसे कब तक अपने को छिपाये रह सकूँगी। किसी दिन तो वे सब जानेंहीगे।"

नलिनी ने दया से पसीज कर कहा—"बहन, यदि तुम स्वयं अपनी बात उनसे न कह सको तो कोई दूसरा ही व्यक्ति उनसे तुम्हारा वृत्तान्त कहे ?"

कमला—"नहीं, नहीं। दूसरा कोई आदमी उनसे न कहे। मैं आपही अपनी सब बातें उनसे कहूँगी। मैं कुछ भी उनसे न छिपाऊँगी।"

नलिनी—"अच्छी बात है, तुम अपने मुँह से कहोगी तो और अच्छा होगा। तुमसे फिर कभी मेरी भेंट होगी या नहीं, यह कौन जाने। हम सब अब यहाँ से जाती हैं। मैं यही तुमसे कहने आई हूँ।"

कमला ने पूछा—"कहाँ जाओगी ?"

नलिनी—"कलकत्ते। अब तुमको अपने घर का काम धन्धा करना है। मैं उसमें क्यों बाधा डालूँ। बहन, तो मैं अब जाती हूँ। भूलना मत।"

कमला ने उसका हाथ पकड़कर कहा—"क्या मुझको चिट्ठी न लिखोगी ?"

नलिनी—"अच्छा, लिखूँगी।"

कमला—"कब मुझे क्या करना होगा, यह उपदेश पत्र द्वारा बराबर देते रहना। मुझे विश्वास है। तुम्हारा पत्र पाने से, मुझे बड़ी शान्ति मिलेगी।"

नलिनी ने हँसकर कहा—"मुझसे कहीं बढ़कर उपदेश देने वाला पुरुष तुम आप ही पाओगी। उसके लिए तुम कुछ चिन्ता न करो।"

आज नलिनी के लिए कमला के मन में बड़ा दुःख हुआ। नलिनी के प्रशान्त मुख पर एक ऐसा भाव व्यञ्जित होता था जो देख कर कमला की आँखें डबडबा आती थीं। आज कमला की सभी बातें नलिनी के पास ज़ाहिर हो गईं। किन्तु वह गम्भीरतापूर्वक अपने मन का भाव छिपाकर चली गई। चलते समय वह कमला के पास केवल विषाद से भरा वैराग्य रख गई।

आज दिन भर कमला नलिनी की बात सोचती रही। गृह कार्य से छुट्टी पाते ही कमला को नलिनी की सुध हो आती थी। उसकी वह शान्तिभरी सकरुण दृष्टि कमला के मनमें बार बार आघात पहुँचाने लगी। कमला नलिनी का और कोई वृत्तान्त न जानती थी, केवल इतना ही जानती थी, 'कमल-नयन के साथ उसके ब्याह की बात चीत होकर ब्याह न हुआ।' नलिनी ने आज अपनी फुलवाड़ी से एक डाली फूल लाकर कमला को दिया था। कमला उन फूलों को लेकर कुछ दिन रहते माला गूँथने बैठी। उसी अवसर में कल्याणी एक बार वहाँ आकर उसके पास बैठी, और एक लम्बी साँस लेकर बोली—"अहा! आज नलिनी जब मुझे प्रणाम करके चली गई, तब मेरे मन में जो दुःख हुआ वह तुमसे क्या कहूँ। जो जिसके जी में आवे कहे, नलिनी थी बड़ी अच्छी लड़की। अब मेरे मन में यह सोचकर बहुत अफ़सोस होता है कि उसे अपनी पतोहू क्यों नहीं बनाई। यदि वह मेरे घर बहू बन कर आती तो मुझे बड़ा हर्ष होता। सब बात तय हो चुकी थी। ब्याह होने में कुछ बाधा न थी। सहज ही ब्याह हो जाता। परन्तु मेरे लड़के को कौन समझावे। वह क्या किसी की बात सुनता है। क्या सोच कर वह इस ब्याह से विमुख हो बैठा, यह वही जाने।"

पीछे वे भी इस विवाह के प्रस्ताव से हट गई थीं, इस बात को शायद वे भूल गईं।

बाहर पैर की आहट सुनकर कल्याणी ने पुकारा, "ओ कमल, सुन जाओ।"

कमला झटपट आँचल से फूल और माला को छिपा कर सिर पर घूँघट डाल लज्जा से सिमटकर बैठ गई। कमलनयन के आने पर कल्याणी ने कहा—"नलिनी आज चली गईं। तुम से क्या उन सबों की भेंट न हुई?"

कमलनयन—"हाँ हुई तो। मैं उन सब को गाड़ी में बिठा कर आया हूँ।"

कल्याणी—"बाबू, तुम जो कहो, नलिनी जैसी अच्छी लड़की मेरे देखने में नहीं आती।"

कल्याणी के कहने का ढंग, जैसे कमलनयन इस सम्बन्ध में बराबर उनके साथ प्रतिवाद करता आता हो। वह कुछ जवाब न देकर ज़रा हँसा।

कल्याणी ने कहा—"बस, हँस दिया! मैं क्या कहती हूँ इस पर कुछ ध्यान ही नहीं देते। मैंने तुम्हारे साथ नलिनी के ब्याह की बात चीत की, आशीर्वाद तक दे आई। और तुमने हठ ठान कर बनी बनाई बात को बिगाड़ दिया। क्या तुम्हारे मन में अब इस बात का सोच न होता होगा?"

कमलनयन ने एकबार चकित दृष्टि से कमला के मुँह की ओर देखा। वह घूँघट के भीतर से उत्सुक नयन से उसकी

ओर देख रही थी। चारों आँखें बराबर होते ही कमला ने झट नज़र नीची कर ली।

कमलनयन ने कहा—"माँ, तुम्हारा लड़का क्या ऐसा सत्-पात्र है कि तुम्हारे बात चीत करने ही से उसका ब्याह हो जायगा? मेरे सदृश तुच्छ को क्या कोई सहज ही पसन्द कर सकता है?"

इस बात से कमला की नज़र फिर ऊपर को उठी। उठते ही कमलनयन की दृष्टि उसपर जा पड़ी। कमला मारे लज्जा के सिकुड़ गई। वह वहाँ से उठकर भाग जाना चाहती थी।

कल्याणी ने कहा—"जाओ, जाओ, बहुत मत बको, तुम्हारी बात सुनकर मुझे क्रोध होता है।"

इस सभा के भङ्ग होजाने के बाद कमला ने नलिनी के लाये हुए फूलों में से कई एक अच्छे अच्छे फूल चुनकर उनकी एक बहुत बड़ी माला गूँथकर तैयार की। उस माला को फूल डाली पर रख जल से सिक्त कर वह उसे कमलनयनके उपासनाघर में रख आई। क्या आज विदा होते समय नलिनी इसीलिए डाली भर फूल लाई थी? यह सोचकर कमला के नेत्र सजल हो गये।

इसके अनन्तर कमला अपने शयनगृह में आकर बड़ी देर तक ध्यानस्थ होकर कमलनयन की उस दृष्टि की आलोचना करने लगी, जो कुछ देर से उसकी आँखों में गड़ रही थी। कमलनयन ने आज क्या समझ कर उसकी ओर चाह भरी दृष्टि से देखा? और दिन तो वे कमला को देखते ही नज़र फेर लेते थे। क्या आज कमला के मन की सब बातें उन्हें ज़ाहिर तो न होगईं? कमला जब कमलनयन के सामने न जाती थी, तब वह

एक प्रकार से अच्छी थी। अब वह रोज़ रोज़ कमलनयन के पास देखाई पड़ती है। अपने को छिपा रखने का यही उसके लिए कठिन दण्ड है। कमला सोचने लगी, "कमलनयन ज़रूर मन में कहते होंगे—"इस लड़की को माँ कहाँ से ले आईं। ऐसी निर्लज्ज लड़की का नाम किसने सती रक्खा? यह सती न होकर असती अवश्य है।" यदि कमलनयन के मन में एकबार भी ऐसी भावना आई हो तो फिर कमला के लिए संसार में कोई जगह नहीं।"

कमला ने रात को अपनी चारपाई पर लेट कर मन ही मन बल पूर्वक प्रतिज्ञा की—"चाहे जो हो, कल अपना परिचय ज़रूर दूँगी।"

दूसरे दिन ख़ूब तड़के उठकर कमला स्नान करने गई। स्नान करके वह प्रति दिन छोटे घड़े में गङ्गाजल लाकर पहले कमलनयन के उपासनाघर को लीप पोत कर तब दूसरा काम करती थी। इस नित्य नियम के अनुसार वह आज भी पहले उपासनाघर का काम करने गई। देखा, कमलनयन आज बहुत सवेरे से उस घर में आकर बैठे हैं। ऐसा तो कभी न होता था। कमला उस घर का काम पूरा न करने का भार सिर पर ले धीरे धीरे वहाँ से लौट चली। कुछ दूर जाकर वह एकाएक रुक गई, न मालूम क्या सोच कर वह फिर धीरे धीरे जाकर उपासनाघर के द्वार पर चुपचाप बैठ रही। उसे कौन घेर कर लौटा लाया, यह उसने न जाना। समय कब कितना बीता, इसकी भी सुध उसे न रही। वह सोई है या जागी, यह ज्ञान भी उसका लुप्त हो चला। मानो यह सुख का दृश्य वह स्वप्न में देखती है। यही सोचते सोचते उसने एकाएक

देखा, कमलनयन घर से बाहर हो उसके सामने खड़े हैं। कमला ने उनके पैरों पर सिर रख साष्टाङ्ग प्रणाम किया। उसके सद्यःस्नान से भीगे बाल कमलनयन के पैरों से लिपट गये। कमला प्रणाम करके उठी, और पत्थर की मूर्ति की तरह खड़ी हो रही। उसे यह स्मरण न रहा कि उसके सिर पर से कपड़ा खिसक कर नीचे गिर पड़ा है। कमलनयन अनिमेष दृष्टि से उसके मुँह की ओर देखते रहे। वह बाह्यज्ञानशून्य हो, उसी तरह चित्रवत् खड़ी रही। हठात् उसके सचेत न होने का प्रमाणस्वरूप उसके मुख से स्पष्ट यह शब्द निकला—"मैं कमला हूँ।"

इतनी बात उसके मुँह से कढ़ते ही उसका ध्यान भङ्ग होगया। उसकी वह एकाग्रचेतना बाह्यज्ञान में पलट गई। तब उसका सर्वाङ्ग काँपने लगा; सिर नीचे की ओर झुक गया; छाती धड़कने लगी; वहाँ से हिलने तक की भी शक्ति उसमें न रही। खड़ी रहना भी उसके लिए कठिन हो पड़ा। उसने अपने सब बल, सब साहस, सब प्रतिज्ञायें "मैं कमला हूँ" इस एक वाक्य के साथ कमलनयन के पैरों पर रख दीं। उसने अपनी लज्जा ढँकने का कोई उपाय अपने हाथ में न रक्खा। अब सब कुछ कमलनयन की दया के ऊपर निर्भर है। कमलनयन ने बड़ी कोमलता से उसका हाथ अपने हाथ में लेकर कहा—"मैं जानता हूँ, तुम मेरी कमला हो। आओ, मेरे घर के भीतर आओ।"

कमलनयन ने उसे उपासनाघर के भीतर ले जाकर उसके गले में उसीके हाथ की गूँथी हुई फूल की माला पहिना कर कहा—"आओ, हम तुम उस परमात्मा को प्रणाम करें।"

दोनों एक साथ बैठ कर जब परमात्मा के प्रति मस्तक झुकाकर मन ही मन उसका ध्यान करने लगे तब खिड़की की राह से प्रातःकाल की मीठी धूप उन दोनों के माथे पर आ पड़ी।

ईश्वर की वन्दना करके जब कमला उठी तब फिर एक-बार उसने कमलनयन के पैर छू कर प्रणाम किया। लज्जा की दुःसह यन्त्रणा अब उसके मन में नहीं है। उसके मुँह पर न विषाद का आभास है, न हर्ष का उल्लास है। प्रातःकालिक प्रकाश के साथ साथ उसके चेहरे से केवल निर्मल शान्ति की उज्ज्वलता प्रकाशित हो रही है। एक गम्भीर भक्ति से उसका हृदय परिपूर्ण हो उठा। देखते ही देखते उसकी आँखों में जल भर आया। गालों पर से हो कर आँसू की धार बहने लगी। उसके हृदय रूपी आकाश में जो बहुत दिनों से दुःख की घटा छाई थी, वह आज नेत्र की राह से आनन्दाश्रु होकर बरस गई। अब उसका हृदय निर्मल होगया। कमलनयन उससे और कुछ न कह केवल अपने दहने हाथ से उसके मुँह पर लटकते हुए भीगे बालों को हटाकर घर से चले गये।

कमला की प्रेमपूजा अब भी समाप्त न हुई। वह अपने भक्ति-परिपूर्ण हृदय से कुछ और पूजा करना चाहती थी। इसीसे उसने कमलनयन के शयनगृह में जाकर अपने गले की माला से आलमारी वाली उस खड़ाऊँ को अलंकृत किया और उसे अपने मस्तक से लगाकर फिर बड़े यत्न से अलमारी में रख दिया।

इसके बाद वह बड़े उत्साह से घर का काम करने लगी। आज वह घरके सभी कामों को देव-सेवा की भाँति देखने

लगी । उसको घरके कामों में कठोर परिश्रम करते देख कर कल्याणी ने कहा—"बेटी, तुम क्या कर रही हो ? क्या तुम एकही दिन में सारे घर आँगन को अकेली झाड़-बुहार लीप पोत कर नया कर दोगी ?"

तीसरे पहर दिन को घरके कामों से छुट्टी पाकर कमला आज सिलाई न करके घर के भीतर एक चौकी पर स्थिरभाव से बैठ रही । इसी समय कमलनयन ने हाथ में एक टोकरी स्थल-कमल लिये उस घर में आकर कहा—"कमला ! इन फूलों को पानी से भिगाकर ताज़ा कर रक्खो । आज सन्ध्या के अनन्तर हम तुम दोनों माँ को प्रणाम करने जायँगे ।"

कमला ने सिर नीचा करके कहा—"आप ने मेरा सब वृत्तान्त तो सुना ही नहीं ।"

कमलनयन—"तुमको कुछ कहना न होगा । मैं सब जानता हूँ ।"

कमला ने दहने हाथ से मुँह ढँक कर कहा—"क्या माँ—कहकर रुक गई । शेष बात उसके मुँह से न निकली ।"

कमलनयन ने मुँह पर से उसका हाथ हटा अपने हाथ में लेकर कहा—"माँ, जन्म ही से हम सबों के अनेक अपराध क्षमा करती आती हैं । जो अपराध नहीं, उसे वे अवश्य क्षमा करेंगी ?"

कमला ने कहा—"आप की बात सच्ची हो ।"

कमलनयन—"ईश्वर की विचित्र लीला है । वह कब किस अभिप्राय से क्या करता है, यह कौन जान सकता है ? यही

देखो, तुम्हारे हमारे जीवन की घटना क्या कम आश्चर्य जनक है ?"

कमला ने इसका उत्तर प्रेमाश्रु भरी आँखों से दिया। कमल-नयन उसका हाथ चूमकर चुपचाप घर से बाहर हो गये।

साँझ होने पर कमला और कमलनयन ने फूलों से माता के पैर पूज कर प्रणाम किया। माता से आशीर्वाद पा दोनों कृत-कृत्य हुए।

समाप्त